Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धम्मं सरणं पवज्जामि

भाग - ३

प्रवचनकार : पू. आ. श्री विजयभद्रगुप्तसूरीश्वरजी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धम्मं सरणं पवज्जामि

भाग : ३

आचार्य श्री हरिभद्रसूरि-विरचित साधक जीवन के प्रारंभ से पराकाष्टा तक के अनन्य सांगोपांग मार्गदर्शन को धराने वाले 'धर्मबिन्दु' ग्रंथ के प्रथम अध्याय पर आधारित रोचक-बोधक और सरल प्रवचनमाला के प्रवचन.

प्रवचनकार

आचार्य श्री विजयभद्रगुप्तसूरिजी महाराज

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुनः संपादन

ज्ञानतीर्थ-कोबा

तृतीय आवृत्ति

फागण वद-८, वि.सं.२०६६, ८-मार्च-२०१०
वर्षीतप प्रारंभ दिन

मूल्य

पक्की जिल्द : रू. ६००-०० कच्ची जिल्द : रू. २७५-००

आर्थिक सौजन्य

शेठ श्री निरंजन नरोत्तमभाई के स्मरणार्थ
ह. शेठ श्री नरोत्तमभाई लालभाई परिवार

प्रकाशक

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र
आचार्यश्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा, जि. गांधीनगर - ३८२००७
फोन नं. (०७९) २३२७६२०४, २३२७६२५२
email : **gyanmandir@kobatirth.org**
website : **www.kobatirth.org**

मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टर्स, अमदावाद - ९८२५५९८८५५

टाईटल डिजाइन : आर्य ग्राफीक्स - ९९२५८०१९१०

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पूज्य आचार्य भगवंत श्री विजयभद्रगुप्तसूरीश्वरजी

श्रावण शुक्ला १२, वि.सं. १९८९ के दिन पुदगाम महेसाणा (गुजरात) में मणीभाई एवं हीराबहन के कुलदीपक के रूप में जन्मे मूलचन्दभाई, जुही की कली की भांति खिलती-खुलती जवानी में १८ बरस की उम्र में वि.सं. २००७, महावद ५ के दिन राणपुर (सौराष्ट्र) में आचार्य श्रीमद् विजयप्रेमसूरीश्वरजी महाराजा के करमकमलों द्वारा दीक्षित होकर पू. भुवनभानुसूरीश्वरजी के शिष्य बने. मुनि श्री भद्रगुप्तविजयजी की दीक्षाजीवन के प्रारंभ काल से ही अध्ययन-अध्यापन की सुदीर्घ यात्रा प्रारंभ हो चुकी थी. ४५ आगमों के सटीक अध्ययनोपरांत दार्शनिक, भारतीय एवं पाश्चात्य तत्वज्ञान, काव्य-साहित्य वगैरह के 'मिलस्टोन' पार करती हुई वह यात्रा सर्जनात्मक क्षितिज की तरफ मुड़ गई. 'महापंथनो यात्री' से २० साल की उम्र में शुरु हुई लेखनयात्रा अंत समय तक अथक एवं अनवरत चली. तरह-तरह का मौलिक साहित्य, तत्वज्ञान, विवेचना, दीर्घ कथाएँ, लघु कथाएँ, काव्यगीत, पत्रों के जरिये स्वच्छ व स्वस्थ मार्गदर्शन परक साहित्य सर्जन द्वारा उनका जीवन सफर दिन-ब-दिन भरापूरा बना रहता था. प्रेमभरा हँसमुख स्वभाव, प्रसन्न व मृदु आंतर-बाह्य व्यक्तित्व एवं बहुजन-हिताय बहुजन-सुखाय प्रवृत्तियाँ उनके जीवन के महत्त्वपूर्ण अंगरूप थी. संघ-शासन विशेष करके युवा पीढ़ी, तरुण पीढ़ी एवं शिशु-संसार के जीवन निर्माण की प्रकिया में उन्हें रूचि थी... और इसी से उन्हें संतुष्टि मिलती थी. प्रवचन, वार्तालाप, संस्कार शिबिर, जाप-ध्यान, अनुष्ठान एवं परमात्म भक्ति के विशिष्ट आयोजनों के माध्यम से उनका सहिष्णु व्यक्तित्व भी उतना ही उन्नत एवं उज्ज्वल बना रहा. पूज्यश्री जानने योग्य व्यक्तित्व व महसूस करने योग्य अस्तित्व से सराबोर थे. कोल्हापुर में ता. ४-५-१९८७ के दिन गुरुदेव ने उन्हें आचार्य पद से विभूषित किया. जीवन के अंत समय में लम्बे अरसे तक वे अनेक व्याधियों का सामना करते हुए और ऐसे में भी सतत साहित्य सर्जन करते हुए दिनांक १९-११-१९९९ को श्यामल, अहमदाबाद में कालधर्म को प्राप्त हुए.

For Private And Personal Use Only

प्रकाशकीय

यदि आप अपना नैतिक और धार्मिक उत्थान करना चाहते हैं, यदि व्यवहार लोकप्रिय करना चाहते हैं, तो यह पुस्तक आपको सुन्दर और सटीक मार्गदर्शन करेगी. वर्तमान कालीन समस्याओंको सुलझाने के लिए यह ग्रंथ कल्याणमित्र बन सकता है.

पूज्य आचार्य श्री विजयभद्रगुप्तसूरिजी महाराज (श्री प्रियदर्शन) द्वारा लिखित और विश्वकल्याण प्रकाशन, महेसाणा से प्रकाशित साहित्य, जैन समाज में ही नहीं अपितु जैनेतर समाज में भी बड़ी उत्सुकता और मनोयोग से पढ़ा जाने वाला लोकप्रिय साहित्य है.

पूज्यश्री ने १९ नवम्बर, १९९९ के दिन अहमदाबाद में कालधर्म प्राप्त किया. इसके बाद विश्वकल्याण प्रकाशन ट्रस्ट को विसर्जित कर उनके प्रकाशनों का पुनः प्रकाशन बन्द करने के निर्णय की बात सुनकर हमारे ट्रस्टियों की भावना हुई कि पूज्य आचार्य श्री का उत्कृष्ट साहित्य जनसमुदाय को हमेशा प्राप्त होता रहे, इसके लिये कुछ करना चाहिए. **पूज्य राष्ट्रसंत आचार्य श्री पद्मसागरसूरिजी महाराज** को विश्वकल्याण प्रकाशन ट्रस्टमंडल के सदस्यों के निर्णय से अवगत कराया गया. दोनों पूज्य आचार्यश्रीयों की घनिष्ठ मित्रता थी. अन्तिम दिनों में दिवंगत आचार्यश्री ने राष्ट्रसंत आचार्यश्री से मिलने की हार्दिक इच्छा भी व्यक्त की थी. पूज्य आचार्यश्री ने इस कार्य हेतु व्यक्ति, व्यक्तित्त्व और कृतित्त्व के आधार पर सहर्ष अपनी सहमती प्रदान की. उनका आशीर्वाद प्राप्त कर कोबातीर्थ के ट्रस्टियों ने इस कार्य को आगे चालू रखने हेतु विश्वकल्याण प्रकाशन ट्रस्ट के सामने प्रस्ताव रखा.

विश्वकल्याण प्रकाशन ट्रस्ट के ट्रस्टियों ने भी कोबातीर्थ के ट्रस्टियों की दिवंगत आचार्यश्री प्रियदर्शन के साहित्य के प्रचार-प्रसार की उत्कृष्ट भावना को ध्यान में लेकर **श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबातीर्थ** को अपने ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित साहित्य के पुनः प्रकाशन का सर्वाधिकार सहर्ष सौंप दिया.

इसके बाद **श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा** ने संस्था द्वारा संचालित **श्रुतसरिता** (जैन बुक स्टॉल) के माध्यम से श्री प्रियदर्शनजी के

लोकप्रिय साहित्य के वितरण का कार्य समाज के हित में प्रारम्भ कर दिया.

श्री प्रियदर्शन के अनुपलब्ध साहित्य के पुनः प्रकाशन करने की शृंखला में **धम्मं सरणं पवज्जामि** ग्रंथ के चारों भागों को प्रकाशित कर आपके कर कमलों में प्रस्तुत किया जा रहा है.

शेठ श्री संवेगभाई लालभाई के सौजन्य से इस प्रकाशन के लिये **श्री निरंजन नरोत्तमभाई के स्मरणार्थ, हस्ते शेठ श्री नरोत्तमभाई लालभाई परिवार** की ओर से उदारता पूर्वक आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है, इसलिये हम **शेठ श्री नरोत्तमभाई लालभाई परिवार** के ऋणी हैं तथा उनका हार्दिक आभार मानते हैं. आशा है कि भविष्य में भी उनकी ओर से सदैव उदारता पूर्ण सहयोग प्राप्त होता रहेगा.

इस आवृत्ति का प्रूफरिडिंग करने वाले **श्री हेमंतकुमार सिंघ, श्री रामकुमार गुप्तजी** तथा अंतिम प्रूफ करने तथा अन्य अनेक तरह से सहयोगी बनने हेतु **पंडितवर्य श्री मनोजभाई जैन** का हम हृदय से आभार मानते हैं. संस्था के कम्प्यूटर विभाग में कार्यरत **श्री केतनभाई शाह, श्री संजयभाई गुर्जर व श्री बालसंग ठाकोर** के हम हृदय से आभारी हैं, जिन्होंने इस पुस्तक का सुंदर कम्पोजिंग कर छपाई हेतु हर तरह से सहयोग दिया.

आपसे हमारा विनम्र अनुरोध है कि आप अपने मित्रों व स्वजनों में इस प्रेरणादायक सत्साहित्य को वितरित करें. श्रुतज्ञान के प्रचार-प्रसार में आपका लघु योगदान भी आपके लिये लाभदायक सिद्ध होगा.

पुनः प्रकाशन के समय ग्रंथकारश्री के आशय व जिनाज्ञा के विरुद्ध कोई बात रह गयी हो तो मिच्छामि दुक्कड़म्. विद्वान पाठकों से निवेदन है कि वे इस ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करें.

अन्त में नये आवरण तथा साज-सज्जा के साथ प्रस्तुत ग्रंथ आपकी जीवनयात्रा का मार्ग प्रशस्त करने में निमित्त बने और विषमताओं में भी समरसता का लाभ कराये ऐसी शुभकामनाओं के साथ...

ट्रस्टीगण

श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, कोबा

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धम्मं सरणं पवज्जामि

३

प्रवचनकार

आचार्य श्री विजयभद्रगुप्तसूरिजी महाराज

For Private And Personal Use Only

धर्मबिंदु-सूत्राणि

- उपप्लुतस्थानत्याग इति ।।१५।।
- स्वयोग्यस्याश्रयणम् ।।१६।।
- प्रधानसाधुपरिग्रहः ।।१७।।
- स्थाने गृहकरणम् ।।१८।।
- अतिप्रकटातिगुप्तस्थानमनुचितप्रातिर्वेश्यं च ।।१९।।
- लक्षणोपेतगृहवासः ।।२०।।
- निमित्त परीक्षा ।।२१।।
- अनेकनिर्गमादिवर्जनमिति ।।२२।।
- विभवाद्यनुरूपो वेषो विरुद्ध त्यागेनेति ।।२३।।
- आयोचितो व्यय इति ।।२४।।
- प्रसिद्धदेशाचारपालनम् ।।२५।।
- गर्हितेषु गाढमप्रवृत्तिरिति ।।२६।।
- सर्वेष्ववर्णवादत्यागो, विशेषतो राजादिषु ।।२७।।
- असदाचारैरसंसर्गः ।।२८।।
- संसर्गः सदाचारैः ।।२९।।
- तथा-माता-पितृपूजा ।।३०।।
- आमुष्मिकयोगकारणं तदनुज्ञया प्रवृत्तिः प्रधानाभिनवोपनयनं तद्भोगे भोगोऽन्यत्र तदनुचिताद् ।।३१।।
- अनुद्वेजनीया प्रवृत्तिरिति ।।३२।।
- भर्तव्यभरणम् ।।३३।।
- तस्य यथोचितं विनियोगः ।।३४।।
- तत्प्रयोजनेषु बद्धलक्षता ।।३५।।
- अपायपरिरक्षोद्योगः ।।३६।।
- गर्ह्येज्ञान-स्वगौरवरक्षे ।।३७।।
- देवातिथिदीनप्रतिपत्तिः ।।३८।।
- तदौचित्याबाधनमुत्तमनिदर्शनेन ।।३९।।
- सात्म्यतः कालभोजनम् ।।४०।।
- लौल्यत्यागः ।।४१।।
- अजीर्णे अभोजनम् ।।४२।।

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***अपने-अपने विषयों में इन्द्रियों की तीव्र आसक्ति नहीं होना उसका नाम है : इन्द्रियविजय। इन्द्रियविजेता हुए बिना मोक्षमार्ग की यात्रा नहीं हो सकती है।***
- ***पद, पैसा और प्रतिष्ठा की तीव्र लालसा से मुक्त रहो। किसी भी बात का दुराग्रह रखना उचित नहीं है।***
- ***मदोन्मत्त आदमी धर्म-अर्थ और कामपुरुषार्थ का संतुलन नहीं रख सकता है। इन्द्रियविजेता भी नहीं हो सकता है।***
- ***इस भव में जिस बात का या जिस चीज का अभिमान करोगे वह चीज या वह बात तुम्हें अगले भव में मिलेगी ही नहीं...यदि मिल भी गई तो निम्नस्तर की मिलेगी।***
- ***आठों प्रकार के अभिमान का त्याग करना चाहिए। अभिमान एक तरह की आग है, जिसमें सब कुछ जलकर स्वाहा हो जाता है।***

प्रवचन : ४९

महान् श्रुतधर, परम कृपानिधि, आचार्य श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ के प्रारम्भ में गृहस्थ जीवन का सामान्य धर्म बता रहे हैं। पाँचवाँ सामान्य धर्म बता रहे हैं इन्द्रियविजय का।

आसक्ति में तीव्रता मत लाओ :

अपने-अपने विषयों में इन्द्रियों की तीव्र आसक्ति नहीं होना, यह है इन्द्रियविजय! गृहस्थ जीवन का पाँचवाँ धर्म! इन्द्रियाँ अपने-अपने विषय ग्रहण तो करेंगी ही, विषयों के प्रति राग भी होगा, परन्तु तीव्र आसक्ति नहीं होनी चाहिए। तीव्र आसक्ति का अभाव तभी संभव हो सकता है, जब आन्तरिक शत्रुओं का त्याग किया हो। आन्तरिक शत्रु पर थोड़ी भी विजय पाई हो। जो मनुष्य आन्तरिक शत्रु पर आंशिक विजय भी पा लेता है वह मनुष्य ही इन्द्रियों पर विजय पा सकता है। विषयों की तीव्र आसक्ति से मुक्त हो सकता है। जो मनुष्य आन्तरिक शत्रु पर विजय नहीं पा सकता है, अथवा आन्तरिक शत्रु पर विजय पाना नहीं चाहता है वह मनुष्य कभी भी इन्द्रियविजेता नहीं बन सकता है। इन्द्रियविजेता हुए बिना, मोक्षमार्ग की यात्रा नहीं हो सकती है। इन्द्रियविजेता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हुए बिना सही धर्मपुरुषार्थ नहीं हो सकता है। धर्मपुरुषार्थ के बिना सुख नहीं मिल सकता है, शान्ति नहीं मिल सकती है।

भीतरी शत्रुओं को पहचानो और त्यागो :

इसलिए कहता हूँ कि आन्तरिक शत्रुओं को जानो और त्यागो। शीघ्रातिशीघ्र जान लो आन्तरिक शत्रुओं को। अन्यथा धोखा होगा आपके साथ। शत्रु को मित्र मानकर, उस पर विश्वास करनेवालों की क्या दशा होती है, वह तो आप जानते हो न? तीव्र लोभी मनुष्य, शत्रु और मित्र की सही परख नहीं कर सकता है। मित्र को शत्रु और शत्रु को मित्र मानने की गलती कर ही देता है। 'लोभ' ही शत्रु है। भीतर का शत्रु है। यह शत्रु जीवात्मा को भ्रमित करने का ही काम करता है। लोभ के अनेक नाम हैं - तृष्णा, मूर्च्छा, आसक्ति, प्रलोभन, संग्रहखोरी.....इत्यादि।

अति लोभ नहीं होना चाहिए। अतिलोभी मनुष्य कभी भी इन्द्रियों को संयम में नहीं रख सकता है। इन्द्रियों का असंयम ही तो सभी पापों का मूल है। इन्द्रियों का असंयम ही दुर्गति का मूलभूत कारण है।

यदि रावण परस्त्री का लोभ नहीं करता तो उसका सर्वनाश नहीं होता न? यदि हिटलर रशिया को जीतने का लोभ नहीं करता तो उसका सर्वनाश नहीं होता न? खैर, जाने दो उन तीव्र महत्त्वाकांक्षी रावण और हिटलर को! अपनी बात करें अपन। आप लोगों को तीन बातों में तीव्र लोभ नहीं करना चाहिए। पद, पैसा और प्रतिष्ठा-इन तीन बातों से सावधान रहें।

पद-प्रलोभन की ऊँची दीवारें :

पहले के जमाने में पद का लोभ राजपरिवारों में ही देखने को मिलता था। राजसभाओं में पद-लालसा देखी जाती थी। आज, स्वतंत्र भारत में पद-लालसा गाँव-गाँव में और घर-घर में प्रविष्ट हो गई है। राजकीय क्षेत्र में तो पद-लालसा आप जानते ही हो! जनसेवा के नाम पर पहले तो ग्राम पंचायत में पदप्राप्ति का प्रलोभन होता है। बड़े शहर में नगरपालिका में पदप्राप्ति का प्रलोभन जगता है। यदि वहाँ कोई पद की प्राप्ति हो गई तो बाद में विधानसभा में जाने की इच्छा जाग्रत होती है। विधानसभा में पहुँचने के बाद 'मिनिस्टर' बनने की इच्छा जाग्रत होती है! 'मिनिस्टर' बनने के बाद 'चीफ मिनिस्टर' बनने की महेच्छा पैदा होती है। लोकसभा में जाने की, केन्द्रीय मंत्रीमंडल में प्रवेश पाने की और राष्ट्रपति बनने की महेच्छा होती है। जनसेवा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और देशसेवा तो मात्र कहने की बातें होती हैं। वास्तव में देखा जाये तो राजकीय क्षेत्र में गये हुए लोग अपने परिवार की ही सेवा कर लेते हैं। अपनी-अपनी हैसियत के अनुसार ५-२५ लाख बना लेते हैं और एक दिन, जब पाप का परदा उठता है तब सर्वनाश के गहरे खड्डे में डूब मरते हैं। पदप्राप्ति की स्पर्धा में कितनी हत्याएँ होती हैं, क्या आप नहीं जानते? कितने दूषण फैलते हैं, क्या आप नहीं जानते?

चुनाव बनाम लूट मची है लूट!

एक गाँव में जब हम लोग पहुँचे तो गाँव में सन्नाटा था। मैंने पूछा एक भाई से, 'क्यों गाँव मौन होकर बैठा है?' उसने कहा : 'कल चुनाव है, वोटिंग होनेवाला है, इसलिए आज प्रचारसभाएँ बंद हैं और माइक से प्रचार बंद है।' मैंने कहा : 'लेकिन रास्ते पर लोगों की चहल-पहल भी नहीं दिखती, क्या बात है?' तब उस युवक के मुख पर मुस्कराहट फैली और धीरे से उसने कहा : कुछ लोग तो गये हैं धोती और साड़ी की प्रभावना लेने! एक उम्मीदवार लोगों को धोती और साड़ी दे रहा है और दूसरा उम्मीदवार रात होने पर शराब की बोतलें वितरित करनेवाला है।

लोग भी ऐसे प्रलोभनों में आकर, अयोग्य व्यक्तिओं को अपने मत दे देते हैं! लोभी मनुष्य विवेक तो कर नहीं सकता कि कौन व्यक्ति सुयोग्य है और कौन अयोग्य है। राजनीति में प्रलोभन एक बहुत बड़ा मित्र माना गया है। प्रलोभन लेनेवाला खुश होता है और प्रलोभन देनेवाला भी अपना स्वार्थ सिद्ध होने पर खुश होता है। परन्तु एक दिन दोनों को रोना पड़ता है।

राजनीति में जाने से पहले योग्यता जाँचो :

'किसी भी प्रकार हमें पद प्राप्त करना है।' ऐसी तीव्र इच्छावाले लोग अच्छे-बुरे सभी उपायों का इस्तेमाल करते हैं। ऐसे लोग हिंसा भी करते-करवाते हैं, असत्य बोलते हैं, चोरी भी करते हैं....अपने प्रतिस्पर्धी का अपहरण भी करवाते हैं। दुराचार-व्यभिचार का सेवन करते हैं, बुरे कार्यों में सहयोग देते हैं। इसलिए कहता हूँ कि पद की तीव्र इच्छा नहीं करें।

सभा में से : तो क्या हम लोगों को राजकीय क्षेत्र में नहीं जाना चाहिए?

महाराजश्री : यदि राजकीय क्षेत्र में जाना है तो अपनी योग्यता का पहले विचार करो। अपने मनोबल को वैसा बनाओ कि किसी भी प्रलोभन के सामने आप अड़िग रह सको। अवसर आने पर पद-सत्ता को लात मार सको। आप

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में किसी पद की योग्यता है और जनता आपको उस पद पर बिठाना चाहती है, तो आप बैठ सकते हो उस पद पर, परन्तु उससे चिपक नहीं जाने का। अच्छे लोग, दृढ़ मनोबल के साथ यदि राजनीति में आयें तो देश का भला हो सकता है, परन्तु निर्लोभी और निःस्पृही हो तब! पदप्राप्ति की तीव्र इच्छा नहीं होनी चाहिए।

दूसरी बात है पैसे की। धन-संपत्ति की तीव्र इच्छा नहीं होनी चाहिए! धन का लोभ, धनसंग्रह की वृत्ति बहुत खराब है। धनचिन्ता मनुष्य के मन को मलिन, चंचल और तामसी बना देती है। धनार्जन और धनसंग्रह की चिन्ता जिसको लगी, वह मनुष्य आत्मचिन्ता नहीं कर सकेगा। इस मानवजीवन में मुख्यतया जो आत्मचिन्ता करने की है, वह आत्मचिन्ता धनलोभी मनुष्य नहीं कर सकता। वह तो दिन-रात धनप्राप्ति के भिन्न-भिन्न उपाय ही सोचता रहेगा। प्राप्त किये हुए धन को सुरक्षित रखने के उपाय ही खोजता रहेगा। उन उपायों में वह फिर पुण्य-पाप का भेद नहीं करेगा। मात्र अर्थचिन्ता में डूबा रहेगा....इससे परिवार का असंतोष बढ़ता जायेगा और धर्मपुरुषार्थ से वंचित रहेगा। आज आप लोग जिनको 'उद्योगपति' कहते हैं, उनसे पूछो कि परिवार को उनसे संतोष है? उनसे पूछो कि आधा घंटा भी परमात्मा की भक्ति में जाता है? दिन में एक-दो भी सत्कार्य होते हैं क्या? धन-संपत्ति के तीव्र लोभ में मनुष्य धर्मपुरुषार्थ को जीवन में योग्य स्थान नहीं दे सकता है। इसलिए ज्ञानी पुरूष कहते हैं कि धन का तीव्र लोभ मत करो। गृहस्थ जीवन में धनार्जन तो करना ही पड़ेगा। जीवनयापन करने के लिए धनप्राप्ति करनी पड़ेगी, परन्तु धन की तीव्र स्पृहा नहीं होनी चाहिए। धनप्राप्ति का समुचित पुरुषार्थ करने का है परन्तु धनप्राप्ति के लिए पागल-सा नहीं बनने का है। धनप्राप्ति के लिए गलत उपाय नहीं करने चाहिए।

प्रतिष्ठा-मानसम्मान की ज्यादा आसक्ति अच्छी नहीं :

तीसरी बात है प्रतिष्ठा की। प्रतिष्ठा यानी इज्जत! इज्जत का तीव्र लोभ नहीं होना चाहिए। सामाजिक और धार्मिक प्रतिष्ठा बनाये रखनी चाहिए, परन्तु उसका तीव्र लोभ नहीं होना चाहिए। प्रतिष्ठा का तीव्र लोभ मनुष्य को दंभी बना देता है। प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए मनुष्य भ्रष्टाचारी बनता है, कर्जदार बनता है और एक दिन आत्महत्या भी कर लेता है।

बंबई के एक सद्गृहस्थ के पास, जो कि नौकरी करता था, दो-तीन लाख रूपये आ गये! सट्टा किया था, भाग्य खुल गया और लखपति बन गया।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उदार था वह गृहस्थ। एक लाख रूपये का दान दिया, इससे उसकी प्रतिष्ठा बन गई। कुछ लोग तो उसके पास अपने लाखों रूपये की जमानत रख गये। यह महानुभाव भी लाखों रूपयों का दान देता गया! सट्टे में हारता गया। कर्जदार बनता गया...एक दिन उसको लगा कि मेरी प्रतिष्ठा नहीं टिकेगी, तो उसने आत्महत्या कर डाली। प्रतिष्ठा का प्रलोभन, तीव्र व्यामोह नहीं होना चाहिए। अच्छे कार्य करने से प्रतिष्ठा बनती है, समाज में इज्जत मिलती है, परन्तु उस प्रतिष्ठा के साथ बंध जाना नहीं चाहिए। प्रतिष्ठा चली जाये तो दीन-हीन बनना नहीं चाहिए। प्रतिष्ठा का लोभ भी त्याज्य है।

मद : दोस्त के रूप में दुश्मन :

जिस प्रकार काम-क्रोध और लोभ आन्तरिक शत्रु हैं, वैसे 'मद' भी आन्तरिक शत्रु है। मित्र के वेश में शत्रु है। अज्ञानी मनुष्य परख नहीं सकता है और फँस जाता है। इन आन्तरिक शत्रुओं से मात्र आध्यात्मिक अहित होता है, ऐसा मत मानना; भौतिक, आर्थिक और शारीरिक अहित भी होता है। परन्तु जब तक मनुष्य आन्तरिक खोज नहीं करता है तब तक यह सत्य को नहीं समझ पाता है। आन्तरिक शत्रुओं से ही वास्तव में नुकसान हुआ हो, परन्तु मान लें कि 'यह तो मेरे पूर्वजन्म के पापों के उदय से दुःख आया....' अथवा तो ईश्वरवादी कह दें कि 'यह तो भगवान की इच्छा से दुःख आया...' तो कभी भी आन्तरिक शत्रुओं की परख नहीं होगी और उन आन्तरिक शत्रुओं को मिटाने का पुरूषार्थ नहीं होगा।

अभिमान किया और आर्थिक नुकसान हुआ, यदि वहाँ यह नहीं सोचें कि 'मेरे अभिमान से मुझे यह आर्थिक नुकसान हुआ है, तो वह अभिमान से मुक्ति नहीं पा सकेगा। मेरे अभिमान से मुझे केवलज्ञान और वीतरागता नहीं प्राप्त हो रहे हैं', यह बात बाहुबली को एक वर्ष तक खयाल में नहीं आयी....एक वर्ष तक, श्रमण बनकर, एक जगह कार्योत्सर्ग-ध्यान में खड़े रहे! न कुछ खाया, न कुछ पिया उन्होंने! न किसी से कुछ बोले, न कोई खराब चिन्तन किया। फिर भी उनको केवलज्ञान की प्राप्ति नहीं हुई।

अभिमान बाधक है ज्ञान की प्राप्ति में :

आप लोग जानते हो न कि, बाहुबली भगवान ऋषभदेव के पुत्र थे। सबसे बड़े पुत्र थे भरत, और उनसे छोटे थे बाहुबली। बाहुबली से छोटे ९८ पुत्र थे। भगवान ऋषभदेव ने जब संसार-त्याग किया था तब अपने १०० पुत्रों को

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वतंत्र राज्य बाँट दिये थे। बाद में जब भरत ने चक्रवर्ती राजा बनने के लिए अपने छोटे ९९ भाइयों को अपने आज्ञांकित राजा बनने की आज्ञा फरमाई, तब बाहुबली के अलावा ९८ भाई तो भगवान ऋषभदेव की राय लेने गये और वहीं पर संसार का त्याग कर भगवान के चरणों में जीवन समर्पित कर दिया! परन्तु बाहुबली भगवान की राय लेने नहीं गये। भरत के दूत को धुत्कार दिया और फिर तो दो भाइयों के बीच घमासान युद्ध हुआ। सभी प्रकार के युद्ध में जब भरत हारते गये तब उन्होंने अपने अंतिम शस्त्र 'चक्ररत्न' को बाहुबली पर फेंका। परन्तु 'चक्ररत्न' समान गोत्रवालों की हत्या नहीं करता है, इसलिए चक्ररत्न बाहुबली को प्रदक्षिणा देकर वापस भरत के हाथ में आ गया। वास्तव में, भरत को बाहुबली पर चक्ररत्न नहीं छोड़ना था, वह तो अन्याय था, युद्ध के नियमों से विपरीत बात थी। इससे बाहुबली अत्यन्त क्रुद्ध हुए और उन्होंने भरत पर मुष्ठिप्रहार करने का सोचा। वे भरत की तरफ दौड़े, परन्तु अचानक उनके मन में विचार आया कि 'इस मुष्ठिप्रहार से भरत जमीन में धँस जायेगा, मेरे हाथ से भ्रातृहत्या हो जायेगी, कितना बड़ा पाप....नहीं, नहीं! राज्य के लिए मुझे ऐसा पाप नहीं करना चाहिए! उनका मन विरक्त हो गया। वे रास्ते में ही रूक गये। प्रहार करने के लिए जो मुष्ठि उठायी थी, उसी मुष्ठि से उन्होंने अपने मस्तक के बालों का लुंचन कर दिया....वे 'श्रमण' बन गये। सर्वत्यागी श्रमण बन गये। परन्तु वहाँ से सीधे भगवान ऋषभदेव के पास नहीं गये।

'अहं' को मारना मुश्किल है :

बाहुबली के मन में विचार आया : 'यदि मैं अभी भगवान के पास जाऊँगा तो मुझे मेरे से छोटे ९८ भाइयों को वन्दना करनी पड़ेगी। मैं बड़ा हूँ....और छोटे भाइयों को कैसे वंदना करूँ? हालाँकि वे मेरे ९८ भाई, मेरे से पूर्व प्रव्रजित हैं, उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई है, इसलिए यदि मैं वहाँ जाऊँगा तो मुझे वंदना करनी पड़ेगी। परन्तु केवलज्ञानी एक-दूसरे को वन्दना नहीं करते हैं! अतः मैं केवलज्ञानी बन कर ही जाऊँगा! ताकि मुझे वहाँ पर लघुभ्राताओं को वन्दना नहीं करनी पड़ेगी।

यही तो अभिमान था! 'मैं बड़ा हूँ....मुझसे उम्र में छोटे को वन्दना कैसे करूँ?' यह है अभिमान की अभिव्यक्ति। अपने उत्कर्ष का विचार और दूसरों के अपकर्ष का विचार, अभिमान है। बाहुबली राज्य छोड़ सके, महल छोड़ सके, संपत्ति-वैभव का त्याग कर सके, भरत के अपराध को माफ कर सके,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपने सारे सांसारिक सुखों को ठुकरा सके, परन्तु अभिमान का त्याग नहीं कर सके। आन्तरिक शत्रु को नहीं पहचान सके।

जब उनकी दो बहनें - साध्वीजी ब्राह्मी और सुन्दरी - बाहुबली के पास आईं और कहा :

'वीरा मोरा! गज थकी उतरो
गज चढ़े केवल न होय रे...'

ब्राह्मी और सुन्दरी ने भगवान ऋषभदेव से जानकारी प्राप्त की थी कि बाहुबली कहाँ है और उनको केवलज्ञान क्यों नहीं हो रहा है। उन्होंने आकर बाहुबली को सुनाया : 'हमारे भैया! अब तो हाथी पर से नीचे उतरो....हाथी पर बैठे-बैठे केवलज्ञान नहीं होगा।'

बाहुबली, ब्राह्मी-सुन्दरी की बात सुनकर सोचने लगे कि 'मैं तो जमीन पर खड़ा हूँ और ये मेरी बहनें कहती हैं कि, हाथी पर से नीचे उतरो....हाथी पर बैठे-बैठे केवलज्ञान नहीं होगा।' सोचते-सोचते उनको खयाल आ गया कि 'ओह! मैं मान-अभिमान के हाथी पर बैठा हूँ। सच बात है मेरी बहनों की....अभिमानी को केवलज्ञान नहीं हो सकता है। मैं अभी भगवान के चरणों में जाता हूँ और मेरे ९८ भाई-श्रमणों को वन्दना करूँगा।' बस, ज्यों ही बाहुबली ने भगवान के पास जाने के लिए कदम उठाया, उसी वक्त उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई। बड़प्पन का अहंकार-अभिमान दूर हुआ कि कैवल्य का दीपक झगमगाने लगा!

अभिमान बहरुपिया है :

अभिमान के अनेक रूप होते हैं। धर्मग्रँथों में वे रूप 'आठ मद' के नाम से प्रसिद्ध हैं। 'प्रशमरति' ग्रन्थ में वे मद इस प्रकार बताये गये हैं :

'जाति-कुल-रूप-बल-लाभ-बुद्धिवाल्लभ्यक-श्रुतमदान्धाः।
क्लीबाः परत्र चेह च हितमप्यर्थं न पश्यन्ति ।।'

जाति का, कुल का, रूप का, बल का, किसी भी चीज की प्राप्ति का, बुद्धि का, ज्ञान का मद मनुष्य को अन्धा बना देता है। मदान्ध मनुष्य अपने इहलौकिक और पारलौकिक हित को देख नहीं सकता है। हितकारी को अहितकारी और अहितकारी को हितकारी देखता है। इससे वह भटक जाता है। जिसको जिस बात का अभिमान होता है, उसको, वह बात जिसमें नहीं

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होती है, उसके प्रति हीन भावना होती है। उच्च जाति का अभिमान, नीच जातिवालों के प्रति तिरस्कार करवाता है। उच्च कुल का अभिमान, नीच कुल में जन्मे हुए के प्रति धिक्कार करवाता है। रूप का अभिमान कुरूप के प्रति तिरस्कार करवाता है। बल का अभिमान निर्बल के प्रति हँसता है। श्रीमन्ताई का अभिमान गरीबी का उपहास करता है। बुद्धि का अभिमान बुद्धिहीनों के प्रति आक्रोश करता है। ज्ञान का गर्व अज्ञानी का तिरस्कार करवाता है।

मान और मद का भेद बराबर समझ लेना। मानी मनुष्य अपना दुराग्रह नहीं छोड़ता है और दूसरों की सुयोग्य बात नहीं सुनता है। मदान्ध मनुष्य अपने बल-कुल-ऐश्वर्य को लेकर अहंकार करता है और दूसरों के प्रति आक्रमक बनता है। मान और मद - दोनों आन्तरिक शत्रु हैं। जब जीवात्मा के स्वभाव के साथ ये मान और मद मिल जाते हैं तब जीवात्मा की दुर्दशा हो जाती है।

क्या हुआ रावण का? :

अभिमानी मनुष्य कभी समझ भी लेता है कि 'मेरा यह आग्रह अच्छा नहीं है, फिर भी उसको छोड़ता नहीं है। अब तक मैंने जो बात पकड़ रखी है, अब उसे कैसे छोड़ दूँ? यदि अब बात को छोड़ दूँगा तो दुनिया में मेरा उपहास होगा।' दूसरे समझदार लोग उसको समझाने का प्रयत्न करेंगे तो भी वह नहीं समझेगा।

रावण को खयाल तो आ ही गया था कि सीता को मेरे प्रति जरा भी स्नेह नहीं है, तो अब सीता से क्या स्नेह करना? उसने मेरा अपमान किया, मुझे धूत्कार दिया, इससे क्या प्रेम करना? परन्तु यदि इस समय, कि जब भीषण युद्ध चल रहा है, मेरा भाई और मेरे पुत्र राम के कैदी बने हुए हैं, तब यदि इस स्थिति में मैं सीता को वापस लौटाऊँगा तो दुनिया में मेरा उपहास होगा। दुनिया कहेगी : 'देखो, रावण ने पराजय से डर कर, सीता को वापस लौटा दिया!' नहीं, मैं सीता को इस समय तो वापस नहीं लौटाऊँगा। कल मैं युद्ध करूँगा, राम और लक्ष्मण को पराजित करके, बाँध कर सीता के पास लाऊँगा और राम से कहूँगा : 'ले जाओ तुम्हारी सीता को।'

आत्मविशुद्धि में अभिमान अवरोधक :

विभीषण और मंत्रीमंड़ल ने रावण को समझाने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी, फिर भी रावण नहीं माना था। अपने दुराग्रह को छोड़ने के लिए वह तैयार नहीं था। इसको अभिमान कहते हैं। ऐसा अभिमानी मनुष्य, कभी वैराग्य हो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जाने से साधु भी बन जाये, तो भी वह आत्मविशुद्धि नहीं कर सकता है। हालाँकि ऐसे दुराग्रही और स्वच्छंदी व्यक्ति को दीक्षा देने का तीर्थंकरों ने निषेध किया है, परन्तु अक्सर ऐसा देखा जाता है कि दीक्षा लेते समय ऐसा व्यक्ति परखा नहीं जाता है। बड़ा सीधा-सरल दिखाई देता है। बाद में अवसर आने पर पता लगता है कि 'यह महानुभाव तो अभिमान की मूर्ति है।' इसलिए, आत्मविकास की प्राथमिक भूमिका में ही आन्तरिक शत्रु पर आंशिक विजय पाना आवश्यक बताया गया है। आन्तरिक शत्रु पर विजय पाये बिना इन्द्रियविजय नहीं पाई जा सकती है। जो मनुष्य इस बात की उपेक्षा कर, आगे-आगे की धर्माराधना करते हैं वे लोग कभी न कभी गिरते हैं, आचार से या विचार से भ्रष्ट हो जाते हैं।

मान और मद आन्तरिक शत्रु हैं, यह बात, आत्मविकास की भावनावाले सभी लोगों को समझनी होगी। बाहुबली का अभिमान तीव्र नहीं था। जब ब्राह्मी और सुन्दरी ने आकर सांकेतिक शब्दों में समझाया, तो बाहुबली समझ गये। 'मेरी बहनों की बात सच्ची है! मैं मान के हाथी पर बैठा हूँ, मैं वीतराग नहीं बन सकता हूँ....।' बात मन में जँच गई और भगवान ऋषभदेव के पास जाने को कदम उठा लिए... कदम उठते ही कर्मबन्धन टूट गये। केवलज्ञान प्रकट हो गया।

'भले ब्राह्मी-सुन्दरी कहें, मैं तो यहाँ से तब तक नहीं चलूँगा जब तक मुझे केवलज्ञान नहीं होगा। मैं अपने से छोटे भाइयों को वंदना नहीं कर सकता...।' यदि यह दुराग्रह बना रहता तो कभी केवलज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता था।

दुराग्रह से दूर रहो :

संसार-व्यवहार में भी किसी बात का दुराग्रह सज्जनों को शोभा नहीं देता है। आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में दुराग्रही-अभिमानी मनुष्य सफलता नहीं पा सकता है। छोटा बच्चा हो या बड़ा बूढ़ा हो, शिक्षित हो या मूर्ख हो, दुराग्रह नहीं चाहिए। जिद्दीपना नहीं चाहिए। किसी हितकारी व्यक्ति की बात मानने की योग्यता बनाये रखनी चाहिए। 'मैं किसी की बात नहीं सुनूँ, और मेरी बात सभी लोग सुनें-'इस प्रकार की मनोवृत्ति बहुत विघातक बनती है। धर्मक्षेत्र में जिसको प्रवेश पाना है, धर्मतत्त्व को पाकर आत्मविशुद्धि करना है, उस व्यक्ति को दुराग्रह छोड़ देने चाहिए। यानी आन्तरिक शत्रु-मान को मिटा देना चाहिए। पहले ही मिटाना चाहिए, अन्यथा बहुत आगे बढ़ने के बाद यह आन्तरिक शत्रु दुःख देता है। पतन की गहरी खाई में पटक देता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अभिमान की तरह मद भी भयानक शत्रु है। मदान्ध मनुष्य मात्र अपनी विशेषता को लेकर अहंकारी बनता है, इतना ही नहीं, वह दूसरों के प्रति आक्रमक भी बनता है। यदि उसका जन्म उच्च जाति में हुआ है तो वह अपनी जाति को लेकर अहंकारी बनेगा और जो नीच जाति में जन्मे होंगे उनके प्रति तिरस्कार करेगा। कभी उन पर हमला भी कर देगा। मारेगा, पीटेगा और गालियाँ भी बकेगा। वैसे, किसी भी बात का मद होगा तो ये दो प्रतिक्रियाएँ आयेंगी ही- अहंकार और तिरस्कार। भगवान उमास्वातीजी ने ठीक ही कहा है :

'जात्यादिमदोन्मत्तः पिशाचवद् भवति दुःखितश्चेह।
जात्यादिहीनतां परभवे च निःसंशयं लभते ।।'

जाति, कुल आदि किसी भी मद से उन्मत्त जीव पिशाच की तरह दुःखी होता है और परलोक में निःशंक वह जाति वगैरह की हीनता प्राप्त करता है।

कहानी एक भूत की :

एक सेठ थे। उन्होंने मंत्रसाधना से एक भूत को सिद्ध किया। भूत, हालाँकि देवयोनि का जीव था, परन्तु देव भी अनेक प्रकार की कक्षा के होते हैं। भूत निम्न देवयोनि का देव था। सेठ पर प्रसन्न तो हुआ और सेठ ने बताये उतने कार्य भी कर दिये। जब कोई कार्य बचा नहीं तब उसने सेठ से कहा : 'मुझे कोई काम बताइए, वरना मैं तुम्हें ही खा जाऊँगा।' उन्मत्त भूत था न? उन्मत्त व्यक्ति दूसरों के साथ कर्कश-कठोर भाषा में ही बात करते होते हैं। वे लोग दूसरों का गौरव कभी नहीं करेंगे। हाँ, कभी उनको किसी की अनिवार्य रूप से आवश्यकता पड़ जाये और नम्रता से बात कर लें, वह बात अलग है। यह भूत देव था। फिर भी उन्मत्त था। उसने सेठ को चेतावनी दे दी : 'कोई काम बताओ, अन्यथा खा जाऊँगा।'

सेठ पहले तो घबराये। परन्तु तुरंत ही स्वस्थ हो गये। सामने भूत था। घबराने से बचने का मार्ग नहीं मिलता है। घबराहट से तो बुद्धि भ्रमित हो जाती है। सेठ ने शान्त चित्त से सोचा...एक उपाय मिल गया। वे बड़े प्रसन्न हो गये। उन्होंने भूत के सामने देखा। भूत बोला : 'कोई काम बताते हो?'

सेठ ने कहा : 'हाँ, एक पचास हाथ ऊँचा लकड़ी का खंभा बना कर ले आओ।'

भूत ले आया लकड़ी का खंभा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सेठ ने कहा : 'सामनेवाले मैदान के बीचोंबीच इस खंभे को गाड़ कर खड़ा कर दो।'

भूत ने चंद क्षणों में खंभे को मैदान के बीच में खड़ा कर दिया।

सेठ ने कहा : 'अब, जब तक मैं तुम्हें और कोई काम नहीं बताऊँ तब तक तुम इस खंभे पर चढ़ते रहो और उतरते रहो। यही तुम्हारा काम रहेगा अब से।'

भूत का मुँह देखने लायक हो गया होगा न। सेठ ने बुद्धिपूर्वक कैसा फँसाया उसको। वैसे, इस दुनिया में मद करनेवाले कभी न कभी दुःखी होते रहते हैं। क्या आप नहीं सुनते कि बल का उन्माद लेकर घूमनेवाले कइयों की हत्या हो जाती है? बुद्धि का अभिमान-गर्व करनेवालों ने अवसर आने पर बुद्धि का दिवाला निकाला है? रूप से उन्मत्त बने लोगों के शरीर रोगों से भर गये और ऐसे कुरूप हो गये कि कोई उनके सामने देखना भी पसंद नहीं करें।

दूसरा नियम भी जान लो। आप जिस बात को लेकर मद करोगे, आनेवाले जन्म में वह बात आपको हीन कक्षा की मिलेगी।

१. यदि यहाँ उच्च जाति का आपने मद किया तो आनेवाले जन्म में आपको निम्न कक्षा की जाति में जन्म मिलेगा।
२. यदि यहाँ-इस जन्म में आपने अपने उच्च कुल का मद किया तो आनेवाले जन्म में आपको निम्नस्तर के कुल में जन्म मिलेगा।
३. यदि इस भव में आपने अपने रूप का मद किया तो आनेवाले भव में आप कुरूप ही जन्मेंगे। आपको रूप नहीं मिलेगा।
४. यदि इस वर्तमान भव में आप बल का मद करते हो तो आनेवाले जन्म में आप कमजोर पैदा होंगे। कितनी ही दवाइयाँ खाने पर भी, सशक्त नहीं बन सकोगे।
५. इस जन्म में आपको सुख के साधन सरलता से उपलब्ध हो जाते हैं और इस बात का आपको गर्व है तो आनेवाले जन्म में आपको वे साधन सरलता से प्राप्त नहीं होंगे।
६. यदि इस जन्म में आपने अपनी बुद्धि का गर्व किया तो आनेवाले जन्म में बुद्धिहीनता प्राप्त होगी।
७. इस जन्म में यदि अपने ज्ञान का मद किया तो आनेवाले जन्म में ज्ञानप्राप्ति ही नहीं होगी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

८. इस भव में यदि तपश्चर्या का मद किया तो आनेवाले जन्म में लाख उपाय करने पर भी तपश्चर्या नहीं कर पाओगे।

इस प्रकार दूसरी भी बातों में समझ लेना। इस भव में जिस बात का मद करोगे, दूसरे भवों में वह बात या तो मिलेगी नहीं, अथवा मिलेगी तो हीन कक्षा की मिलेगी।

मदोन्मत्त मनुष्य, धर्म-अर्थ और कामपुरूषार्थ का संतुलन नहीं निभा सकता है। वैसे इन्द्रियविजय को भी प्राप्त नहीं कर सकता है। इसलिए, काम-क्रोध-लोभ-मद-मान और हर्ष-इन छह आन्तरिक शत्रुओं पर, अपनी-अपनी भूमिका के अनुसार विजय प्राप्त करना चाहिए और इन्द्रियविजेता बनना चाहिए। अब एक आन्तरिक शत्रु-'हर्ष' की पहचान कराना बाकी है, कल हर्ष-शत्रु की पहचान करेंगे और इन्द्रियविजय के विषय में कुछ चिन्तन करेंगे।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *पाप करना गुनाह है.... पर पाप करके इतराना, खुश होना बड़ा गुनाह है। पापाचरण की सजा मिलती है...परंतु पापाचरण में खुश होने की सजा तो बड़ी लम्बी और कठिन मिलती है। हर्ष को, खुशी को इस दृष्टिकोण से शत्रु मानना चाहिए।*
- *आत्मविकास में और आत्मविशुद्धि में सहायक हो वैसा ही सुनो, वैसा ही देखो, वैसा ही पढ़ो, वैसा ही आहार ग्रहण करो।*
- *आत्मा को बेहोश बना डाले वैसी सुगंध से दूर रहो...तन-मन को मलिन बनाये वैसी दुर्गन्ध से भी दूर रहो।*
- *इतने मुलायम या इतने कमजोर मत बनो कि धर्मसाधना करने से मन कतराता रहे।*
- *मन को विकृत बनाये, वैसे तमाम स्पर्श करना छोड़ दो!*
- *इन्द्रियों को तनिक भी उत्तेजित करे, वैसी हरकतों से दूर रहो।*

प्रवचन : ५०

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, पूज्य आचार्यदेव श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में, गृहस्थ-जीवन का सामान्य धर्म बता रहे हैं। प्राथमिक धर्म समझा रहे हैं। जिस व्यक्ति के जीवन में यह प्राथमिक धर्म ओतप्रोत हो जाता है, उस व्यक्ति की योग्यता बन जाती है विशेष धर्म के पुरूषार्थ की। विशिष्ट धर्मपुरूषार्थ सफलता प्राप्त करता है और जीवात्मा परमात्मा बन जाता है।

गृहस्थ-जीवन में भी मनुष्य को कुछ अंश में इन्द्रियविजेता बनना होगा, यदि उसे आत्म-कल्याण की साधना करनी है तो। इन्द्रियविजेता बनने के लिए उसको अपने आंतर शत्रुओं की पहचान कर, शत्रुओं को अपनी आत्मभूमि से खदेड़ देना होगा। आन्तरिक शत्रुओं पर विजय पाना होगा। काम-क्रोध-लोभ-मद-मान और हर्ष - ये छह आन्तरिक शत्रु हैं। पहले पाँच शत्रुओं का परिचय तो आपको दे दिया, आज हर्ष-शत्रु का परिचय देना है। हाँ, हर्ष भी अपना शत्रु है! जैसे क्रोध शत्रु है, वैसे हर्ष भी शत्रु है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जी हाँ, हर्ष-खुशी भी शत्रु है :

सभा में से : क्रोध को तो शत्रु मानते हैं, परन्तु हर्ष कैसे शत्रु हो सकता है? तो फिर हम करें क्या?

महाराजश्री : घबराओ मत! हर्ष कब शत्रु बनता है, यह बात समझ लो पहले। हर्ष मित्र भी है, शत्रु भी है।

अच्छे कार्यों में हर्ष मित्र बनता है, बुरे कार्यों में हर्ष शत्रु बनता है! विद्युत शक्ति जब 'हीटर' से लगती है तो गर्मी देती है और 'कूलर' से लगती है तो शीतलता देती है, वैसा हर्ष का काम है!

आपने दान दिया और हर्ष हुआ, तो हर्ष आपका मित्र बना, परन्तु आपने चोरी की और हर्ष हुआ, तो हर्ष आपका दुश्मन बना! आपने शील का पालन किया और हर्ष हुआ, तो हर्ष आपका मित्र बना, परन्तु आपने दुराचारसेवन किया और हर्ष मनाया, तो हर्ष आपका शत्रु बनेगा। आपने तप किया और हर्ष हुआ, तो हर्ष आपका मित्र बन गया, परन्तु आपने अभक्ष्य खाया, अपेय का पान किया और हर्ष किया, तो वहाँ हर्ष आपका शत्रु बन जायेगा। किसी का दुःख दूर किया और आप हर्ष से नाच उठे, तो हर्ष आपका मित्र बना, परन्तु किसी को आपने दुःख के खड्डे में गिरा दिया और हर्ष से झूम उठे, तो हर्ष आपका दुश्मन बनेगा!

पापकार्य में जब सफलता मिलती है, तब खुश हो जाते हो न? जानते हो कि इससे कैसे प्रगाढ़ पापकर्म बंधते हैं? वे पापकर्म तुम्हारे साथ शत्रुता से पेश आयेंगे। पापाद् दुःखम्! पापों से ही तो दुःख आते हैं। जो अपन को दुःखी करें वह शत्रु। इसलिए पापकार्यों में हर्ष करना बुरा है।

सभा में से : तो क्या पापकर्म करने पर खुश नहीं हों तो पापकर्म नहीं बंधते?

महाराजश्री : पापाचरण से पापकर्म बंधते हैं जरूर, परन्तु पापाचरण में खुश होने से 'निकाचित' पापकर्म बंधते हैं। पाप करते समय खुश नहीं होंगे तो जो पापकर्म बंधेंगे वे पापकर्म 'वॉशेबल' होंगे। खुश होने से जो पापकर्म बंधेंगे वे पापकर्म 'अनवॉशेबल' होंगे। एक उदाहरण से इस बात को समझें :

श्रेणिक खुशी फूले और....

भगवान महावीर स्वामी के समय की बात है। उस समय मगधदेश का

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजा था श्रेणिक। राजा श्रेणिक शिकार करता था। शिकार करने की उसे आदत थी, उसे मज़ा आता था। एक दिन, श्रेणिक जंगल में शिकार करने गया था। उसने दूर से एक हिरनी को देखा। अपना घोड़ा उसने हिरनी के पीछे दौड़ाया, धनुष्य पर बाण चढ़ाया... हिरनी तेजी से भाग रही थी, परन्तु श्रेणिक का अश्व भी तेजी से दौड़ रहा था। श्रेणिक ने तीर छोड़ा। तीर हिरनी के पेट में चुभ गया। हिरनी का पेट फट गया। पेट में से मरा हुआ बच्चा भी बाहर निकल पड़ा। हिरनी भी मर गई...। श्रेणिक घोड़े से उतर कर मृत हिरनी के पास आया, बड़ा खुश हुआ। 'मेरे एक तीर से दो पशु मरे : हिरनी और उसका बच्चा।' बहुत हर्ष हुआ। शिकार ऐसे होता है...'एक तीर से दो शिकार।' बड़ी खुशी मनायी और नरकगति का आयुष्य-कर्म बाँध लिया। बाद में जब श्रेणिक, भगवान महावीर के परिचय में आये तब सर्वज्ञ भगवान ने बताया कि 'श्रेणिक, तुम नरक में जाओगे।' तब श्रेणिक घबराए और भगवान को कहा : 'श्रेणिक, तूने शिकार का पाप करके हर्ष मनाया था, इसलिए नरकगति का आयुष्य बाँध लिया था। वह कर्म निकाचित था... अपरावर्तनीय कर्म तूने बाँध लिया है।'

हर्ष बना न शत्रु? पापप्रवृत्ति करते समय सावधान रहो! अन्यथा दुःखी बन जाओगे। पाप करने से पूर्व हर्ष नहीं होना चाहिए, पाप करते समय हर्ष नहीं होना चाहिए और पाप करने के पश्चात् हर्ष नहीं होना चाहिए। हर्ष कहो, आनन्द कहो, खुशी कहो सब एक ही है। अज्ञान दशा में यह भूल हो ही जाती है, इसलिए सज्ञान और सभान बनो। कर्म कैसे बंधते हैं और कर्मों का उदय कैसा और किस प्रकार आता है इसका ज्ञान प्राप्त करो।

व्यापार में चोरी करते हो न? मिलावट करते हो न? और उसमें जब सफलता मिलती है, कुछ रुपये ज्यादा मिल जाते हैं तब खुशी मनाते हो न? हर्षविभोर बन जाते हो न? जानते हो कि इससे निकाचित पापकर्म बंधते हैं? चोरी से, अन्याय से, अनीति से प्राप्त किया हुआ धन आपके पास रहनेवाला नहीं और पापकर्म आपको दुःखी किये बिना जानेवाले नहीं!

रूपसेन की कहानी :

शास्त्रों में एक रूपसेन की कहानी आती है। रूपसेन श्रेष्ठि-पुत्र था। धनवान और रूपवान था। सुन्दर वस्त्र पहनकर घुमने निकलता था। एक दिन राजमहल के सामने खड़ा था। राजमहल के झरोखे में राजकुमारी खड़ी थी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नाम था सुनंदा। सुनंदा ने रूपसेन को देखा, रूपसेन ने सुनंदा को देखा! बस, तारामैत्रक बंध गया। दृष्टि से प्रेम हो गया। इशारे हुए और संकेत से मिलने का स्थान और समय निश्चित हो गया! रूपसेन हर्ष से गद्गद् हो गया। 'राजकुमारी के साथ संयोग होगा, प्रेम होगा...' इस कल्पना से उसका मनमयूर नाचने लगा। वह अपने घर लौटा, तो भी उस कल्पना से मुक्त न हो पाया। उसको कहाँ ज्ञान था कि 'मैं जिस कल्पना में आनन्द की अनुभूति करता हूँ...इससे पापकर्म बाँध रहा हूँ और मेरे भविष्य को अन्धकारमय बना रहा हूँ...दुःखपूर्ण बना रहा हूँ।'

याद रखना, अभी रूपसेन ने पापकर्म शरीर से नहीं किया है, परन्तु राजकुमारी के साथ संभोग की कल्पनामात्र की है, योजना बनाई है और मधुरता का अनुभव किया है। पापाचरण की पूर्वभूमिका बनाई थी...परन्तु इससे भी उसने निकाचित पापकर्म बाँध लिया था! इसका उसको पता नहीं था! पता कैसे लगे? मोह की बेहोशी में कर्मबन्ध का पता नहीं लगता है।

जब रूपसेन संध्या के बाद, अंधेरे में राजकुमारी के पास जाने निकला, रास्ते में एक जर्जरित दीवार उस पर गिर पड़ी और रास्ते में ही मर गया। मरकर वह उसी राजकुमारी के पेट में गर्भरूप से उत्पन्न हुआ! क्योंकि जिस समय रूपसेन की मृत्यु हुई उस समय सुनंदा एक चोर को अंधेरे में रूपसेन मानकर, उसके साथ शारीरिक संभोग में लीन थी और गर्भवती बनी थी! उसका प्रेमी ही उसके पेट में गर्भरूप से आया था!

राजकुमारी को जब खयाल आया कि वह गर्भवती बनी है, वह भयाक्रान्त हो गई। अपकीर्ति का भय लगा। उसने गर्भपात करने का निर्णय किया। अपनी दासी के द्वारा वैसे औषध मँगवाये और गर्भ को सड़ा-सड़ाकर नष्ट किया। कौन था उस गर्भ में? रूपसेन की आत्मा! कितना दुःख पाया? कैसी घोर यातना पायी? क्या था मूलभूत कारण? पाप में हर्ष! पाप में आनन्द!

सभा में से : आजकल तो ऐसे पाप, हम लोग हजारों करते हैं....क्या होगा हमारा?

महाराजश्री : सावधान हो जाओ। जाग्रत बनो। जीवन में ऐसे पाप हो गये हो तो हार्दिक पश्चात्ताप करो। भविष्य में ऐसे पाप नहीं करने का संकल्प करो। 'मैं अब कभी भी पापों में आनन्दित नहीं बनूँगा, निर्बल मन कभी पाप-विचार कर लेगा, तो भी उसमें खुशी नहीं मनाऊँगा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अन्य मत में भी हर्ष को शत्रु माना गया है :

जो जैन नहीं हैं, जैनधर्म के सिद्धान्त को नहीं जानते हैं, वे भी यदि पाप को पाप माननेवाले हैं; हिंसा, असत्य, चोरी, दुराचार आदि को पाप मानते हैं; तो उनको भी पापों में हर्ष नहीं करना चाहिए। बौद्ध और वैदिक परम्परा में भी 'हर्ष' को शत्रु माना गया है। पापों में खुश होने की बात कोई भी धर्म नहीं कह सकता है। यदि वह 'धर्म' है तो! जो लोग धर्म के नाम, तत्त्वज्ञान के नाम....पापों में भी खुशियाँ मनाने की बात करते हैं, उनके प्रपंच-जाल में मत फँसना। आज भी वैसे लोग हैं, कि जो मजे से पाप करने का उपदेश देते हैं! उनके मठ में सभी पाप मजे से होते हैं! उनके नामधारी संन्यासी और अनुयायी मस्ती से पाप करते हैं! उन्होंने वैसा जाल बिछा दिया है कि भोले भाले लोग बेचारे उस जाल में फँस जाते हैं! अनेक दुर्व्यसनों में फँसते हैं, दुराचार-व्यभिचार में फँसते हैं और तन-मन-धन से बरबाद होते हैं।

पाप करना गुनाह है, परन्तु पापों में खुश होना भारी गुनाह है। पापाचरण की सजा होती है, परन्तु पापाचरण में हर्षित होने की सजा भारी होती है, लंबी होती है। इसलिए, हर्ष को शत्रु मानो और उससे मुक्त बनो। यदि आनन्द चाहिए तो अच्छे कार्यों में आनन्द का अनुभव करो। सत्प्रवृत्ति में हर्षित बनो। दूसरों के अच्छे कार्य देखकर, सुनकर हर्षित बनो। आपका वह हर्ष 'प्रमोद' बन जायेगा!

राजा श्रेणिक ने भगवान महावीर से यही तत्त्व पाया था न! स्वयं श्रेणिक इतना निर्बल मन का था कि वह पापों का त्याग नहीं कर सकता था, परन्तु पापत्यागी स्त्री-पुरूषों के प्रति उसके हृदय में प्रेम और आदर था। पापत्यागी साधु-साध्वी को देखकर उसका हृदय प्रमोद से भर जाता था। हर्ष से गद्‌गद् हो जाता था।

पापों में आनंद नहीं होना चाहिए :

मनुष्य को जीवन में आनन्द चाहिए। आनन्द के बिना जीना भी मुश्किल बन जाता है। ज्ञानीपुरूष 'Totally'-सर्वथा आनन्द का निषेध नहीं करते हैं, ज्ञानी पुरूषों का कहना इतना ही है कि पापों में आनन्दित मत बनो। पापों में हर्षित मत बनो! चूँकि उनकी ज्ञानदृष्टि में वे उसका कटु परिणाम देखते हैं। बुरा नतीजा देखते हैं।

दूसरी एक महत्त्व की बात समझ लो। जिस कार्य को करने में आपको एक बार मज़ा आ गया, आप हर्षित-आनन्दित बने, कि वह कार्य पुनः-पुनः आपके

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जीवन में होता रहेगा। यदि एक पाप आपने किया, आपको मजा आ गया, आपके जीवन में वह पाप पुनः-पुनः होता रहेगा। फिर वह आदत बन जायेगी....। पापसेवन की आदत प्राण लेकर छोड़ती है।

जुआ खेलनेवाले को यदि जुआ खेलने में मज़ा आता है पहली दफा बस, वह जुआरी बनेगा ही! जब बरबाद होगा तब ही आदत छूटेगी। वैसे, शराब पीनेवाले को यदि मज़ा आ गया शराब पीने में, तो वह पियक्कड़ बनेगा ही। किसी भी उपदेशक का उपदेश भी उसको असर नहीं करेगा। क्योंकि उसको पीने में मज़ा आ गया है!

सभा में से : जुआ खेलने और शराब पीने में मजा आता है, इसलिए तो मनुष्य खेलता है और पीता है।

महाराजश्री : वैसा मजा किस काम का, कि जो मनुष्य को तन-मन और धन से बरबाद कर दे! यह पापों का मज़ा ही तो शत्रु है! अच्छे कार्यों में मज़ा आना चाहिए। वैसा एक अच्छा कार्य चुनना चाहिए कि जिसमें तुम्हारा मन रम जाय! वैसी एक-दो धर्मक्रियाएँ जीवन में होनी चाहिए कि जिस धर्मक्रिया में मजा आ जाय! ऐसे लोग भी देखने को मिलते हैं कि जिनको परमात्मा की भक्ति में बड़ा मज़ा आता है! दो-दो घंटे तक परमात्मा की पूजाभक्ति करते रहते हैं...उनको मज़ा आता है वैसा करने में! कुछ लोगों को धर्मगुरूओं का सत्संग करने में मज़ा आता है, घंटों तक धार्मिक प्रवचन सुनते रहते हैं। कुछ लोगों को जनसेवा में, पशु-पक्षी की सेवा में आनन्द आता है...जीवनपर्यंत वे सेवाकार्य करते रहते हैं। इस प्रकार किसी न किसी अच्छे कार्यों में आनन्द की वृत्ति तृप्त होनी चाहिए। तो बुरे कार्यों में हर्ष नहीं होगा। बुरे कार्य कभी हो भी जायेंगे, परन्तु उनमें हर्ष नहीं होगा।

शत्रुओं को पहचानो और छोड़ दो उन्हें :

काम, क्रोध, लोभ, मद, मान और हर्ष - इन आन्तरिक शत्रुओं की पहचान तो हो गई न? भिन्न भिन्न वेश-भूषा में ये शत्रु मिलते रहते हैं...परख लेना उनको, अन्यथा अपने जाल में फँसा लेंगे। और जब मनुष्य आन्तरिक शत्रुओं को पहचानकर, उनसे छुटकारा पाने का प्रयत्न करता है, तब इन्द्रियों पर संयम करना सरल बन जाता है। करना है इन्द्रियों पर संयम? पाना है इन्द्रियों पर विजय? इसलिए आन्तरिक शत्रुओं से छुटकारा पाना अनिवार्य बताया है। यानी इन्द्रियविजय का उपाय है आन्तरिक शत्रु पर विजय!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आन्तरिक शत्रु पर विजय पानेवाला मनुष्य, इन्द्रियविजेता बनेगा ही। आन्तरिक शत्रु से दबा हुआ व्यक्ति, लाख उपाय करने पर भी इन्द्रियविजय नहीं पा सकता! काम-क्रोधादि के साथ इन्द्रियों का प्रगाढ़ संबंध है!

श्री स्थूलभद्रजी के सामने श्रृंगार सजकर कोशा नृत्य करती थी न? परन्तु स्थूलभद्रजी की इन्द्रियों में चंचलता या प्रकंपना नहीं आयी थी! क्यों नहीं आयी थी? चूँकि वे काम-शत्रु के विजेता थे! यदि कामवासना पर उन्होंने विजय नहीं पायी होती तो कोशा के स्नेहपास में वे बंध जाते! और उसी कोशा को देखते ही सिंहगुफावासी मुनि विचलित हो गये थे, इन्द्रियाँ चंचल हो गई थीं....क्यों? चूँकि वे कामविजेता नहीं बने थे। आन्तरिक शत्रु 'काम' पर पूर्णरूपेण विजय नहीं पायी थी उन्होंने।

हालाँकि श्रमणजीवन में तो पूर्णतया इन्द्रियविजय होना चाहिए, परन्तु वह पूर्ण विजय तभी संभव है कि आंशिक विजय पाने का पुरूषार्थ जीवन में शुरू किया गया हो। गृहस्थ-जीवन में रहते हुए कुछ मात्रा में आन्तरिक शत्रु पर विजय पा लिया जाये तो साधुजीवन में पूर्णरूपेण इन्द्रियविजय पाने का पुरूषार्थ सरल हो सकता है!

अब, एक-एक इन्द्रिय पर विजय पाने के लिए, कुछ अंश में भी आप चाहो तो इन्द्रियों पर संयम पा सको, इसलिए कुछ उपाय-उपचार बताता हूँ। क्योंकि आज इस विषय को समाप्त करना है।

श्रवणेन्द्रिय-विजय :

कान मिले हैं सुनने के लिए। जीवन-व्यवहार में सुनने की क्रिया महत्त्वपूर्ण होती है। बधिरता जीवन-व्यवहार में बाधक बनती है। धार्मिक क्षेत्र में भी बधिरता अवरोधक बनती है। बस, विवेक इतना आवश्यक है कि क्या सुनना, क्या नहीं सुनना। सुनना तो कितना सुनना, कैसे सुनना।

- परनिन्दा कभी सुनो नहीं।
- स्वप्रशंसा सुनने से दूर रहो।
- गंदे और बीभत्स गीत मत सुनो।
- तीव्र राग-द्वेष बढ़ानेवाले समाचार सुनो नहीं।
- परिवार की बातें सुनते समय या सामाजिक बातें सुनते समय संसार की असारता-निर्गुणता का खयाल जीवंत रखो।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- न सुनने जैसी बातें सुननी पड़े, तब रसपूर्वक सुनो नहीं। ऐसी बातें कम से कम सुनो।
- सद्गुरुओं के पास जाकर विनयपूर्वक धर्मोपदेश सुनते रहो।
- कल्याणमित्रों की तत्त्वचर्चा सुनते रहो।
- प्रभुभक्ति के गीत सुनते रहो।
- सज्जनों का गुणानुवाद सुनते रहो।
- महापुरूषों के जीवनचरित्र सुनते रहो।
- अपनी निन्दा सुनते समय क्रोधशत्रु अपने पर विजय न पा ले, इसलिए सावधान रहो।
- जो सुनने योग्य हो, उसे बड़ी एकाग्रता से सुनो।
- दूसरों का अवर्णवाद करनेवाले लोगों की मित्रता मत रखो। इतना विवेक यदि आ जाय तो श्रवणेन्द्रिय पर विजय अवश्य पा सकोगे।

चक्षुरिन्द्रिय-विजय :

आँखें मिली हैं, तो देखना स्वाभाविक है। परन्तु एक बात ध्यान में रखना कि दुनिया में सब कुछ देखने योग्य नहीं होता है। क्या देखना और क्या नहीं देखना, इसका निर्णय करने का विवेक चाहिए। जो देखने से पाप-विचार आये, वह नहीं देखना चाहिए और जो देखने से अच्छे पवित्र विचार आये, वही देखना चाहिए। आज के युग में देखने के स्थान बहुत बढ़ गये हैं। सिनेमा, नाटक और टीवी - ये तीन वस्तु विश्व में व्यापक बन गई हैं...सर्वत्र फैल गई हैं ये तीन बातें। क्या इन तीन वस्तुओं से आप मुक्त हो सकते हो? इन्हें देखने में आँखों का दुरुपयोग ही है। सिनेमा आदि देखने से आन्तरिक शत्रु उत्तेजित होते हैं और इन्द्रियाँ चंचल बनती हैं।

आँखों का काम जैसे देखने का है, वैसे पढ़ने का भी है। क्या पढ़ना और क्या नहीं पढ़ना, उसका विवेक बहुत आवश्यक है। नहीं पढ़ने योग्य पत्रिकाएँ और अखबार भी काफी छप रहे हैं। पढ़ने योग्य साहित्य भी ठीक मात्रा में छप रहा है। परन्तु सामान्य जनता नहीं पढ़ने योग्य ही ज्यादा पढ़ती है। जातीय वृत्तियों को उत्तेजित करनेवाला और हिंसा वगैरह अनिष्टों को बढ़ावा देनेवाला साहित्य बहुत फैल रहा है, क्योंकि लोगों की अभिरूचि कुछ वैसी ही बन गई है। यदि आप लोगों को आन्तरिक शत्रु पर विजय पाना है और इन्द्रियों पर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

संयम पाना है, तो ऐसा साहित्य मत पढ़ो। घर में भी ऐसा साहित्य नहीं आना चाहिए। चक्षुरिन्द्रिय पर विजय पाने के लिए निम्न बातों का पालन करना ही होगा :

- सिनेमा, नाटक और टीवी देखना बंद करो।
- लड़ाई-झगड़ों के प्रसंग मत देखो।
- दूसरों की वेश-भूषा मत देखो।
- पुरूषों को परस्त्री का रूप नहीं देखना चाहिए। स्त्रियों को पर-पुरूष का रूप नहीं देखना चाहिए।
- निम्न स्तर का साहित्य मत पढ़ो।
- नियमित परमात्ममंदिर में जाकर परमात्मा की मूर्ति के दर्शन करो।
- नियमित धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन करो।

दृढ़ता के साथ यदि इन बातों का पालन करोगे तो चक्षुरिन्द्रिय पर विजय पा सकोगे। यदि आँखों का दुरूपयोग किया तो इस जन्म में भी अन्धापन आ सकता है। आनेवाले जन्म में तो आँखें मिलेगी ही नहीं। आँखों के दुरुपयोग से आँखों के अनेक रोग भी होते हैं।

अब घ्राणेन्द्रिय-विजय के विषय में कुछ बातें सुन लो।

घ्राणेन्द्रिय-विजय :

मनुष्य को नाक है तो सुगन्ध-दुर्गन्ध तो मिलती रहेगी। इसमें तो इतनी ही सावधानी बरतने की है कि ज्यादा सुगन्ध का अनुरागी नहीं बनना है और दुर्गन्ध में घृणा नहीं करनी है। किसी सुगन्ध की आदत नहीं होनी चाहिए।

रसनेन्द्रिय-विजय :

रसनेन्द्रिय यानी जिह्वा। बड़ी महत्त्वपूर्ण इन्द्रिय है यह। दूसरी इन्द्रियों का एक-एक काम होता है, इस इन्द्रिय के दो काम हैं! बोलने का और स्वाद लेने का। बोलना और खाना-पीना - ये दो, जीवन के महत्त्वपूर्ण कार्य हैं। जिस व्यक्ति का रसनेन्द्रिय पर संयम होता है, वह व्यक्ति जीवन में सफलता के शिखर पर पहुँचता है और जिसका संयम नहीं होता है वह व्यक्ति निष्फलता की गहरी खाई में गिर पड़ता है। इस इन्द्रिय पर विजय पाने के लिए कुछ उपाय बताता हूँ। यदि आप इन उपायों को जीवन में स्थान दोगे तो अवश्य रसनेन्द्रियविजेता बन पाओगे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- अभक्ष्य भोजन का और अपेय के पान का त्याग करो।
- जितना हो सके उतना स्वाद लेना कम करो।
- रात्रिभोजन बंद करो। दिन में भी दो या तीन समय ही भोजन करो।
- होटल-रेस्टोरन्ट में खाना-पीना छोड़ दो।
- विकारोत्तेजक जमीनकंद आदि खाना छोड़ दो।
- हो सके उतना कम बोलो।
- ज्यादा हँसी-मजाक करना छोड़ो।
- प्रिय और हितकारी वचन ही बोलो।
- जब क्रोध या रोष में हों, तब मौन रहो।
- दिन-रात में कुछ घंटे मौन रहने का अभ्यास करो।
- तत्त्वचर्चा करो।
- जहाँ आपके प्रति प्रेम-आदर न हो, वहाँ मौन रहो।
- किसी की रहस्यभूत बातों को प्रकाशित मत करो।

अब स्पर्शेन्द्रिय के विषय में कुछ बातें बताता हूँ।

स्पर्शेन्द्रिय-विजय :

यदि इस इन्द्रिय पर विजय पाना है तो सुखशीलता का त्याग करना होगा! तीन बातों में विशेष रूप से विवेक करना होगा।

१. वस्त्रपरिधान २. शयन ३. विजातीय-स्पर्श।

पहली बात है वस्त्रपरिधान की। बहुत मूल्यवान और सुन्दर वस्त्रों का मोह छोड़ना होगा। अल्प मूल्य के और सादगीपूर्ण वस्त्र पहनने चाहिए। फैशनेबल वस्त्र नहीं पहनने चाहिए।

दूसरी बात है शयन की। यदि स्पर्शेन्द्रिय पर विजय पाना है तो मुलायम गद्दी पर सोना बंद करो। जमीन पर ऊनी या सूती वस्त्र बिछाकर सोया करो। बहुत मुलायम बिछौना नहीं रखना।

तीसरी बात है स्पर्श की। बहुत नाजुक और महत्त्वपूर्ण बात है यह। पुरूष को स्त्री-देह का स्पर्श भाता है, स्त्री को पुरूष-शरीर का स्पर्श भाता है। यह वृत्ति पशु-पक्षी और मानव में सहजरूप से होती है। देवों में भी यह वृत्ति होती है। परन्तु इस वृत्ति पर संयम होना नितान्त आवश्यक है। हालाँकि आज जीवन-व्यवस्था ही बिगड़ गई है। पारिवारिक और सामाजिक जीवन में संयम और विवेक जैसी कोई बात ही देखने को नहीं मिलती है। फिर भी, जिस

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किसी को आत्मसंयम करना है, इन्द्रियविजेता बनना है, वह बन सकता है। उनके लिए ही यहाँ कुछ उपाय बताता हूँ।

- यदि आपकी शादी नहीं हुई है तो आप किसी भी स्त्री या लड़की के शरीर को स्पर्श मत करो। यदि आप छोटे बच्चे हैं तो माता-बहन आदि के साथ स्पर्श कर सकते हो। परन्तु कुमार और युवान हो तो अनावश्यक स्पर्श माता और बहन का भी नहीं करना चाहिए।
- यदि आपकी शादी हो गई है तो अपनी पत्नी के अलावा दूसरी किसी भी स्त्री को हँसी-मजाक में भी स्पर्श मत करो।
- यदि आप महिला हैं तो अपने पति के अलावा किसी भी पुरुष को स्पर्श मत करो।
- राग से या मोह से, पुरूष को पुरूष के साथ भी स्पर्श नहीं करना चाहिए। उसी प्रकार स्त्री को भी राग से या मोह से स्त्री के शरीर को स्पर्श नहीं करना चाहिए।
- मैथुनवृत्ति-विलासवृत्ति प्रज्वलित हो, वैसे नाटक-सिनेमा नहीं देखना चाहिए। वैसे चित्र नहीं देखने चाहिए। वैसी बातें या गीत भी नहीं सुनने चाहिए। वैसी किताबें नहीं पढ़नी चाहिए।
- अपने शरीर के भी गुप्त भागों को निष्प्रयोजन स्पर्श नहीं करना चाहिए। दूसरों के शरीर को विकार-भावना से नहीं देखना चाहिए।
- बहुत उत्तेजक और मादक पदार्थों का भक्षण नहीं करना चाहिए। नशीली दवाइयाँ नहीं लेनी चाहिए। किसी भी प्रकार का नशा नहीं करना चाहिए।

यदि स्पर्शेन्द्रिय पर विजय पाना है, कुछ अंश में भी विजय पाना है तो इन बातों की उपेक्षा मत करना। इन बातों की उपेक्षा करके यदि तप करोगे, जप करोगे, ज्ञान-ध्यान करोगे, तो भी इन्द्रियविजेता नहीं बन पाओगे।

गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों में यह पाँचवा धर्म है-इन्द्रियविजय। इन सामान्य धर्मों को जीवन में स्थान देकर, मानवता को उज्ज्वल करो, यही मंगल कामना।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***वैसे घर में या वैसे मोहल्ले में रहना चाहिए, जहाँ कि बार-बार किसी भी तरह के उपद्रव, हुल्लड़ या झगड़े नहीं होते हों!***
- ***जब भी उपद्रव हो तब धर्म-अर्थ और काम - इन पुरुषार्थों की क्षति न हो वैसे स्थान पर चले जाना चाहिए।***
- ***निर्भयता, निश्चिंतता और सरलता से धर्म-आराधना करने के लिए शहर छोड़कर गाँवों में जाकर रहना पसंद करो!***
- ***केवल पैसे की धुन तमाम बुराइयों की जड़ है। उसकी कभी बड़ी भारी कीमत चुकानी पड़ती है।***
- ***सम्यक्‌दर्शन की प्राप्ति के लिए सामान्य धर्म का पालन अनिवार्य है।***
- ***आचार्य भगवंतों पर जिनशासन की जिम्मेदारी होती है। उन्हें जो भी उचित लगे वे कर सकते हैं। आचार्य का स्थान परम श्रद्धेय है।***

प्रवचन : ५१

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, पूजनीय आचार्य श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में, गृहस्थधर्म का प्रतिपादन करते हुए छट्ठा धर्म बताते हैं : उपद्रववाले स्थान का त्याग करना।

चाहे पुरुषार्थ धर्म का हो या अर्थ-काम का हो, उपद्रवरहित स्थान में ही सफलता प्राप्त कर सकता है। इसलिए सुज्ञ पुरुष को वैसे राज्य में, वैसे शहर या गाँव में रहना चाहिए जहाँ विशेष उपद्रव नहीं होते हैं।

उपद्रव के प्रकार :

उपद्रव अनेक प्रकार के होते हैं। स्वराज्य की ओर से और पर राज्य की ओर से उपद्रव हो सकते हैं। वर्तमान काल में छोटे-बड़े राज्य और राजा नहीं रहे हैं, भारत एक सार्वभौम सत्ता बन गया है। इसलिए, प्राचीन काल में जिस प्रकार एक राजा दूसरे राज्य पर बात-बात में आक्रमण करता था, उस प्रकार वर्तमान काल में नहीं हो सकता है। समग्र भारत पर एक केन्द्रीय सरकार, वह भी राजा नहीं, प्रजा के प्रतिनिधियों की बनी हुई सरकार शासन कर रही है। विश्व के भिन्न भिन्न राष्ट्रों के बीच कुछ वैसे समझौते हुए हैं कि बात-बात में

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

युद्ध नहीं हो सकते हैं। कभी कभी कोई सत्ता, उन समझौते का उल्लंघन कर युद्ध करती हैं....उस समय नागरिकों को सतर्क बन जाना चाहिए। भारत के साथ पाकिस्तान ने वैसे तीन-तीन युद्ध किये....परन्तु वे युद्ध ज्यादातर दो देशों की सीमा पर हुए थे, इसलिए प्रजा को ज्यादा भय नहीं था। परन्तु यदि वैसा युद्ध देश के भीतरी प्रदेश में फैल जाय तो प्रजा को निरुपद्रवी प्रदेश में चले जाना चाहिए। भारत के अनेक विभाग हैं, अनेक राज्य हैं, जिस राज्य में युद्ध नहीं फैला हो, उस राज्य में चले जाना चाहिए। जैसे, मध्यप्रदेश में युद्ध का आतंक फैला हो और गुजरात में युद्ध नहीं हो, तो गुजरात में स्थानान्तर कर देना चाहिए।

कभी ऐसा भी हो सकता है कि पर राष्ट्र का आक्रमण नहीं हो, अपने ही देश में एक पार्टी दूसरी पार्टी से सत्ता छीन लेने को सशस्त्र क्रान्ति कर दें! सेनापति कभी विद्रोह कर दें और देश में आतंक फैल जाय, तो भी सद्‌गृहस्थ को वैसे स्थान में, वैसे प्रदेश में पहुँच जाना चाहिए कि जहाँ ऐसे उपद्रव नहीं हों। जहाँ पर धर्म, अर्थ और काम - इन तीन पुरुषार्थो कों क्षति न होती हों।

परमात्मा की शरण लेकर निर्भयता से उपद्रवों के बीच जियो :

सभा में से : यदि देशव्यापी उपद्रव फैल जाय तो कहाँ जायें?

महाराजश्री : दूसरा कोई देश-प्रदेश ही नहीं हो कि जहाँ उपद्रव नहीं हो, तब तो फिर धर्म की, परमात्मा की शरण लेकर निर्भयता से उन उपद्रवों के बीच रहना चाहिए। इधर-उधर दौड़-भाग नहीं करनी चाहिए। जो सबका होगा वह आपका होगा। जब देश में राजाओं के अलग-अलग राज्य थे उस समय राजाओं के परस्पर युद्ध, सामान्य बात थी! देश में कहीं न कहीं युद्ध चलता ही रहता था! परन्तु एक राज्य में से दूसरे राज्य में जाने का 'चान्स' बना रहता था! वर्तमान समय में जबकि लोकशाही है, तब स्वतन्त्र कोई राज्य नहीं है। संपूर्ण भारत सार्वभौम राष्ट्र है। पर राष्ट्र का आक्रमण होता है तो पूरे भारत पर होता है। परन्तु आक्रमण कभी-कभी ही होता है।

हाँ, देश के भीतर दंगे होते रहते हैं। बड़े नगरों में बार-बार दंगे होते हैं न? लोकशाही-प्रजासत्ताक राष्ट्र में प्रजा को विशेष अधिकार दिये गये हैं। कुछ अहिंसक प्रकार के दंगे करने की इजाजत दी गई है। वाणी-स्वातंत्र्य दिया गया है। प्रजा जो चाहे वह बोल सकती है। किसी की भी आलोचना-प्रत्यालोचना कर सकती है। ऐसे अधिकार वैसी प्रजा को दिये गये हैं कि जो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रजा उतनी शिक्षित नहीं है, देश के प्रति उतनी निष्ठावाली नहीं है। विशेष अधिकार तो प्रबुद्ध प्रजा को देने के होते हैं। देशप्रेमी प्रजा को देने के होते हैं। इस देश में प्रजा ज्यादा उद्बुद्ध नहीं है, ज्यादा देशप्रेमी नहीं है। इसका नतीजा देखने को मिल रहा है। प्रतिदिन दंगे होते हैं, हड़तालें होती हैं, पत्थरबाजी होती है, दुकानें जलायी जाती हैं, सरकारी मकान जलाये जाते हैं, सार्वजनिक सुख-सुविधाओं को नुकसान पहुँचाया जाता हैं....। जनजीवन में खतरे पैदा होते रहते हैं। दंगों में कई मनुष्य भी मारे जाते हैं। इसलिए, जिसको शान्ति से और संतोष से जीवन जीना है उनको ऐसे बड़े शहरों में नहीं रहना चाहिए।

मेहनत के बगैर पैसा नहीं मिलता :

सभा में से : यदि बड़े शहरों में नहीं रहें तो आजीविका कमाना मुश्किल हो जाये! गाँवों में व्यापार ठप्प हो गये हैं।

महाराजश्री : आपकी बात अर्धसत्य है! क्या बड़े शहरों में आजीविका कमानेवाले ही रहते हैं? जिनके पास लाखों रूपये हो गये हैं, वे लोग शहर क्यों नहीं छोड़ते? दूसरी बात, मात्र आजीविका कमाने की इच्छावाले गाँवों में भी छोटा-सा धंधा करके आजीविका कमा सकते हैं। परन्तु वहाँ कुछ विशेष परिश्रम करना पड़ता है। आजकल पढ़े-लिखे लोगों को परिश्रम नहीं करना है। बिना परिश्रम किये लखपति बन जाना है। गाँवों में इस प्रकार श्रीमंत नहीं बन सकते। इसलिए लोग गाँवों को छोड़-छोड़कर बड़े शहरों में जा बसते हैं। उपद्रवों के बीच जीना मंजूर है परन्तु शहर नहीं छोड़ना है! ऐसा क्यों हो रहा है, जानते हो? धर्मपुरुषार्थ की दृष्टि का अभाव हो गया है। अर्थपुरुषार्थ और कामपुरुषार्थ की दृष्टि में भी भ्रमणा प्रविष्ट हो गई है। शरीर-स्वास्थ्य और मानसिक शान्ति की उपेक्षा हो गई है। दृष्टि हो गई है ज्यादा से ज्यादा रुपये कमाने की और ज्यादा से ज्यादा सुख-सुविधा प्राप्त करने की। ठीक है, 'साइड़' में यदि कोई धर्मक्रिया होती हो तो कर लेने की! वह भी फुरसत हो तो!

- **गाँवों में ज्यादा सुख-सुविधाएँ प्राप्त नहीं होती हैं।**
- **गाँवों में ज्यादा मनोरंजन के स्थान नहीं मिलते हैं।**
- **गाँवों में बाजार में घूमने और बाहर का खाने-पीने का नहीं मिलता है!**
- **गाँवों में फैशन परस्ती नहीं होती है।**

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- **गाँवों में सट्टा नहीं खेला जाता है। बड़ा धंधा नहीं किया जाता है....ऐसी-ऐसी अनेक बातें, आप लोगों के दिमाग में हैं! कहिए, हैं या नहीं? परन्तु यह भी सोचना कि 'गाँवों में क्या-क्या है!'**

गाँवों में भी क्या मिलता है?

- **गाँवों में शुद्ध हवा मिलती है, बड़े शहरों में तो हवा प्रदूषित हो गई है।**
- **गाँवों में शुद्ध पानी मिलता है, बड़े शहरों में पानी भी दूषित मिलता है!**
- **गाँवों में शुद्ध घी और दूध मिलता है। शहरों में मिलावट हो गई है।**
- **गाँवों में शान्ति से धर्मआराधना हो सकती है।**
- **गाँवों में परिवार के साथ जिया जा सकता है। शहरों में पारिवारिक जीवन छिन्न-भिन्न हो जाता है।**

बम्बई-विलेपार्ले में एक डॉक्टर रहते थे। हम वहाँ चातुर्मास व्यतीत कर रहे थे। एक दिन डॉक्टर के पिताजी से मैंने पूछा :

'महानुभाव, आपके सुपुत्र तो उपाश्रय में दिखते ही नहीं, कहाँ गये हैं?' उन्होंने कहा :

'महाराज साहब, मैं भी उसका मुँह सप्ताह में एक बार ही देख पाता हूँ! उसके बच्चे भी रविवार के दिन ही उसको मिल पाते हैं! क्योंकि वह सूर्योदय से पहले तो बम्बई के लिए रवाना हो जाता है, उस समय बच्चे सोये हुए होते हैं और जब रात को १० बजे वह वापस घर लौटता है उस समय बच्चे निद्राधीन हो गये होते हैं! कभी-कभी तो तीन दिन तक बम्बई में ही रहता है....घर आता ही नहीं है....।'

कहिए, उसका पारिवारिक जीवन कैसा होगा? उस डॉक्टर की पत्नी को कितना असंतोष होगा? पति से असंतुष्ट नारी के जीवन में चरित्रहीनता आने में देरी नहीं लगती! अनुकूल संयोग बस, मिलना चाहिए, उसका पतन हुए बिना नहीं रहेगा। इस प्रकार काम-पुरुषार्थ में विफलता प्राप्त होती है।

शहर छोड़ो और गाँवों की तरफ लौटो :

बम्बई जैसे बड़े नगरों में जहाँ रहने का होता हो दूर दूर बोरीवली....विरार तक, घाटकोपर और थाना तक, और व्यापार करने के लिए, नौकरी करने के लिए जाना पड़ता हो 'प्रोपर' बम्बई में या फोर्ट में। वैसे लोग प्रातः ८ बजे घर छोड़ते हैं और रात्रि में ९/१० बजे घर पहुँचते हैं! कहाँ पत्नी और कहाँ पति!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहाँ पिता और कहाँ पुत्र! बारह-तेरह घंटे व्यवसाय में व्यतीत हो जायें और ६/७ घंटे सोने में पूरे हो जायें....२/३ घंटे खाने-पीने में चले जाये और २/३ घंटे घर के व्यवहार में चले जायें....फिर वह धर्मआराधना कब करेगा? यदि एक दो धर्मक्रियाएँ करेगा तो भी कैसे करेगा? सप्ताह में एक दिन होता है छुट्टी का! एक दिन में घर के अनेक काम करने के होते हैं, स्वजन-परिजनों से मिलना-जुलना होता है, घरवालों को घूमाने-फिराने ले जाना होता हैं....। उस दिन भी वह कौन-सी धर्मआराधना कर सकता है?

यदि आप लोग मेरा कहा मानो तो, मैं तो आप लोगों को गाँव में वापस जाने का ही उपदेश दूँगा। गाँवों में छोटे-छोटे व्यवसाय हो सकते हैं। कई प्रकार के गृहउद्योग भी हो सकते हैं। बेकारी का प्रश्न भी हल हो सकता है।

सभा में से : हम गाँवों में जायेंगे तो आप भी गाँवों में पधारेंगे न? आजकल साधुपुरुष भी बड़े शहरों में ज्यादा पधारते हैं!

महाराजश्री : आप लोग गाँवों में चले जायें...मैं गाँवों में चातुर्मास करूँगा! आप लोग गाँव खाली करके शहर में चले जायें तो साधु लोग गाँवों में जायेंगे क्या? क्यों जायेंगे? हम लोगों को बड़े शहरों में इसलिए जाना पड़ता है, क्योंकि लाखों की तादाद में जैन-परिवार बड़े शहरों में बस गये हैं। उन लाखों परिवारों को धर्मआराधना में जोड़ने के लिए, उनकी धर्मश्रद्धा को बनाये रखने के लिए साधुपुरुषों को शहरों में आना पड़ता है। जिस समय गाँवों में जैन-परिवार अच्छी तादाद में बसे थे, उस समय गाँवों में साधुपुरुष चातुर्मास करते थे। चातुर्मास के अलावा भी लम्बे समय तक स्थिरता करते थे।

गाँव में स्वास्थ्य अच्छा रहता है और सादगी से जीवन-निर्वाह हो सकता है। अनेक प्रकार के पापों से बचा जा सकता है।

उपद्रव की संभावना होने पर स्थानांतर कर लेना चाहिए :

सभा में से : क्या गाँव में उपद्रव नहीं हो सकते हैं?

महाराजश्री : हो सकते हैं, परन्तु कम मात्रा में होते हैं। कैसे-कैसे उपद्रव हो सकते हैं.... वह भी सुन लो।

- अतिवृष्टि हो सकती है।
- पास में नदी हो तो बाढ़ आ सकती है।
- अकाल पड़ सकता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- महामारी फैल सकती है यानी अनेक घातक रोग फैल सकते हैं।
- लोगों में विरोधभावना फैल सकती है, यानी वर्गविग्रह हो सकता है।
- डाकुओं का, चोरों का उपद्रव हो सकता है।

ऐसे उपद्रव पैदा होने पर उस गाँव को छोड़ देना चाहिए। उपद्रव की संभावना लगते ही स्थानान्तर कर देना चाहिए। तब तक वहाँ नहीं रहना चाहिए कि बाहर निकलना ही असंभव हो जाय।

अभी कुछ वर्ष पहले जयपुर के पास एक गाँव की नदी में बाढ़ आयी थी। नदी का पानी गाँव में बहने लगा कि गाँव के नवयुवक बाजार में निकल पड़े, लोगों को चेतावनी देने लगे....। लोग भी शीघ्र ही सलामत स्थान में पहुँचने लगे। परन्तु एक 'डबल बॉडी' सेठ नहीं माने! उन्होंने तो उन युवकों से कहा : 'भाई, मैं तो दूसरी जगह जा सकता हूँ, परन्तु मेरी यह तिजोरी का क्या होगा? आप लोग कृपा करके इस तिजोरी को सलामत जगह पहुँचा दोगे?'

युवक वहाँ कहाँ रूकनेवाले थे? वे तो चले गये! 'डबल बॉडी' सेठ तिजोरी को चिपक के खड़ा रहा! पानी बढ़ता जा रहा था....। सेठ वहाँ से हटा नहीं....परन्तु आत्मा उसकी चली गई थी!

क्या बचाना, क्या छोड़ना, इसका विवेक अनिवार्य है :

अचानक जब कोई उपद्रव पैदा हो जाय, उस समय क्या बचाना और क्या छोड़ देना, इसका त्वरित निर्णय करने की क्षमता होनी चाहिए। त्वरित निर्णय कर लेना चाहिए। यदि त्वरित निर्णय नहीं किया जाता है तो मौत की नौबत आ सकती है। समग्र परिवार पर आफत उतर सकती है।

कुछ बरसों पहले मद्रास और मद्रास के आसपास के गाँवों में वर्गविग्रह पैदा हो गया था। वहाँ की प्रजा में मारवाड़ी व्यापारियों के प्रति घोर रोष उत्पन्न हो गया था। मारवाड़ी व्यापारियों की कई दुकाने भी जलायी गई थी। उस समय जो समय को और परिस्थिति को समझनेवाले मारवाड़ी व्यापारी थे, वे तो परिवार को लेकर अपने वतन राजस्थान में पहुँच गये थे! संपत्ति और परिवार को राजस्थान में सेट कर दिया! वैसे एक भाई बम्बई में मुझे मिले थे! उन्होंने मुझे बताया कि 'अब हम लोगों को मद्रास से कब भागना पड़े, उसका पता नहीं है! इसलिए मद्रास में हमने इतना ही माल रखा है कि एक सूटकेस में आ जाय और सीधे एयरपोर्ट पर पहुँच सकें! हवाई जहाज में

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बैठकर सीधे बम्बई-जयपुर पहुँच सकें! परिवार की चिंता नहीं है, परिवार को राजस्थान में सुरक्षित कर दिया।'

परन्तु मैंने देखा कि उस महानुभाव का लक्ष्य धर्मपुरुषार्थ नहीं था, उसका लक्ष्य अर्थपुरुषार्थ था। पैसा कमाने की तीव्र लालसा थी।

येनकेन प्रकारेण अर्थप्राप्ति करने के लक्ष्य से जो मारवाड़ी 'साउथ' में गये हैं, असम और बंगाल में गये हैं, वहाँ एक दिन उपद्रव होनेवाले ही है। जब तक निरक्षरता थी और सरकार की उपेक्षा थी तब तक ये मारवाड़ी व्यापारी, वहाँ के लोगों को लूटते रहे! कल्पनातीत ब्याज लेते रहे। वहाँ की प्रजा की निरक्षरता का और भोलेपन का फायदा उठाते रहे। परन्तु अब भारत के ज्यादातर प्रान्तों में निरक्षरता दूर हुई है, 'एज्युकेशन' बढ़ने लगा है तो वहाँ की प्रजा व्यापार को समझने लगी है। एक दिन विद्रोह होगा इन मारवाड़ी व्यापारियों के सामने। बड़े उपद्रव पैदा हो जायेंगे। उस समय अर्थ, काम और धर्म तीनों का विनाश हो जायेगा उनके जीवन में। जीवन ही समाप्त हो सकते हैं।

पैसे का पागलपन अनेक पापों की जड़ है :

सभा में से : मारवाड़ियों के प्रति इतना अभाव उन प्रदेशों में कैसे हो गया?

महाराजश्री : धर्म के मूलभूत सिद्धान्तों की उपेक्षा और धन कमाने की तीव्र अपेक्षा! धर्म का मूल है दया और करूणा। इन व्यापारियों में नहीं रही है दया और नहीं रही है करुणा। इनके हृदय कठोर और निर्दय बन गये हैं। धन कमाने के लिए ये व्यापारी दया और करुणा का विचार भी नहीं करते। शायद उनके लिए दया नाम का कोई धर्म ही नहीं है। करुणा नाम का कोई तत्त्व ही नहीं है। उनके लिए परम तत्त्व है पैसा! इसलिए वे कोई भी पाप कर सकते हैं।

गरीब और अज्ञान प्रजा के साथ कब तक अन्याय करने का? और वह अन्याय लंबे समय तक चल भी नहीं सकता न? अति शोषण में से विद्रोह पैदा होता है। चीन में साम्यवाद-हिंसक साम्यवाद कैसे पैदा हुआ था? रशिया में साम्यवाद कैसे पैदा हुआ था? और अपने देश में - बंगाल में साम्यवाद कैसे फैला? आप लोग इन बातों को जानते हो या नहीं? श्रीमन्तों ने गरीबों का बहुत शोषण किया, इससे गरीबों में विद्रोह की भावना आग की तरह भड़क उठी। अनेक उपद्रव शुरू हो गये। इसमें भी, 'नक्सलवाद' ने तो घोर हिंसा का मार्ग ही ले लिया।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ग्रन्थकार आचार्यश्री, उपद्रववाले स्थान का त्याग करने का उपदेश देते हैं, क्योंकि उपद्रवयुक्त स्थान में रहने से धर्मकार्य नहीं हो सकते। इतना ही नहीं, धनसंपत्ति की हानि होती है और पारिवारिक नुकसान भी होता है। गृहस्थ जीवन में ये तीन बातें महत्त्व रखती हैं। इन तीन बातों के अलावा क्या रहता है गृहस्थ जीवन में? धर्म नहीं, अर्थ नहीं और काम नहीं, तो शेष क्या बचेगा?

संयमधर्म का यथोचित पालन निरुपद्रवी स्थान में ज्यादा सरल होता है :

यह बात, उपद्रववाले स्थान का त्याग करने की बात, मात्र आप लोगों के लिए ही ज्ञानी पुरूषों ने कही है, वैसी बात नहीं है। हमारे लिए यानी साधु-साध्वी के लिए भी कही गई है। कुछ विशिष्ट उपद्रव उत्पन्न हो जाय तो चातुर्मास में भी स्थान-परिवर्तन, गाँव-परिवर्तन करने की जिनाज्ञा है। चूँकि, साधु-साध्वी को भी संयमधर्म की आराधना करने की है न! संयमधर्म का यथोचित पालन निरुपद्रवी स्थान में हो सकता है। जहाँ संयमघातक, प्राणघातक या प्रवचन-घातक उपद्रवों की संभावना हो, वहाँ जाना ही नहीं चाहिए। उपद्रव जान-बूझकर तो पैदा ही नहीं करने के हैं। दूसरों की तरफ से पैदा हों तो वहाँ से चले जाना चाहिए। हालाँकि, साधु-साध्वी को अर्थ-काम की हानि होने का कोई भय नहीं होता है, उनको तो अपने संयमधर्म की आराधना ही करने की होती है। इसमें भी जब विशाल साधु-साध्वी समुदाय हों तब तो काफी गंभीरता से सोचना पड़ता है। सभी की शान्ति-समाधि का विचार करना पड़ता है। दीर्घदृष्टा आचार्य की यह जिम्मेदारी होती है। उपद्रवग्रस्त गाँव-नगर और प्रदेश को छोड़कर, साधु-साध्वी के समुदाय को लेकर वे निरुपद्रव प्रदेश में चले जाते हैं।

आचार्य का प्रधान लक्ष्य होता है साधु एवं साध्वी की संयमधर्म की आराधना। साधु-साध्वी निराकुलता से, शान्ति से अपनी अपनी धर्माराधना करते रहें, उनकी आराधना में विक्षेप न आयें, उनके जीवन को क्षति न पहुँचे और जिनशासन की शान, जिनशासन का गौरव बना रहे, इस दृष्टि से आचार्य श्रमणसंघ का नेतृत्व करते हैं अथवा कहें कि इस दृष्टि से आचार्य को श्रमणसंघ का नेतृत्व करने का शास्त्रों में कहा गया है।

गृहस्थ के सामान्य धर्म में जब यह सावधानी बतायी गई है तब साधु के विशेष धर्म में तो यह सावधानी नितान्त आवश्यक हो-यह स्वाभाविक है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सम्यक्दर्शन की नींव : सामान्य धर्म

सभा में से : मनुष्य को निर्भय बनना चाहिए न? इस प्रकार उपद्रवों से डरकर भाग जाना, क्या कायरता नहीं है?

महाराजश्री : मनुष्य को निर्भय बनना चाहिए, यह बात सही है, परन्तु यह बात विशेष रूप से व्यक्तिगत है, समष्टि के लिए नहीं! जहाँ अनेक व्यक्ति का प्रश्न हो वहाँ सलामती का विचार पहले करना चाहिए। हाँ, अचानक उपद्रव-संकट आ जाय, तो भयभीत हुए बिना संकट का सामना करना चाहिए। मौत का भय उपस्थित हो जाय तो भी मानसिक स्वस्थता बनी रहनी चाहिए। परन्तु आपके परिवार में क्या सभी का ऐसा सत्त्व है? सभी में ऐसी निर्भयता है? आप में अकेले में ऐसी निर्भयता हों परन्तु बच्चों में नहीं हों, महिलाओं में नहीं हों, तो आपको सलामती का विचार करना ही चाहिए। वह कायरता नहीं कही जायेगी, परन्तु समय-सूचकता कही जायेगी। यह समय-सूचकता, गृहस्थ जीवन का सामान्य धर्म है! धर्म यानी कर्तव्य! धर्म यानी विशेष धर्म-आराधना का कारणभूत धर्म!

दूसरी बात यह है कि ये सामान्य धर्म जो बताये जा रहे हैं, वे एकदम प्राथमिक भूमिका पर रहे हुए गृहस्थों के लिए बताये जा रहे हैं। अभी सम्यक्दर्शन और देशविरति का धर्म भी प्राप्त नहीं हुआ हो, उस भूमिका में यह सामान्य धर्म है। अपने जीवन के प्रति सजगता, अपने परिवार के प्रति कर्तव्य-भावना, सबकी सुरक्षा का खयाल, यह विशिष्ट मानवीय गुण है। यह गुण तो हर भूमिका पर आवश्यक है। साधु-जीवन में भी यह गुण नितान्त आवश्यक है। इस गुण का बीज, प्रारम्भिक विकास की भूमिका में ही होना चाहिए। आगे-आगे की विकास की भूमिकाओं में यह गुण विकसित होना चाहिए।

आचार्य भगवंत श्रद्धेय होते हैं :

भगवान महावीरस्वामी की श्रमण-परम्परा में, 'वज्रस्वामी' नाम के महान् प्रभावक आचार्य हो गये। विद्यासिद्ध महापुरूष थे। उनके पास 'आकाशगामिनी' लब्धि थी यानी कि दिव्य शक्ति थी।

एक नगर में अकाल पड़ा। लोगों को खाने के लिए अन्न नहीं मिल रहा था, बड़ी परेशानी थी। वज्रस्वामी उस नगर में पहुँचे। जैनसंघ ने आचार्यदेव से प्रार्थना की - हमें इस संकट से बचाइए। वज्रस्वामीजी ने कहा : 'आप लोग

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहें तो मैं पूरे संघ को ऐसे नगर में ले चलूँ, कि जहाँ सुकाल हो। यहाँ के घर-बार सब छोड़ने पड़ेंगे। जिसको सब कुछ छोड़कर आना हो वे चले आयें, आकाशमार्ग से ले चलूँगा।'

संघ के लोग तैयार हो गये। सबको एक बड़ी जाजम-दरी पर बिठाया और आकाशमार्ग से दूसरे नगर में पहुँचा दिया। उस नगर में सुकाल था, सबको आवास, भोजन आदि मिल गया। सबके प्राण बच गये।

जिनशासन के आचार्य पर, पूरे चतुर्विध संघ के हित की जिम्मेदारी होती है। जब कभी संघ पर कोई आपत्ति आये, आचार्य उस आपत्ति को दूर करने का भरसक प्रयत्न करें। श्रमण-जीवन की मर्यादाओं का मूलमार्ग और अपवाद मार्ग वे जानते होते हैं। जिस समय उनको जो उचित लगें, वे कर सकते हैं। उस बात में दूसरे लोगों को टीका-टिप्पणी करने की नहीं होती है। आचार्य का स्थान उतना श्रद्धेय होता था। आचार्य भी अपने विशिष्ट ज्ञान से, विशिष्ट शक्ति से, विशिष्ट उपकारों से, संघ के हृदय में श्रद्धा, आदर और बहुमान उत्पन्न करते थे। संघ-हृदय में धर्मश्रद्धा बनी रहे, इसलिए भी वे जागरुक होते थे। वर्तमानकाल की स्थिति की आलोचना मुझे नहीं करना है। वर्तमानकालीन परिस्थिति बड़ी नाजुक है, दुःखद है और चिन्ताजनक है।

उपद्रवग्रस्त स्थान का त्याग करना चाहिए, इस छठे सामान्य धर्म का विवेचन समाप्त करता हूँ, इतना विवेचन पर्याप्त है न? कल सातवें सामान्य धर्म का विवेचन करूँगा।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***सामान्य धर्म का पालन करने से अनेक प्रकार की समस्याओं का निराकरण सहज ढंग से होता है।***
- ***ऐसे व्यक्ति या विभूति का आश्रय लो कि जो तुम्हारी रक्षा-सुरक्षा कर सके।***
- ***'आश्रय' संपत्ति या विपत्ति का आधार है।***
- ***अर्थपुरुषार्थ एवं कामपुरुषार्थ साधन है, साध्य नहीं है। साध्य तो है धर्मपुरुषार्थ! साध्य को भुलाकर साधन में ही खो जाना बुद्धिमत्ता नहीं है।***
- ***अपने योग्य आश्रय प्राप्त करके उसे बराबर वफादार रहो। आश्रयभूत व्यक्ति का कभी भी विश्वासघात मत करो।***
- ***विश्वास को सम्हालना.... भरोसे को आँच नहीं आने देना बड़ी महत्त्व की बात है।***
- ***विश्वास के सहारे तो दुनिया चलती है।***
- ***विश्वासघात के जैसा अन्य कोई पाप नहीं है।***

प्रवचन : ५२

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्य श्री हरिभद्रसूरिजी ने स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में जो क्रमिक मोक्षमार्ग बताया है, उसमें सर्वप्रथम उन्होंने गृहस्थ का सामान्य धर्म बताया है। ३५ प्रकार के सामान्य धर्म बताये हैं। यदि संसार के गृहस्थ लोग इस ३५ प्रकार के सामान्य धर्म को अपने अपने जीवन में आनन्द से जीये, तो दुनिया में एक अपूर्व क्रान्ति आ सकती है, बहुत ही सुन्दर परिवर्तन आ सकता है। यह सामान्य धर्म, यदि इस देश के मानवजीवन की पद्धति बन जाये तो बहुत सारे अनिष्टों का अन्त आ जाय। असंख्य समस्याएँ सुलझ जायें।

विकास नहीं पर विनाश है चौतरफ :

परन्तु जब तक धर्म और राज्य का आपस में सम्बन्ध स्थापित नहीं हो तब तक यह कल्पना साकार नहीं हो सकती है। जब तक समाजनीति और राजनीति में 'मानवजीवन' केन्द्रबिन्दु नहीं बनेगा तब तक यह अपूर्व परिवर्तन संभव नहीं है। 'देश की प्रगति', 'राष्ट्र का विकास', 'दुनिया के साथ कदम

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मिलाना', 'औद्योगिक प्रगति....' इत्यादि मायाजाल में बेचारा मनुष्य ही खो गया है। देश की प्रगति करते-करते मनुष्य की अधोगति हो गई। राष्ट्र का विकास करते-करते मानवता का विनाश हो गया। दुनिया के साथ कदम मिलाने में पारिवारिक सुख ही खो बैठें। औद्योगिक प्रगति की मृगतृष्णा में लाखों गाँवों की बेहाली कर दी। यदि यह पागलपन पाँच-दस वर्ष और चला तो भयानक विनाश हो सकता है।

क्रान्ति की शुरूआत अपने घर से करें :

कोई बात नहीं, आप लोग चिन्ता नहीं करें। देशव्यापी क्रान्ति नहीं कर सकते, तो चिन्ता नहीं, गृहव्यापी क्रान्ति तो कर सकते हो न? अपने अपने परिवार में तो इन ३५ सामान्य धर्मों को स्थान दे सकते हो न?

क्रान्ति-परिवर्तन करने के लिए मनुष्य में सत्त्व चाहिए, साहस चाहिए! क्रान्ति के दौरान कुछ विघ्न भी आ सकते हैं, कुछ दुःख आ सकते हैं....वह सब सहन करने का होता है, उसको कुचलने का होता है। दृढ़ निर्धार, दृढ़ संकल्प होने पर यह मुश्किल नहीं है। स्वजीवन और पारिवारिक जीवन में परिवर्तन लाने का दृढ़ संकल्प कर लो। 'प्लानिंग'-आयोजन बना लो। इसलिए ऐसे विश्वसनीय समर्थ पुरुष का मार्गदर्शन लेते रहो। उनके चरणों में जीवन समर्पित कर दो।

आज यही बात करना है। सातवाँ सामान्य धर्म यही है : '**स्वयोग्यस्य आश्रयणम्!**' अपने योग्य व्यक्ति का आश्रय लेना, शरण लेना। ऐसे व्यक्ति का आश्रय लेना कि जो आपकी रक्षा कर सके! जो आपको समुचित मार्गदर्शन दे सके। वास्तव में तो यह सामान्य धर्म उस समय बताया गया है कि जिस समय भारत में राजाओं के राज्य थे। राजाओं के राज्य में बहुत संभलकर जीना पड़ता था। जो सुज्ञ, बुद्धिमान् और महत्त्वाकांक्षी लोग होते थे वे सोच-समझकर राज्याश्रय पसंद करते थे। कोई अनिवार्य नहीं था कि जिस राज्य में जन्मे, वहीं पर जीवन व्यतीत करना पड़े। जन्म हुआ हो एक राज्य में, जीवन बीते दूसरे राज्य में और मौत आये तीसरे राज्य में। ऐसा भी हो सकता था। बात इतनी ही थी कि, जिस राज्य में धर्म, अर्थ और काम - ये तीन पुरुषार्थ करने में निर्भयता बनी रहे, विशेष संपत्ति की प्राप्ति हो सके और अवसर आने पर सच्चा न्याय मिले, वही रहना चाहिए।

किस राजा के राज्य में रहना, इस बात का निर्णय चार बातों को लेकर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किया जाता था (१) धर्म, (२) कुलाचार शुद्धि, (३) प्रताप और (४) न्याय।

राजाओं के काल में, राजा किसी विशेष धर्म का पालन करते थे। कोई राजा जैन धर्म का पालन करता था तो कोई राजा जैन धर्म का पालन करता था तो कोई राजा वैदिक धर्म का पालन करता था। कोई राजा बौद्ध धर्म का पालन करता था तो कोई राजा इस्लाम का। ज्यादातर राजा धर्मान्ध होते थे, इसलिए वह स्वयं जिस धर्म का पालन करता था, उसी धर्म का पालन करने का प्रजा के लिये अनिवार्य बन जाता था। उस धर्म का पालन करने के लिए प्रजा पर दबाव डालता था। कुछ राजा परधर्मसहिष्णु भी होते थे। प्रजा को जिस धर्म का पालन करना हो, कर सकती थी। राजा का कोई आग्रह नहीं होता था। ऐसे राजा के राज्य में रहना, उपद्रवरहित होता था।

राजा यदि अपने धर्म का आग्रही हो और आप उस धर्म का स्वीकार करना नहीं चाहते हो, आप अपने ही धर्म का पालन करना चाहते हो, तो आपको उस राज्य का त्याग कर वैसे राज्य में जाना चाहिए कि जहाँ राजा सभी धर्मों के प्रति समदृष्टिवाला हो अथवा आप जिस धर्म का पालन करते हो उसी धर्म की मान्यता उस राजा की हो, वही पर जाना चाहिए। तो ही आप निर्भयता से धर्म-आराधना कर सकोगे।

अशुद्ध कुलाचारों को त्यागना चाहिए :

इस दृष्टि से वर्तमानकाल की राज्य-व्यवस्था बहुत ही अच्छी है। भारत के संविधान में सभी धर्मों को मान्यता दी गई है। जिस मनुष्य को जिस धर्म का पालन करना हो, कर सकता है। अपने अपने धर्म का प्रसार-प्रचार भी कर सकता है। अपने धर्म की विचारधारा को अभिव्यक्त कर सकता है। भारत के किसी भी राज्य में, प्रदेश में किसी भी धर्म का प्रचारक जा सकता है और प्रजा के सामने अपने धर्म की मान्यताओं को प्रस्तुत कर सकता है। धर्मगुरुओं का भी परस्पर झगड़ा नहीं रहा। धर्म को लेकर जो युद्ध होते थे वे भी नहीं होते।

राजाओं के कुलाचार देखे जाते थे। कुलाचार शुद्ध है या अशुद्ध, वह देखा जाता था। यदि अशुद्ध कुलाचार देखे जाते तो उस राजा की शरण छोड़ दी जाती थी। वैसे राजा की शरण नहीं ली जाती थी। ऐसे भी राजा होते थे कि जिनके राज्य में माताएँ और बहनें सलामत नहीं रहती थीं। कोई रूपवती स्त्री को राजा देखता, उसको यदि पसंद आ जाती तो सैनिकों को भेजकर बुला लेता और बलात्कार करता! अथवा अपनी रानी बना लेता! यह हुआ अशुद्ध

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कुलाचार। वैसे, किसी प्रजाजन के पास ज्यादा धन-संपत्ति देखता तो लूट लेता। सारी संपत्ति छीन लेता। इसलिए संपत्तिवाले, राजा से और राजा के सेवकों से डरते रहते। अपनी संपत्ति को छुपाकर रखते।

संपत्ति का प्रदर्शन खतरनाक है :

राजाओं के समय की एक कहानी है। एक राजा था, सदाचारी था, परन्तु संपत्ति का लोभी था। नगरश्रेष्ठि के साथ राजा की मित्रता थी। नगरश्रेष्ठि के पास बहुत संपत्ति थी। श्रेष्ठि के मन में एक दिन विचार आया : 'राजा मेरा मित्र है, मित्र से कोई बात छुपानी नहीं चाहिए। मेरी संपत्ति उसको बता देनी चाहिए। मेरी संपत्ति देखकर राजा खुश हो जायेगा और राजसभा में मेरी इज्जत भी बढ़ जायेगी।'

श्रेष्ठि ने घर आकर अपने विचार, परिवारवालों के सामने रखे। सेठानी, चार लड़के और चार पुत्रवधुओं के सामने जब सेठ ने बात कही, सब खुश हो गये, परन्तु सबसे छोटी बहू मौन रही। सेठ ने उसको पूछा : 'बेटी, तू क्यों कुछ नहीं बोलती?' पुत्रवधू ने कहा : 'पिताजी, मुझे ठीक नहीं लगता है। राजा को अपनी संपत्ति नहीं बतानी चाहिए। परन्तु यदि आप सभी की इच्छा है, तो मेरी कोई नाराजगी नहीं है।'

सेठ ने कहा : 'राजा मेरे मित्र हैं। मेरी संपत्ति देखकर उनकी नीयत बिगड़ने का भय नहीं है। राजा तो मेरी अपार संपत्ति देखकर खुश-खुश हो जायेंगे।' छोटी पुत्रवधू मौन रही। निर्णय लिया गया कि महाराजा को सपरिवार भोजन के लिए निमंत्रित किया जाय और संपत्ति के भंडार बताये जायें।

नगरश्रेष्ठि ने राजा को भोजन का निमंत्रण दिया। राजा ने स्वीकार कर लिया। श्रेष्ठि ने राजा का भव्य स्वागत किया। परिवार के साथ राजा को उत्तम भोजन कराया। भोजनादि से निवृत्त होने पर सेठ ने राजा से प्रार्थना की : 'महाराजा, आपने मेरे घर पर पधारने की कृपा की है तो मेरी तुच्छ संपत्ति को भी देख लें। भूमिगृह में पधारें।' राजा को लेकर सेठ भूमिगृह में गये, जहाँ सेठ ने अपनी अपार संपत्ति रखी थी। एक कमरा चाँदी से भरा हुआ था, एक कमरा सोने से भरा हुआ था और एक कमरा हीरे-मोती और पन्ने से भरा हुआ था। राजा, सेठ की संपत्ति देखकर मुग्ध हो गया। 'सेठ, तुम्हारे पास इतनी सारी संपत्ति है? मेरे राज्य की तिजोरी में भी इतनी संपत्ति नहीं है।' सेठ ने कहा : 'महाराजा, आपकी कृपा से ही तो यह सब है।' राजा खुश हुआ और

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परिवार के साथ अपने महल में चला गया। सेठ का परिवार भी प्रसन्न हो गया था। नगर में भी सेठ की प्रशंसा होने लगी थी।

राजा की आँखों के सामने नगरश्रेष्ठि के वे तीन कमरे आते रहते हैं। 'यदि यह संपत्ति मेरी तिजोरी में आ जाय तो? मैं भारत का सबसे बड़ा राजा बन जाऊँ। सैन्य बढ़ा सकूँ, शस्त्र बढ़ा सकूँ और दूसरे राज्यों पर विजय पा सकूँ। सेठ क्या करेगा इतनी सारी संपत्ति का? परन्तु उसकी संपत्ति मेरे पास कैसे आ सकती है? यदि छीन लूँ तो तो राज्य में.... प्रजा में मेरी बदनामी होगी। यदि सेठ के पास से माँग लूँ तो सीधे सीधे तो वह देनेवाला नहीं है। क्या करूँ? कुछ समझ में नहीं आता है।'

संध्या के समय राजा विचारमग्न होकर बैठा था। वहाँ उसका महामंत्री पहुँचा मिलने के लिए। राजा को विचारमग्न देखकर महामंत्री ने पूछा : 'महाराजा, आज ऐसी कौन-सी चिन्ता है आपको, कि आप इतने सोच-विचार में पड़ गये हैं?' राजा ने मंत्री को अपने मन की बात बता दी। महामंत्री के मन में राज्य का या प्रजा का हित बसा ही नहीं था। वह तो अपना स्वार्थ साधने में तत्पर था। राजा की बात न्याययुक्त हो या अन्याययुक्त हो, महामंत्री राजा की बात को मानकर चलता था। राजा भी महामंत्री की ही बात मानता था।

महामंत्री ने राजा से कहा : 'महाराजा, नगरश्रेष्ठि की संपत्ति राज्य के भंडार में आ जायेगी और आपकी बदनामी नहीं होगी, वैसा उपाय मैंने मन में सोच लिया।' राजा ने मंत्री से कहा : 'जल्दी बताओ वह उपाय, जिससे मेरे मन को शान्ति हो।'

मंत्री ने कहा : 'महाराजा, कल प्रातः जब नगरश्रेष्ठि राजसभा में आये तब आप उनको कहना कि 'सेठ, कल आपकी संपत्ति देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई है। मेरे राज्य में आप जैसे कुबेर भंडारी रहते हैं, इस बात का मुझे गर्व है। परन्तु मेरे मन में एक दूसरा विचार आया...।' नगरश्रेष्ठि प्रशंसा सुनकर खुशी से झूम उठेगा। तत्काल वह भी बोलेगा, 'महाराजा, दूसरा कौन-सा विचार आया, फरमाइये...।' तब आप कहना : 'अपार संपत्ति का मालिक बुद्धिमान् होना चाहिए। बुद्धिमान् व्यक्ति ही अपनी संपत्ति की सुरक्षा कर सकता है। हालाँकि आप बुद्धिमान् हैं, फिर भी मैं आपकी बुद्धि की परीक्षा करना चाहता हूँ। आप मेरे दो प्रश्नों का उत्तर देंगे, सही उत्तर देंगे तो मैं मानूँगा कि आप बुद्धिमान् हैं। यदि सही उत्तर नहीं देंगे तो मानूँगा कि आप बुद्धिमान् नहीं हैं,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसलिए आप अपनी संपत्ति की सुरक्षा नहीं कर पाओगे। अतः आपकी संपत्ति राज्य की तिजोरी में जमा हो जायेगी।'

राजा तो मंत्री का उपाय सुनकर नाच उठा। राजा ने कहा : 'वे दो प्रश्न तो बता दो।' मंत्री ने कहा : 'पहला प्रश्न आप पूछना कि : दुनिया में ऐसा कौन-सा तत्त्व है कि जो निरंतर बढ़ता जाता है? और दूसरा प्रश्न है : दुनिया में ऐसी कौन-सी वस्तु है कि जो प्रतिक्षण घटती जाती है?' बस, ये दो प्रश्न आप पूछना।

सेठ इन दो प्रश्नों के प्रत्युत्तर नहीं दे पायेगा! इतने गहन और गंभीर हैं ये प्रश्न। प्रश्नों का उत्तर वह दे नहीं पायेगा और उसकी संपत्ति राज्य की तिजोरी में आ ही गई, समझ लो!'

राजा तो कल्पना की आँखों से सेठ की संपत्ति को अपने भंडार में देखने लगा! मानव स्वभाव की यही तो कमजोरी है! भविष्य के स्वप्नों में खुश होना! राजा ने मान लिया कि मंत्री के बताये हुए प्रश्नों के उत्तर नगरश्रेष्ठि नहीं दे पायेगा और सेठ की सारी संपत्ति उसको मिल जायेगी! मंत्री की भी यही कल्पना होगी कि राजा को सेठ की संपत्ति मिल जायेगी तो मुझे भी राजा मालामाल कर देगा!

दूसरे दिन राजसभा में जब नगरश्रेष्ठि आये, राजा ने महामंत्री के कहे अनुसार, नगरश्रेष्ठि से बात की और दो प्रश्न पूछ लिये। नगरश्रेष्ठि तुरन्त ही बात का मर्म समझ गये। सेठ ने कहा : 'महाराजा, मुझे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए चौबीस घंटे का समय देने की कृपा करें। मैं कल राजसभा में आपके प्रश्नों का उत्तर प्रस्तुत कर दूँगा।' राजा ने स्वीकृति दे दी, राजसभा का विसर्जन हुआ। नगरश्रेष्ठि की खुशी का भी विसर्जन हो गया था। 'राजा की नीयत बिगड़ गई है....मेरी सारी संपत्ति हड़पने को तैयार हो गया है और इस कार्य में राजा को महामंत्री का सहयोग भी मिला हुआ लगता है, क्योंकि मेरे साथ बात करते करते राजा महामंत्री के सामने देखा करते थे। अब दूसरा कोई उपाय, संपत्ति को बचाने का मुझे तो नहीं सूझता है। इन दो प्रश्नों के उत्तर भी तो मेरे दिमाग में स्फुरायमान नहीं हो रहे हैं। घर जाऊँ, घरवालों के सामने सारी बात रख दूँ। यदि कोई बता देगा प्रश्न के उत्तर, तब तो ठीक है, इस समय बच जाऊँगा।' सेठ के मन में कैसा पछतावा हो रहा होगा, राजा को अपनी संपत्ति बताने का? परन्तु अब क्या करें? राजा के विषय में अति विश्वास ही सेठ के दुःख का मूल था न!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

छोटी बहू ने रास्ता बताया :

सेठ घर पर आये, मुँह पर उदासी छायी हुई थी। भोजन भी नहीं किया सेठ ने। परिवार को इकट्ठा कर के सारी बात बता दी, जो राजसभा में हुई थी। सब एक-दूसरे के मुँह देखने लगे। सबको आपत्ति के काले घनघोर बादल नजर आने लगे। सेठ ने पूछा : 'बोलो, महाराजा के दो प्रश्नों के उत्तर किसी को आते हैं?' सबकी बुद्धि कुंठित हो गई थी, किसी को कुछ सूझ नहीं रहा था। सब ने आपना-अपना सिर हिलाकर मना कर दिया। सबसे छोटी पूत्रवधू मौन थी। नगरश्रेष्ठि ने उससे कहा : 'बेटी, तेरी बात मैंने नहीं मानी और यह बड़ी आपत्ति आयी....। बेटी, क्या राजा के दो प्रश्नों के उत्तर हैं तेरे पास?' छोटी बहू ने कहा : 'पिताजी, आप चिन्ता नहीं करें, इन दो प्रश्नों के जवाब मैं स्वयं राजसभा में आकर दे दूँगी। सही जवाब दे दूँगी!'

सेठ ने कहा : 'परन्तु राजा ने मेरे पास प्रश्न के उत्तर माँगे हैं न?' बहू ने कहा : 'आप कह देना महाराजा को कि ऐसे छोटे-छोटे प्रश्नों के उत्तर मैं नहीं देता, ऐसे प्रश्न के उत्तर तो मेरी सबसे छोटी पुत्रवधू दे देगी! आपके राजसभा में जाने के बाद मैं राजसभा में आऊँगी।'

दूसरे दिन नगरश्रेष्ठि राजसभा में पहुँचे। वे प्रसन्नमुद्रा में थे। राजा ने कहा : 'सेठजी, मेरे प्रश्नों के उत्तर लाये क्या?' सेठ ने कहा : 'महाराजा, आपको प्रश्न के उत्तर अभी मिल जायेंगे। मेरी छोटी पुत्रवधू आपके प्रश्नों के उत्तर दे देगी।' राजा ने कहा : 'आप नहीं दोगे उत्तर क्या?' सेठ ने कहा : 'ऐसे छोटे-छोटे प्रश्नों के उत्तर मैं नहीं देता हूँ! कभी मेरे लड़के देते हैं, कभी मेरे लड़कों की बहुएँ दे देती हैं।'

राजा की अक्ल ठिकाने आ गई :

राजा ने मंत्री के सामने देखा। मंत्री सेठ के सामने देख रहा था उतने में तो छोटी पुत्रवधू ने राजसभा में प्रवेश किया। सारी राजसभा उसके सामने देखने लगी। एक हाथ में दूध का प्याला और दूसरे हाथ में हरा घास लिये पुत्रवधू राजसभा में आयी थी! उसने महाराजा को नमन किया और दूध का प्याला राजा के सामने रखा। हरा घास मंत्री के सामने रखा। राजा आश्चर्य से देखता रहा और पूछा : 'अरे बेटी, यह तूने क्या किया? तू क्या कहना चाहती है?'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'महाराजा, पहले आप मुझे और हमारे सारे परिवार को अभयदान देने की कृपा करें, बाद में मैं कुछ भी कहूँगी,' पुत्रवधू ने कहा। राजा ने तुरन्त ही कहा: 'अभयदान है तुम सबको। कहो, जो कहना चाहती हो।' अब पुत्रवधू निर्भय हो गई और बोली : 'महाराजा, यह दूध का प्याला आपके लिए है, क्योंकि छोटे बच्चे को दूध पिलाया जाता है, तब जाकर उसकी बुद्धि विकसित होती है! और...' राजा बीच में ही चिल्लाया : 'तू मुझे छोटा बच्चा मानती है क्या? और मेरी बुद्धि को अविकसित कहती है क्या?' जरा भी घबराये बिना छोटी बहू ने कहा : 'महाराजा, यदि आप छोटे बच्चे जैसे नहीं होते तो इस मंत्री की सिखायी हुई बातें आप नहीं सीखते! आपकी बुद्धि निर्मल और विकसित होती तो आप अपने मित्र की संपत्ति हड़पने का विचार नहीं करते!'

राजा ने पूछा : 'परन्तु मंत्री के सामने घास क्यों रखा?'

पुत्रवधू ने तुरन्त जवाब दिया : 'क्योंकि वह बैल जैसा है। बैल नहीं होता, बैल जैसी बुद्धि नहीं होती तो क्या वह आपको ऐसी गलत राय देता क्या? मित्रद्रोह का पाप करने में सहायता करता क्या? मंत्री तो ऐसा होना चाहिए कि कभी राजा अपने कर्तव्यमार्ग से विचलित होता हो तो उस समय सच्ची राय दें। अपनी नौकरी की भी चिन्ता नहीं करे।'

सारी राजसभा में सन्नाटा छा गया। मंत्री के मुँह पर तो काले बादल छा गये थे। सेठ भय, हर्ष, चिन्ता आदि की मिश्र भावना से भरे जा रहे थे। राजा स्वस्थ था, प्रसन्न था। सभाजन पुत्रवधू की बातें सुनकर हर्ष से स्तब्ध थे। ऐसी खरी-खरी बातें सुनानेवाला व्यक्ति राजसभा में पहला पहला आया था। और वह भी एक लड़की!

राजा ने कहा : 'बेटी, मेरे दो प्रश्नों के उत्तर तू देनेवाली है क्या?' 'जी हाँ, आपके पहले प्रश्न का उत्तर : निरन्तर बढ़नेवाला तत्त्व है तृष्णा! सही उत्तर है? पूछ लो आपके महामंत्रीजी को! दूसरे प्रश्न का उत्तर है : निरन्तर घटनेवाला तत्त्व है आयुष्य! सही उत्तर है? यह भी पूछ लो महामंत्रीजी को!'

राजा ने कहा : 'बेटी, तेरे दोनों उत्तर सही हैं। और जो कुछ तूने मेरे लिए और मंत्री के विषय में कहा, वह भी सही है। मैं अभी ही मंत्रीपद से उसको हटा देता हूँ और घोषणा करता हूँ कि भविष्य में कभी भी मैं प्रजा का धन लेने का प्रयत्न नहीं करूँगा।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सुरक्षा के लिए समर्थ का आश्रय लो :

यह तो ठीक था कि राजा सरल हृदय का था इसलिए पुत्रवधू की बात का अर्थ सीधा लिया। अन्यथा अनर्थ कर दे। राजाओं में धार्मिकता है या नहीं, यदि है तो उसकी किस धर्म में श्रद्धा है, यह देखना आवश्यक था, राजाशाही के जमाने में।

दूसरी बात देखने की होती थी शुद्ध व्यवहार की, शुद्ध कुलाचारों की। आश्रय अच्छा हो तो आश्रित सलामत! तीसरी बात देखने की होती थी प्रताप की, प्रभाव की, पराक्रम की। राजा पराक्रमी हो तो ही प्रजा की, शत्रुओं से रक्षा कर सके। यदि पराक्रमी नहीं हो तो प्रजा की सुरक्षा नहीं कर सके, प्रजा का विनाश हो जायं। प्रजा की संपत्ति का विनाश हो जायं। प्रजा को वैसे राजा का आश्रय लेना चाहिए कि जो उसकी रक्षा करने में समर्थ हो, यह है गृहस्थ का सामान्य धर्म। ऐसा आश्रय लेना कि जो आश्रित की अच्छी तरह रक्षा कर सके। गृहस्थ-जीवन में आश्रय बड़ा महत्त्व रखता है। संपत्ति-विपत्ति का आधार होता है आश्रय।

आश्रयभूत राजा वगैरह जिस प्रकार धार्मिक होने चाहिए, शुद्ध कुलाचार वाले होने चाहिए, पराक्रमी होने चाहिए, वैसे न्यायी भी होने चाहिए। बिना पक्षपात के, राजा वगैरह न्याय करनेवाले होने चाहिए। अन्यायी राजा का राज्य छोड़ देना चाहिए।

सभा में से : वर्तमानकाल में जो सत्ताधीश बनते हैं उनमें तो ये सारी बातें दिखती ही नहीं! कहाँ है धार्मिकता? कहाँ है न्याय?

महाराजश्री : मैंने आपको पहले ही बताया कि जब से राजाओं के राज्य गये, राज्य-व्यवस्था ही बदल गई, तब से यह बात देखने को ही नहीं रहीं। आज भारत एक सार्वभौम साम्राज्य है। केन्द्र सरकार के नियम सारे भारत पर शासन करते हैं। भारतीय संविधान के विरूद्ध कोई राज्य भी नियम नहीं बना सकता। 'स्वयोग्य आश्रय' की खोज करने की आज जरूरत रही नहीं है! यदि भारत में आप सुरक्षित नहीं हैं तो भी आप कहाँ जाओगे? तो भी कुछ बुद्धिमान् लोग अपनी संपत्ति की सुरक्षा के उपाय ढूँढ़ निकालते हैं।

सभा में से : विदेश की बैंकों में रुपये जमा करा लेते हैं!

महाराजश्री : और विदेश में जाकर बस भी जाते हैं न? जिस व्यक्ति का ध्येय धर्मपुरुषार्थ नहीं होता है वे लोग ईरान-इराक और मिस्त्र जैसे इस्लामिक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

देशों में भी जाकर बस जाते हैं! अमेरिका, ब्रिटन जैसे पश्चिम के देशों में तो लाखों भारतीय लोग जाकर बस गये हैं, परन्तु उन लोगों का लक्ष्य मात्र अर्थपुरुषार्थ और कामपुरुषार्थ ही होता है। ढ़ेर सारे रुपये कमाना और बस, भोग-विलास करना!

मानवजीवन का लक्ष्य धर्मपुरुषार्थ होना चाहिए :

यह बात कभी नहीं भूलना कि मानवजीवन में हमारा साध्य है धर्मपुरुषार्थ! अर्थ और काम तो मात्र साधन के रूप में चाहिए। साध्य को भूलकर, साधन में लीन नहीं हो जाना चाहिए। अपने योग्य आश्रय खोजना भी एक साधन ही है। अच्छा आश्रय हो तो तीनों पुरुषार्थ सुचारु रूप से हो सकते हैं। निर्भयता और निश्चिंतता रह सकती है।

बम्बई में मेरे पूर्वपरिचित एक भाई रहते हैं। मैं जानता हूँ कि वे २५-३० साल से नौकरी कर रहे हैं। परन्तु कभी किसी बात को लेकर उन्हें फरियाद करते मैंने नहीं देखा। एक दिन मैंने उनसे पूछा : 'एक ही जगह २५-३० साल से नौकरी करने में तुम्हारी बचत क्या होगी?' उसने मुसकराते हुए कहा : 'बचत की मुझे आवश्यकता ही नहीं रहती है न? सेठ ऐसे मिले हैं कि मेरा कोई भी काम हो तो बन जाता है। सेठ ने मुझे कह दिया है : 'तुम किसी प्रकार की चिन्ता नहीं करना। जब ज्यादा रुपये चाहिए, मेरे से ले लेना। और मैं दस-बीस दफे उनसे रूपये ले आया हूँ! मेरे नाम वे रूपये लिखते भी नहीं!'

जिस सेठ के वहाँ यह भाई नौकरी करते हैं, उस सेठ को भी मैं जानता हूँ। एक दिन मैंने सेठ से पूछा था : 'ये भाई आपके पास २५ वर्ष से नौकरी करते हैं.... कैसे हैं?' सेठ ने कहा : 'मैं उसको मेरा चौथा लड़का ही मानता हूँ। हालाँकि मुझे मेरे लड़कों पर जितना विश्वास नहीं है उतना विश्वास उस लड़के पर है। बहुत ही निष्ठावान् और प्रामाणिक लड़का है।'

पहले स्वयं योग्य बने फिर आश्रय खोजे :

सुयोग्य आश्रय पाने के लिये, व्यक्ति को सुयोग्य बनना आवश्यक होता है। आश्रय देनेवाले को धोखा दें, आश्रय को ही काटने का प्रयत्न करें... तो समझना कि गृहस्थोचित सामान्य धर्म से वह वंचित है और विशेष धर्म करने के लिये सुयोग्य नहीं है। राजस्थान की एक घटना है। एक भाई, जो कि ग्रेज्युएट थे, परन्तु बेकार थे। उसके रिश्तेदार के एक मित्र बंबई में अच्छे व्यापारी थे। रिश्तेदार ने इस लड़के को उनके वहाँ बंबई भेजा। उस व्यापारी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ने इस लड़के पर ज्यादा विश्वास कर लिया। क्योंकि यह पढ़ा लिखा था, बोलने में मीठा था और कार्यदक्ष था। धीरे धीरे सेठ ने उस पर संपूर्ण विश्वास कर लिया। अपने गुप्त व्यापार की 'डायरी' भी उसको बता दी। कभी कभी वे अपनी तिजोरी की चाबी भी उसको सौंपने लगे।

इस लड़के की बुद्धि बिगड़ी। उसने सेठ का 'ब्लेकमेलिंग' करने का सोचा। गुप्त व्यापार की डायरी लेकर वह अपने गाँव पहुँच गया। सेठ ने बंबई में उसको खोजा, परन्तु राजस्थान से समाचार मिल गया कि वह मिस्टर अपने गाँव में पहुच गये हैं। सेठ बेचारे बड़े घबराये हुए उसके गाँव पहुँचे। जिस मित्र के द्वारा इसको नौकरी में रखा था, उस मित्र को मिले और सारी बात बतायी। उस मित्र के प्रयत्न से वह डायरी वापस मिल गई और सेठ निश्चिंत होकर वापस बंबई लौटे।

जिसके पास रहना है, जिससे रुपये कमाने हैं, जिसके सहारे जीवन जीना है, उस आश्रयभूत व्यक्ति के साथ कभी भी धोखाबाजी नहीं करनी चाहिए। विश्वासघात नहीं करना चाहिए। आश्रय को तोड़नेवाला वास्तव में अपना ही अहित करता है। अपने पैरों पर ही कुल्हाड़ी मारता है। ऐसे व्यक्ति गृहस्थ जीवन में सफलता नहीं पा सकते। ऐसे व्यक्ति विशिष्ट धर्मपुरुषार्थ भी नहीं कर सकते। ऐसे लोग, स्व-पर का अहित करते हैं और दुःखी बनते हैं।

अपने योग्य आश्रय को पाना और उस आश्रय के प्रति अपने कर्तव्यों को निभाना, यह गृहस्थ जीवन का महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है। इस कर्तव्य का समुचित पालन हो तो आश्रय देनेवाले निश्चिंतता से आश्रय दे सकेंगे और निराश्रितों को आश्रय मिलते रहेंगे।

आश्रय देनेवाले का विश्वासघात मत करो :

आज तो ज्यादातर लोगों ने आश्रय पाने की योग्यता खो दी है! आश्रय की ही जड़ काटने का काम बढ़ गया है। विश्वासघात का पाप व्यापक बन गया है। इसलिए आज आश्रय देने में समर्थ लोग भी किसी को आश्रय देना पसन्द ही नहीं करते हैं।

अच्छा व्यक्ति समझकर, चार-पाँच महीने के लिऐ मकान दिया रहने को, बस, हो गया काम पूरा! मकान खाली करने का नाम नहीं! मकानमालिक से लड़ने को तैयार!

अच्छा व्यक्ति समझकर दस-बीस हजार रुपये दिये एक साल के लिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

साल बीत जाने पर भी रुपये वापस लौटाने का नाम नहीं। माँगने जायें तो लड़ने को तैयार! रुपये लौटाने का नाम नहीं!

अच्छा व्यक्ति समझकर घर में रखा! सुख-सुविधाएँ दीं। अपना समझकर रखा.... परन्तु उसने घर की लड़कियों के साथ ही दुर्व्यवहार किया!

कहिए, ऐसी घटनाएँ देखने के बाद, किसी को भी आश्रय देने की इच्छा होगी? सुयोग्य आश्रय, अयोग्य-कुपात्र व्यक्ति पा नहीं सकता है, यदि पा भी ले तो निभा नहीं सकता है। स्वयोग्य आश्रय पाना और वफादारी निभाना, गृहस्थ जीवन का सातवाँ सामान्य धर्म है। इस धर्म का पालन करके मानवता को उज्ज्वल करे, यही मंगल कामना।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***गुणीजनों के साथ संबंध गाढ़ बनाये रखना चाहिए।***
- ***तुम यदि गुणवान होओगे तो ही दुनिया के दिल में स्थान जमा सकोगे।***
- ***जो सहृदय नहीं होता है वह कभी महान् नहीं हो सकता है!***
- ***कृतज्ञता की कोख में समर्पणभाव पैदा होता है.... पलता है और पुष्ट बनता है।***
- ***दानी, तपस्वी इत्यादि गुणीजनों का बहुमान करके गुणों का प्रसार करना चाहिए।***
- ***दोषदर्शी नहीं अपितु गुणदृष्टा बनो।***
- ***दुनिया पैसेवालों से नहीं वरन् गुणवालों से प्यार करती है! लोगों के दिल में स्थान प्राप्त करना बड़ी अहमियतभरी बात है!***
- ***जिस दोष या गुण को हम सम्मानित करेंगे वह दोष या गुण हमारे भीतर में फैलने लगेगा।***
- ***गुणों से प्रेम करोगे तो भीतर गुणों का खजाना भरेगा।***

प्रवचन : ५३

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्य श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में सर्वप्रथम गृहस्थ जीवन का सामान्य धर्म बता रहे हैं। आठवाँ सामान्य धर्म है प्रधानसाधुपरिग्रहः। श्रेष्ठ सज्जन पुरुषों का स्वीकार करना।

गृहस्थ दिन-रात अपने घर में तो बैठा नहीं रहता। कभी वह किसी के घर जाता है, कभी कोई उसके घर आता है। कभी कोई ऐसी विशेष बात बनती है तो किसी की राय लेता है....किसी के पास सुख-दुःख की बात करता है।

आपकी पसंदगी क्या है? :

दुनिया यह देखती है, सज्जन पुरूष यह देखते हैं कि आप किसके घर आते-जाते हो। किसके पास आपका बैठना-उठना है और किसके साथ आप घूमते-फिरते हो। आपके व्यक्तित्व का नाप इससे निकालती है दुनिया। यदि आप किसी शराबी के साथ ज्यादा बातें करते रहते हो, उनके घर जा-जाकर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घंटों तक बैठे रहते हो, तो दुनिया की दृष्टि में यानी सज्जनों की दृष्टि में आप गिर जाओगे। आप शराब नहीं पीते हैं, परंतु शराबी की दोस्ती करते हैं, तो आपके चरित्र पर काला धब्बा तो अवश्य लगता है। संभव है कि शराबी की दोस्ती आपको एक दिन शराबी भी बना दे।

आप अपनी प्रसिद्धि दुनिया में किस प्रकार की चाहते हो? आपकी दुनिया यानी आपका परिवार, आपका समाज, आपका गाँव, आपका शहर....। उसमें आप अपनी ख्याति किस प्रकार की चाहते हैं?

सभा में से : हम लोग तो 'श्रीमन्त' के रूप में प्रसिद्धि चाहते हैं!

महाराजश्री : क्योंकि आप मानते हो कि श्रीमन्त-धनवान् की ही संसार में कदर होती है, धनवान् व्यक्ति कितने भी बुरे काम करता हो तो भी दुनिया कुछ नहीं बोलती है। परन्तु सर्वथा ऐसा नहीं है। धनवानों की बुराइयाँ भी प्रकाशित होती हैं, उनकी भी बेइज्जती होती है, यदि उनका वैसा बुरा आचरण होता है तो। आज तो जमाना ही बदल गया है। धनवान् क्या, देश का बड़े से बड़ा मंत्री भी क्यों न हो? यदि वे भी कोई गलत काम करते हैं तो अखबारों में तुरन्त उनकी तीव्र आलोचना होती है।

दुनिया गुणवानों का आदर करती है :

एक बात याद रखना, दुनिया धनवानों से प्यार नहीं करती है, गुणवानों से प्यार करती है। दुनिया का प्यार एक बहुत बड़ी संपत्ति है, जिसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता, वैसी अमूल्य संपत्ति है, यदि आप समझें तो! 'मुझे गुणवान् के रूप में प्रसिद्ध होना है।' ऐसा आपका संकल्प-दृढ़ संकल्प होना चाहिए। हाँ, यदि पुण्योदय से श्रीमन्त बन जाओ तो चिन्ता नहीं करना। श्रीमन्त हो और गुणवान् हो तो दुनिया उसके प्रति विशेष प्रेम करती है। श्रीमन्त हो परन्तु विनम्र हो, श्रीमन्त हो और उदार हो, श्रीमन्त हो परन्तु निरभिमानी हो...तो दुनिया के हृदय में वह बस जाता है। श्रीमन्त हो और परमात्मा का भक्त हो, सद्गुरुओं का सेवक हो, गरीबों का मित्र हो, अनाथों का नाथ हो... तो दुनिया में उसकी श्रेष्ठ प्रतिष्ठा प्रस्थापित होती है।

दुनिया की निगाहों में 'गुणवान्' के रूप में प्रतिष्ठित होने का आत्मसाक्षी से निर्णय करोगे तब ही गुणवान् पुरूषों का संग करने का सोचोगे। तब ही गुणवान् पुरुष की खोज करोगे। हाँ, गुणवान् पुरुषों की खोज करनी पड़ती है। परख करनी पड़ती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुणीजन के लक्षण - सौजन्य, कृतज्ञता, दाक्षिण्य :

सभा में से : कैसे जाने कि 'यह पुरुष गुणवान् है?' गुणवानों की कोई निशानी?

महाराजश्री : जिस व्यक्ति में तीन बातें देखो, उसको गुणवान् मान सकते हो। जिसमें सौजन्य हो, दाक्षिण्य हो और कृतज्ञता हो, बस, ज्यादा देखने की जरूरत नहीं है। ये तीन बातें हों तो समझ लेना कि यह गुणवान् व्यक्ति है। हालाँकि, यह तो समझ ही लेना कि वह व्यक्ति निर्व्यसनी तो होना ही चाहिए। मांसभक्षण, मदिरापान, जुआ, शिकार, परस्त्रीगमन, वेश्यागमन जैसे पाप तो उस व्यक्ति में होने ही नहीं चाहिए। वह व्यक्ति हिंसक, असत्यवादी, चोर और लोभी नहीं होना चाहिए। यानी बात-बात में हत्या कर देनेवाला नहीं होना चाहिए, बात बात में असत्य-झूठ बोलनेवाला नहीं होना चाहिए, चोर के रूप में प्रसिद्धि नहीं होनी चाहिए और ज्यादा लोभी नहीं होना चाहिए। ऐसा गुणवान् व्यक्ति खोज कर उसके साथ सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए।

सौजन्य-सहृदयता महान् गुण है। वास्तव में जो महापुरुष होते हैं उनमें यह गुण होता ही है। यह गुण जिसमें नहीं हो, वह कभी महापुरुष नहीं बन सकता है।

महाकवि निरालाजी की निराली सहृदयता :

महाकवि निरालाजी के जीवन की एक घटना है। यूँ भी निरालाजी अकिंचन जैसे ही थे। कोई दुःखी, कोई गरीब को देखकर उनसे रहा न जाता.... उनका सौजन्य उस व्यक्ति का दुःख दूर करने के लिए प्रेरित करता। ज्येष्ठ महिना था, तेज धूप गिर रही थी... मध्याह्न का समय था। निरालाजी अपने मकान के द्वार पर खड़े थे। उन्होंने रास्ते पर एक कृशकाय वृद्ध पुरुष को देखा। वृद्ध का देह मात्र हड्डियों का ढाँचा था।

सिर पर लकड़ियों का बड़ा गट्ठर उठाया हुआ था। निराला दौड़े उस वृद्ध के पास, उसके कान में कुछ कहा और उसका लकड़ियों का गट्ठर उठाकर, उस वृद्ध को अपने घर में ले आये। वृद्ध को बिठाया, लकड़ियों का गट्ठर उसके पास रखा और वे घर के भीतर चले गये।

कुछ दिन पूर्व ही निरालाजी के कुछ मित्र, निरालाजी के लिए बाजार से कुछ वस्त्र और जूते खरीदकर लाये थे। निरालाजी जूते और वस्त्र लेकर बाहर आये और उस वृद्ध को कहने लगे : 'बाबा, यह पहन लो....।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वह बूढ़ा आदमी तो स्तब्ध रह गया। निरालाजी के सामने ही देखता रहा। क्या बोलना, उसकी समझ में नहीं आ रहा है। उसने कहा : 'भैया, कोई जान-पहचान नहीं....' उसको बीच में ही बोलता रोकते हुए निरालाजी बोले : 'बाबा, मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूँ, मेरे करोड़ों भाइयों में से तुम एक हो।' और वे स्वयं बैठकर उस वृद्ध को जूते पहनाने लगे।

निरालाजी के सौजन्य से, सहृदयता से और उदार मन के कारण ही उनके अनेक मित्र थे और वे निरालाजी की चिंता करते थे। निरालाजी के कारण उन मित्रों की भी दुनिया में प्रशंसा होती थी। अच्छे पुरुष के परिचय से, परिचय करनेवालों की भी प्रशंसा दुनिया करती है।

सम्राट संप्रति की कृतज्ञता :

जैसे सौजन्य बड़ा गुण है, वैसे कृतज्ञता भी बहुत बड़ा गुण है। उपकारी का उपकार नहीं भूलना, उपकारी के प्रति कृतज्ञभाव बनाये रखना और उपकार का बदला उपकार से चूकाने की भावना रखना, एक बहुत बड़ा गुण है। सम्राट संप्रति जो कि महान् अशोक का पौत्र था, अपने महल के झरोखें में बैठा था। राजमार्ग पर लोगों की चहल-पहल देख रहा था। वहाँ उसने कुछ साधुपुरुषों को रास्ते पर गुजरते देखा। सबसे आगे जो साधुपुरुष चल रहे थे वे प्रभावशाली थे.... प्रतिभावंत थे। सम्राट संप्रति उनको देखता ही रहा....उनके मन में 'मैंने इन महापुरुष को कहीं पर देखा है, मैं इनको जानता हूँ, याद नहीं आता कि कहाँ मैंने देखा है....।' विचारों का काफिला चला और अचानक पूर्वजन्म की स्मृति हो आई। यानी सम्राट संप्रति अपने पूर्वजन्म को देखने लगे! अचानक उसके मुँह से चीख निकल पड़ी : 'ओ गुरुदेव!' और संप्रति शीघ्र महल से नीचे उतर कर, राजमार्ग पर जहाँ आचार्यदेव आर्य सुहस्ति खड़े थे, वहाँ पहुँच गया और साष्टांग दंडवत् प्रणाम किया!

आँखो में हर्ष के आँसू छलक रहे थे।

हृदय में अपूर्व भक्ति का सागर उछल रहा था!

'गुरुदेव, मुझे पहचाना?'

'हाँ, वत्स, तुझे पहचान लिया! तू मेरा शिष्य! तू पूर्वजन्म में मेरा शिष्य था!'

'गुरुदेव, इस महल में पधारें....मुझे आपसे कुछ बात करनी है।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आचार्यदेव सुहस्ति संप्रति के महल में पधारे। संप्रति ने गुरूदेव के चरणों में बड़े प्रेम से, बड़ी श्रद्धा से वंदना की और कहा :

'गुरूदेव, आपकी ही परम कृपा से मैं राजा बना हूँ। यह राज्य मुझे मिला है। अन्यथा मैं एक भिखारी....दर दर भटकता फिर रहा था। कहीं से भी रोटी का एक टुकड़ा भी नहीं मिल रहा था....और आपने मुझे दीक्षा दी, भोजन कराया, बड़े वात्सल्य से मुझे अपना बना लिया था... प्रभो! जब रात्रि के समय मेरे प्राण निकल रहे थे तब मेरे पास बैठकर आपने मुझे नमस्कार महामंत्र सुनाया था, मेरी समता और समाधि को टिकाने के लिए आपने भरसक प्रयत्न किया था.... गुरुदेव, मेरी समाधिमृत्यु हुई और मैं इस राजपरिवार में जन्मा! आपकी ही कृपा का यह फल है।

'गुरुदेव, यह राज्य मैं आपके चरणों में समर्पित करता हूँ, आप इसका स्वीकार कर मेरे पर अनुग्रह करें।' सम्राट संप्रति का यह था कृतज्ञता गुण! पूर्वजन्म में जिनका उपकार था, उन उपकारी के प्रति संप्रति का हृदय श्रद्धा और भक्ति से भरपूर हो गया था। अपना पूरा साम्राज्य गुरू के चरणों में समर्पित करने को तत्पर बन गया था। गुरूदेव आर्य सुहस्ति ने संप्रति को कहा : 'महानुभाव, यह तेरी उत्तमता है कि तू तेरा संपूर्ण राज्य मुझे समर्पित करने को तत्पर बना है, परन्तु मैं राज्य नहीं ले सकता हूँ। जैनमुनि अकिंचन होते हैं।

सभा में से : संप्रति ने पूर्वजन्म में दीक्षा ली थी, तो उसको पता होगा न, कि जैन साधु वैभव-संपत्ति नहीं रख सकते हैं।

महाराजश्री : आपको पता नहीं है कि उसने कब और कैसी हालत में दीक्षा ली थी! और कितने समय दीक्षा का पालन किया था। जानते हो क्या?

मध्याह्न के समय साधु गौचरी लेने निकले थे। गौचरी लेकर जब लौट रहे थे तब एक भिक्षुक मिला, उसने साधुओं से कहा : 'आपके पास भिक्षा है तो मुझे थोड़ा-सा भोजन दीजिए....मैं भूखा हूँ, भूख से मर रहा हूँ।' उस समय साधुओं ने उसका तिरस्कार नहीं किया, परन्तु वात्सल्य से कहा : 'भैया, हम तुझे इस भिक्षा में से कुछ नहीं दे सकते, क्योंकि इस भिक्षा पर अधिकार होता है गुरुदेव का। तू चल हमारे गुरूदेव के पास, यदि उनको तू प्रार्थना करेगा और उनको उचित लगेगा तो वे तुझे खाना देंगे।'

साधुओं के सरल और वात्सल्यपूर्ण वचनों पर भिखारी को विश्वास हुआ। वह साधुओं के पीछे पीछे चला। उपाश्रय में आया। साधुओं ने गुरूदेव आचार्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

श्री आर्य सुहस्ति को बात की। भिखारी ने भी आचार्यदेव को भाव से वंदना की और भोजन की याचना की। आचार्य श्री आर्य सुहस्ति विशिष्ट कोटि के ज्ञानी पुरुष थे। उन्होंने भिखारी की शक्ल देखी....। ज्ञानदृष्टि से उसके भीतर देखा। कुछ क्षण सोचा और भिखारी से कहा : 'महानुभाव, तुझे हम भोजन तो करा सकते हैं परन्तु तुझे हमारे जैसा बनना होगा! तू यदि हमारे जैसा साधु बन जाय तो हम भोजन करा सकते हैं।'

भिखारी क्षुधा से व्याकुल था। क्षुधा से व्याकुल व्यक्ति क्या करने को तैयार नहीं होता? भिखारी तैयार हो गया साधु बनने को! उसको तो भोजन से मतलब था! और कपड़े भी अच्छे ही मिल रहे थे! भिखारी के कपड़ों से तो साधु के कपड़े अच्छे ही होते हैं!

ज्यों उसने साधु बनना स्वीकार किया, तुरन्त ही साधुओं ने उसका वेश-परिवर्तन किया, उसको दीक्षा दी और भोजन करने बिठा दिया!

जिनाज्ञा के मुताबिक दीक्षा दी जाती है :

सभा में से : इस प्रकार भिखारी को दीक्षा दी जा सकती है क्या?

महाराजश्री : दीक्षा देनेवाले पर यह बात निर्भर रहती है। इस भिखारी की आत्मा को परखने वाले थे आर्य सुहस्ति जैसे विशिष्ट ज्ञानी महापुरुष! भिखारी का भविष्य देखने की क्षमता थी उस महापुरुष में। जिसमें ऐसी क्षमता न हो, दीक्षा लेनेवाले की योग्यता-अयोग्यता परखने की शक्ति न हो वैसे साधु इस प्रकार भिखारी को तो क्या आपको भी दीक्षा नहीं दे सकते। दीक्षा लेनेवाले की सोलह प्रकार की योग्यता देखने की होती है। आप श्रीमन्त हो, इससे आप योग्य नहीं बन जाते और कोई भिखारी है, इससे वह अयोग्य नहीं बन जाता। और दीक्षा जैसे कार्य में अनुकरण तो किया ही नहीं जा सकता। 'आर्य सुहस्ति ने भिखारी को दीक्षा दी थी इसलिए मैं भी भिखारी को दीक्षा दे सकता हूँ....!' ऐसा अन्धानुकरण नहीं किया जा सकता है। जिनाज्ञा के अनुसार ही दीक्षा दी जानी चाहिए।

साधुओं ने उस नये साधु को पेट भर के भोजन खिलाया। भिखारी ने कुछ ज्यादा ही भोजन कर लिया था। शाम को उसके पेट में दर्द शुरू हुआ। दर्द बढ़ता गया। प्रतिक्रमण की क्रिया के बाद तो दर्द काफी बढ़ गया। आचार्यश्री आर्य सुहस्ति और सभी साधु उस नये मुनि के पास बैठ गये और नमस्कार महामंत्र सुनाने लगे। प्रतिक्रमण करने आये हुए श्रावक भी नये मुनिराज की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सेवा करने लगे। बड़े बड़े व्यापारी थे उसमें। नये मुनि ने यह सब सेवा-भक्ति देखकर सोचा अपने मन में : 'मैं तो खाने के लिये साधु बना, तो भी ये बड़े बड़े लोग मेरी सेवा करते हैं....कल तक जिन्होंने मेरे सामने देखा तक नहीं था, आज वे मेरे पार दबा रहे हैं! और, आचार्यदेव! कितनी करुणा है उनकी? मेरा परलोक सुधारने के लिए, मेरे पास बैठकर मेरा सर सहला रहे हैं और कैसी समाधि दे रहे हैं! यदि मैं सच्चे भाव से साधु बनता तो....' साधुधर्म की अनुमोदना करता और नवकारमंत्र का स्मरण-करता करता वह मरा और महान् अशोक के पुत्र कुणाल की रानी की कुक्षि में जन्म लिया!

कृतज्ञता की कोख में पलता है समर्पणभाव :

अब आप समझ गये होंगे कि आधे दिन के साधुजीवन में उसको साधुजीवन के नियमों का ज्ञान कितना हो सकता है? साधु अपने पास संपत्ति रख सकते हैं या नहीं, इस बात का ज्ञान उसे नहीं था। इसलिए अब वह संप्रति राजा बना है, उसको पता नहीं है कि साधु राज्य ले सकते हैं या नहीं? दूसरी बात यह है कि जब उसको पूर्वजन्म की स्मृति हो आयी, वह गुरुमहाराज को पहचान गया, उसके हृदय में इतना आनन्द उभर आया कि वह सोच ही नहीं सका कि राज्य गुरुदेव को देना चाहिए या नहीं! उसके हृदय में उत्कृष्ट समर्पणभाव पैदा हो गया था! कृतज्ञता-गुण में से समर्पणभाव का जन्म होता है! जिनकी कृपा से, जिनके अनुग्रह से मुझे राज्य मिला है, उनके ही चरणों में राज्य समर्पित कर दूँ....! यह था कृतज्ञता-गुण का आविर्भाव!

आचार्यश्री आर्य सुहस्ति ने सम्राट संप्रति को जैनधर्म का ज्ञाता बनाया, आराधक बनाया और महान् प्रभावक बनाया। संप्रति ने अपने जीवनकाल में सवा लाख जिनमंदिर भारत में बनवाये। सवा करोड़ जिनमूर्तियाँ बनवाईं! अहिंसा का प्रसार-प्रचार किया।

कृतज्ञता-गुण किसको कहते हैं, आप लोग समझ गये न? ऐसे गुण जिस महानुभाव में दिखें, आप उनके साथ गाढ़ मैत्री स्थापित करो। सौजन्य, दाक्षिण्य, कृतज्ञता आदि गुणवाले महानुभावों के साथ बैठो, फिरो और उनसे अच्छी अच्छी बातें सुनो। गृहस्थ जीवन में यह बात बहुत महत्त्व रखती है कि आप किसके साथ गाढ़ सम्बन्ध बनाये रखते हैं। आप में भले ही आज वैसे गुण नहीं हैं, परन्तु गुणवानों का संपर्क कायम करने से एक दिन आप भी गुणवान् बनेंगे ही।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निर्भय एव निश्चिंत व्यक्ति ही आत्मविकास कर सकता है :

मैं जानता हूँ आज के युग के प्रवाह को! आजकल आप लोगों को धनवानों का संपर्क-सम्बन्ध ज्यादा अच्छा और फायदेमंद लगता है। सत्ताधीशों का सम्बन्ध ज्यादा प्यारा लगता है! क्योंकि समाज में ऐसे लोगों की महिमा होती है। 'इनका तो भाई, बिरला के साथ अच्छा सम्बन्ध है, इनका तो भाई, प्राइम मिनिस्टर के साथ अच्छे ताल्लुकात हैं।' श्रीमन्तों से और सत्ताधीशों से सम्बन्ध रखनेवालों के प्रति लोग आश्चर्य से देखते हैं न? कुछ भय से भी देखते होंगे? 'इस व्यक्ति से दूर रहो, सरकार में उसकी जान-पहचान है, हेरान कर देगा कभी!' अथवा तो 'इसके तो बड़े बड़े उद्योगपतियों के साथ सम्बन्ध हैं, अपने साथ तो बोलता ही नहीं, बड़ा अभिमानी हो गया है....कोई बात नहीं, समय आने दो, उसको भी देख लेंगे।' यदि व्यक्ति कोई न कोई विशेष गुणवाला नहीं होता है तो दुनिया के दिल में उसका स्थान नहीं बनता है और व्यक्ति निर्भय-निश्चिंत होकर आत्मविकास नहीं कर पाता।

समाज में गुणवानों का, विशिष्ट गुणों से समृद्ध पुरुषों का मूल्यांकन होना चाहिए। जो गुणवान् होते हैं और गुण के पक्षपाती होते हैं, ऐसे पुरुषों का मूल्यांकन होने से लोगों को गुणवान् बनने की प्रेरणा मिलती है। क्योंकि धनैषणा से भी मानैषणा ज्यादा होती है मनुष्य में! मान के लिए मनुष्य धन का त्याग कर देता है। इसलिए तो संघ-समाज और नगर के कुछ सत्कार्य करवाने के लिए लोग बड़े दाताओं को, समारोह का आयोजन कर अभिनन्दन-पत्र देते हैं। दाताओं की प्रशस्ति अखबारों में छपती है। उनके फोटो छपते हैं!

यह दुनिया देखती है और दुनिया के कुछ धनवानों को दान देने की प्रेरणा मिलती है! 'दान' भी एक विशेष गुण है। इसलिए दानी पुरुषों का मूल्यांकन होना चाहिए। वैसे, शीलवानों का-ब्रह्मचारियों का भी मूल्यांकन होना चाहिए। मूल्यांकन का अर्थ मात्र अभिनन्दन-पत्र देना, इतना नहीं करने का है। मूल्यांकन यानी उनकी प्रशंसा, प्रसंगोपात उनकी आवभगत और उनका आदर-सत्कार। तपश्चर्या भी विशिष्ट गुण है। तपस्वियों का बहुमान करते हो न? इसलिए तपस्वियों की संख्या बढ़ती जा रही है! गुणप्रशंसा से, गुणवानों की प्रशंसा से उस गुण का विशेष प्रसार होता है। आज के युग में दो गुणों का और दो गुणवालों का मूल्यांकन होता है विशेष रूप से। दान और तप! दानी का और तपस्वी का विशेष सार्वजनिक सम्मान होता है, तो दान बढ़ा और तप बढ़ा!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गुण प्रसार के लिए गुणीजनों का बहुमान करें :

सभा में से : कीर्तिदान बढ़ा है न!

महाराजश्री : दान देनेवाले की कीर्ति बढ़नी चाहिए न? क्या आप यह चाहते हो कि भोगी की कीर्ति बढ़नी चाहिए? दाताओं की कीर्ति नहीं बढ़नी चाहिए, ऐसा चाहते हो? यदि आप दाता हैं तो आपके हृदय में कीर्ति की कामना नहीं होनी चाहिए, परन्तु दूसरे दाताओं की कीर्ति फैलाने में पीछे नहीं रहना चाहिए। दूसरे दाताओं की प्रशंसा करने में कृपण नहीं बनना चाहिए। दाताओं की, शीलवानों की, तपस्वियों की जी भरकर प्रशंसा करो! इससे, दुनिया में दान, शील और तपश्चर्या की महिमा बढ़ेगी। यह नियम है दुनिया में, जिस गुण की या दोष की प्रशंसा बढ़ेगी वह गुण या दोष समाज में बढ़ता रहेगा!

सिनेमा देखनेवाले सिनेमा की प्रशंसा करना बंद कर दें, एक्टर और एक्ट्रेसों की प्रशंसा करना बंद कर दें, उनको फैशनों की प्रशंसा बंद हो जायं, तो देखना धीरे-धीरे सिनेमा के थियेटर बंद होने लगेंगे! फैशनपरस्ती बंद हो जायेगी।

गुणवान् पुरुषों की संख्या बढ़ाने के लिए गुणवानों की प्रशंसा करनी चाहिए, गुणों की प्रशंसा करनी चाहिए। जो गुण अपने में नहीं हो, दूसरों में हो, उस गुण की भी प्रशंसा करनी चाहिए। गुणवानों का संघ-समाज में महत्त्व बनाये रखना चाहिए। मोक्षमार्ग गुणवानों से चलता है, धनवानों से नहीं। इसीलिए गुणवानों का संपर्क-सम्बन्ध बनाये रखो। गुणवान् बनने का आपका आदर्श बनाये रखो। 'मैं निर्गुण हूँ परन्तु मुझे गुणवान् होना है, मैं गुणवान् बनूँगा ही....।' ऐसा संकल्प करो। एक कवि ने परमात्मा से प्रार्थना करते हुए कहा है :

हुं निर्गुण पण ताहरा संगे
गुण लहुं तेह घटमान,
निंबादिक पण चंदन संगे
चंदन सम लहे तान....
हो जिनजी! गुणनिधि गरीबनिवाज!

जिस प्रकार नीम का वृक्ष कडुआ होने पर भी, चन्दन-वृक्ष के संपर्क से

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चन्दन की सुवास पाता है, उसी प्रकार हे जिनेश्वर, तेरे संपर्क से, मैं भी तेरे गुणों की सुवास प्राप्त करूँगा।'

नीम का वृक्ष करता कुछ नहीं है, मात्र चन्दन-वृक्ष के पास खड़ा रहता है....इससे भी वह चन्दन की सुवास प्राप्त कर लेता है! वैसे आप कुछ भी नहीं करो, गुणवानों के पास बैठे रहो, तो भी गुणों की सुवास प्राप्त कर सकते हो!

गुणीजनों का त्याग कभी मत करो :

ग्रन्थकार ने एक शब्द का प्रयोग किया है : परिग्रह! गुणवानों का परिग्रह करो! श्रेष्ठ गुणवाले साधुपुरुषों का, सत्पुरूषों का परिग्रह करो! 'परिग्रह' का अर्थ जानते हो? परिग्रह का अर्थ है मूर्छा! गाढ़ ममत्व! बहुत महत्त्वपूर्ण शब्द का प्रयोग किया है! श्रेष्ठ गुणवाले पुरुषों का गाढ़ ममत्व करने को कहा है। धनसंपत्ति का परिग्रह करनेवाला जैसे धनसंपत्ति पर गाढ़ ममत्व करता है, वैसे गुणवान् पुरुषों के प्रति गाढ़ ममत्व होना चाहिए! कभी उनको छोना नहीं! कैसी भी परिस्थिति हो, गुणवानों का त्याग नहीं करना।

यह परिग्रह तभी कर सकोगे जब आपकी गुणदृष्टि अखंड रहेगी। जिस क्षण गुणदृष्टि चली गई और दोषदृष्टि आ गई उसी क्षण वह परिग्रह छूट जायेगा! जिस व्यक्ति को आप गुणवान् मानते होंगे उस व्यक्ति को दोषवाला देखने लगोगे! इस संसार में कोई भी व्यक्ति संपूर्ण गुणमय तो मिलेगा नहीं। संसारी जीवात्मा अनन्त दोषों से भी युक्त ही होते हैं! गुणवानों में भी दोष तो होंगे ही! दोष होने पर भी देखने के नहीं हैं। जिस प्रकार धनसंपत्ति का परिग्रही मनुष्य, धनसंपत्ति में दोष होने पर भी नहीं मानता है! धनसंपत्ति में उसको दोष दिखते ही नहीं हैं! वैसे गुणवान् पुरुषों में दोष दिखने ही नहीं चाहिए! कोई व्यक्ति दोष बताये, तो भी दोष नहीं दिखे! सर्वगुण-संपन्न ही दिखे वह सत्पुरुष! ऐसा परिग्रह होना चाहिए।

दोषदर्शन अर्थात् मैत्रीभाव को 'माइनस' करना :

दोषदर्शन की आदतवाला मनुष्य इस सामान्य धर्म का पालन नहीं कर सकता है। उसको तो इस दुनिया में कोई गुणवान् व्यक्ति ही नहीं दिखेगा! चारों ओर दोषों का अन्धकार ही अन्धकार! वह स्वयं भी दोषों के अन्धकार से भर जायेगा और उसके चारों ओर अन्धकार छाया रहेगा। वह दोषों का ही परिग्रही बनेगा! उसका सम्बन्ध भी दोषवालों के साथ ही होगा! वह किसी के साथ स्थायी संबंध नहीं बना पायेगा। क्योंकि दोषदर्शन में से द्वेष पैदा होता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है! जिसमें वह दोष देखेगा, उसके प्रति वह अरूचि, तिरस्कार और नफरत करेगा। नहीं होगी उसमें मैत्रीभावना, नहीं होगी प्रमोदभावना! न वह किसी का मित्र बन सकेगा, न वह किसी का प्रशंसक बना रहेगा!

दोषदर्शन की आदतवाला मनुष्य, धर्मगुरुओं में भी दोष देखेगा! यदि वह दीक्षा भी ले लें, साधु बन जायं, तो भी दोषदर्शन करेगा! अपने सहवर्ती साधुओं के दोष देखेगा! गृहस्थों के दोष देखेगा! गुरूजन के भी दोष देखेगा! दोष देखना और द्वेष करना उसका जीवन-कार्य बन जायेगा! ऐसे व्यक्ति अशान्ति, क्लेश और संताप से भर जाते हैं।

ऐसे व्यक्तियों के जब दूसरे लोग दोष देखते हैं, तब वे रोष से तमतमा जाते हैं। क्रोध से बौखला जाते हैं। लड़ने को तैयार हो जाते हैं! कोई उनको समझा नहीं सकता। समझने की तो ऐसे लोगों ने कसम खायी होती है।

दोषदृष्टिवाले लोग अपने पारिवारिक जीवन को भी अशान्तिमय और क्लेशमय बनाते हैं। दोषदर्शन के साथ दोषानुवाद करने की आदत यदि जुड़ी हुई होती है, तभी तो परिवार में रोजाना झगड़े होते रहते हैं। ईर्ष्या, चुगली वगैरह दोष भी, दोषदर्शन के साथ पनपते रहते हैं।

गुणवान् पुरुषों के साथ गाढ़ प्रीति करने के बजाय, उनके ही दोष देखकर, उनको बदनाम करने का काम वह करेगा। भगवान महावीर के साथ कुछ वर्ष तक रहकर गोशालक ने क्या किया? भगवान महावीर से ही ‘तेजोलेश्या’ की शक्ति पायी और उस शक्ति का प्रहार महावीर पर ही किया! ‘मैं ही सच्चा सर्वज्ञ हूँ’ ऐसा कहता रहा। भगवान महावीर का अवर्णवाद करता रहा।

प्रेम के बिना परिग्रह काहे का?

गुणवान् क्या, गुणों का भंडार मिल जाय, परन्तु उसका परिग्रह होना चाहिए न? प्रेम के बिना परिग्रह नहीं हो सकता है। दोषदर्शन प्रेम को जला देता है! हाँ, कभी किसी गुण से आकर्षित होकर, गुणवान् पुरुषों से सम्बन्ध हो भी जाय। परन्तु ज्यों कोई दोष देखा, उस गुणवान् पुरुष में, प्रेम में आग लगा देगा वह मूर्ख, और वहाँ से भाग जायेगा!

गुणश्रेष्ठ पुरुषों का मात्र संपर्क ही नहीं करने का है, उनका परिग्रह करने का है! उनके प्रति प्रगाढ़ स्नेह बनाये रखना है। इससे आपको धार्मिक लाभ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तो होगा ही, साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक लाभ भी होगा। आपकी विश्वसनीयता बढ़ जायेगी, आपकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ जायेगी।

ग्रन्थकार ने इस गुण को 'सामान्य धर्म' की श्रेणी में रखा है, वास्तव में देखा जाय तो विशेष गुणों की आधारशिला है यह गुण! विशेष धर्माराधना करने वालों में भी यह गुण क्वचित् ही मिल सकता है। यदि गृहस्थ धर्म की आराधना 'धर्मबिंदु' ग्रंथ के आधार पर की जाय तो सम्भव है कि धर्मक्षेत्र में अपूर्व क्रान्ति हो जाय।

आठवें सामान्य धर्म का विवेचन आज पूर्ण करता हूँ।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***सुयोग्य जगह देखकर गृहनिर्माण करवाना चाहिए। यह नौवाँ सामान्य धर्म है। यह गृहस्थधर्म बताते वक्त ग्रंथकार की नजर में दो बातें विशेष महत्त्व की हैं :***
  १. निर्भयता और २. सदाचारों का पालन।
- ***पड़ौसी के आचार-विचार तुम्हारे से विपरीत होंगे तो तुम्हारे परिवार के आचार-विचार भी प्रदूषित होंगे....यदि लापरवाही रखी तो!***
- ***प्रबल कामवासना इन्सान को इन्सान नहीं रहने देती है....शैतान और हैवान बना डालती है।***
- ***मकान कितना भी बढ़िया हो, पर यदि एकदम एकांत में हो, पड़ोस में सदाचारी-संस्कारी वातावरण न हो तो वहाँ पर नहीं रहना चाहिए।***
- ***केवल धार्मिक दृष्टि से ही नहीं, परन्तु कौटुम्बिक सुखशांति की दृष्टि से भी ये सारी बातें सोचनी जरूरी है....अनिवार्य है। कुसंग, गलत सोहबत बड़ी ही खराब चीज है!***

प्रवचन : ५४

परम कृपानिधि, महान् प्रज्ञावंत आचार्य श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी ने, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में क्रमिक मोक्षमार्गका काफी सुन्दर प्रतिपादन किया है। उन्होंने प्रारंभ किया है गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करके। ३५ प्रकार के सामान्य धर्म बताये हैं। ये ३५ प्रकार के धर्म, मानवजीवन की नींव हैं। बुनियाद हैं। सभी धर्मसाधनाओं की आधारशिला हैं। मानवजीवन के सभी कार्यकलापों को लेकर इतना श्रेष्ठ मार्गदर्शन दिया है ग्रन्थकार ने, कि इस मार्गदर्शन के अनुसार जीवनपद्धति का निर्माण किया जाये तो परिवार में से, समाज में से और गाँवनगर में से अनेक दूषण दूर हो जायँ। प्रजाजीवन निरापद बन जाय और सुराज्य प्रस्थापित हो जाय।

मकान के लिए निर्भय स्थान पसंद करो :

योग्य स्थान देखकर गृहनिर्माण करना चाहिए, यह नौवाँ सामान्य धर्म बताया है। सद्‌गृहस्थ को कहाँ रहना चाहिए, कैसे मकान में रहना चाहिए और कैसे लोगों के बीच रहना चाहिए, यह बड़ी महत्त्वपूर्ण बात है। यह गृहस्थ धर्म बताते हुए ग्रन्थकार की दृष्टि में दो बातें प्रमुख रही हैं :

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

१. भयमुक्ति-निर्भयता,

२. शील-सदाचारों का पालन।

ऐसे शहर में, ऐसी गली में, ऐसे मकान में रहना चाहिए कि जहाँ परिवार के सदस्यों की सुरक्षा हो। धन-संपत्ति की सुरक्षा हो। जिस समय घर में अकेली महिला हो, लड़का हो या लड़की हो, उस समय भी वे निर्भयता से रह सकें। चोरी का भय न हो, डाकु का भय न हो, बदमाशी का भय न हो। आपकी अनुपस्थिति में घरवाले निर्भयता से रह सकें, निश्चिंतता से रह सकें-वैसा स्थान पसन्द करना चाहिए।

मकान बहुत खुली जगह में नहीं होना चाहिए-चारों ओर से खुला नहीं होना चाहिए। ऐसे मकान में प्रवेश करना चोरों के लिए सरल बन जाता है। आसपास निकट में कोई रहनेवाला नहीं होने से आपकी चिल्लाहट भी कोई सुन सकता नहीं है। ऐसी 'सोसायटीझ' गाँव-नगर से बाहर बनी हैं और बनती जा रही हैं....कि जहाँ एक कम्पाउन्ड में एक ही बंगला! दूसरे कम्पाउन्ड में दूसरा बंगला! यदि एक बंगले में दो-चार डाकु घुस जायँ और दरवाजा बंद करके हत्या या बलात्कार कर दें तो दूसरे बंगलेवालों को पता ही न लगे! दूसरे बंगलेवालों को आवाज तक सुनायी नहीं दे!

बंगलों के और फ्लेटों के दरवाजे भी अब 'एयर-प्रूफ' बनाये जाते हैं। हवा भी भीतर नहीं जा सके। तो आवाज भीतर से बाहर कैसे आ सकती है? हाँ, फ्लेट तो आसपास होते हैं, फिर भी एक फ्लेट का मुख्य द्वार बंद होने पर, उस फ्लेट में कोई कितना भी चिल्लाये, तो भी उसकी आवाज पासवाले फ्लेट में नहीं सुनाई देगी। एयर-टाइट दरवाजे बनाये जाते हैं न?

एकान्त स्थान में निवास भयजनक :

सभा में से : आजकल तो सुखी-श्रीमंत गृहस्थों का यह फैशन हो गया है कि बंगले में रहना, फ्लेटों में रहना। गाँवों में-छोटे शहरों में रहना तो श्रीमंत लोग पसंद ही नहीं करते।

महाराजश्री : इसलिए तो अनेक दुर्घटनाएँ वहाँ घटती रहती हैं। ऐसे बंगलों में और फ्लेटों में हत्याएँ होती रहती हैं, बलात्कार होते रहते हैं, अनेक पापाचरण होते रहते हैं। चोर-डाकुओं का काम वहाँ सरलता से हो जाता है। एकान्त अच्छा मिल जाता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किस पर विश्वास करना? :

अभी थोड़े समय पहले ही बंबई में ऐसी एक दुर्घटना हो गई थी।

बंबई वालकेश्वर में समुद्र के किनारे पर एक बहुत बड़ी बिल्डिंग है। ज्यादातर उस बिल्डिंग में बड़े-बड़े श्रीमंत ही रहते हैं। एक-एक मंजिल पर एक-एक ही फ्लेट है। वैसे, वहाँ एक फ्लेट में एक परिवार रहता है, परिवार में मात्र दो ही व्यक्ति हैं-एक पति और दूसरी पत्नी। दस-ग्यारह बजे पति चला जाता है अपने ऑफिस में, फ्लेट में रह जाती है अकेली पत्नी! घर की नौकरानी भी बारह बजे चली जाती है और शाम को वापस लौटती है। दो कारें हैं - एक पति की, दूसरी पत्नी की। दोनों कार के दो ड्राइवर हैं।

एक दिन दोपहर को दो बजे किसी ने फ्लेट का दरवाजा खटखटाया। स्त्री ने देखा तो कार का ड्राइवर था। उसने दरवाजा खोला और पूछा : 'अभी क्यों आया?' ड्राइवर फ्लेट में प्रवेश करता हुआ बोला : 'पानी पीना है।' वह सीधा रसोईघर में गया, जहाँ पानी था। स्त्री भी उसके पीछे-पीछे गई....त्यों ही फ्लेट में दूसरे दो व्यक्ति आ गये। उन्होंने आकर स्त्री का मुँह दबोच लिया। स्त्री जोर से चिल्लाई....भाग्यवश फ्लेट का द्वार खुला रह गया था। आवाज नीचेवाले फ्लेट में पहुँची। लोग ऊपर आ गये। सीधे फ्लेट में दौड़े....तो वे तीनों बदमाश पीछे की खिड़की से सीधे कूद पड़े समुद्र में....। दो बदमाश भाग गये, एक पकड़ा गया। स्त्री बाल-बाल बच गई। यदि फ्लेट का दरवाजा डाकुओं ने भीतर से बंद कर दिया होता तो क्या होता? संभव है कि स्त्री की हत्या हो जाती और लाखों रुपये के जेवर आदि लूटे जाते।

आजकल तो लोग, नगर-से-गाँव से दूर खेतों में बंगले बनवाते हैं और वहाँ पर रहते हैं! लंबा-चौड़ा खेत और उसमें एक ही बंगला! हालाँकि वहाँ चौकीदार भी रहते हैं, परन्तु रक्षक ही भक्षक बन गया तो? चौकीदार की बुद्धि बिगड़ी तो? धन-संपत्ति के प्रलोभन में कौन नहीं फँसता है? चौकीदार को मालूम हो जाय कि 'आज सेठ के पास दो लाख रुपये हैं....' कल बैंक में जमा कराने वाले हैं....' यदि उसके मन में दो लाख पाने की प्रबल इच्छा जगी तो? चौकीदार के पास 'रायफल' या 'रिवोल्वर' हो सकती है....दूसरे भी शस्त्र हो सकते हैं। मान लो कि रात्रि के समय सेठ पर हमला कर दे तो सेठ क्या कर सकता है? वहाँ चिल्लाये तो भी कौन सुननेवाला होगा?

प्राचीन काल में, जंगलों में, पहाड़ों की चोटी पर बंगले बनवाते थे राजा-महाराजा लोग! परन्तु वे स्वयं ही डाकुओं के महाकाल से होते थे! उनको वहाँ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कोई भय नहीं होता था। फिर भी कभी-कभी शत्रुराजा वैसे स्थानों पर भी हमला कर देते थे।

आप लोगों को यदि निर्भयता से और निश्चिंतता से जीवन जीना है तो ऐसे एकान्त के स्थानों में नहीं रहना चाहिए। वैसे, ऐसे स्थानों में भी नहीं रहना चाहिए कि जहाँ मकानों की भीड़ हो! ऐसी संकरी गलियाँ हों कि जहाँ 'फायर-ब्रिगेड'-दमकल भी नहीं आ सके। एक घर में आग लगे तो पूरी लाइन ही जलकर साफ हो जाय और जहाँ अग्निशामक दमकल भी नहीं पहुँच सके।

दूसरी बात, अत्यन्त निकट-निकट घर होने से घर की शोभा भी नहीं बनती है। घर की बातें पासवाले सुनते रहते हैं। उनकी बातें आप सुनते रहोगे....! एक-दूसरे की गुप्त बातें सुनने से कभी संबंध भी बिगड़ते हैं, झगड़े भी होते हैं और निन्दाएँ होती रहती हैं। बंबई जैसे बड़े शहरों में गरीब और मध्यम कक्षा के लोग जो चालों में रहते हैं, पास-पास खोलियों में रहते हैं-वहाँ यही वातावरण देखने को मिलता है।

आप लोग किस दृष्टि से मकान की पसंदगी करते हो? मात्र सुख-सुविधाओं की दृष्टि से और आर्थिक दृष्टि से यदि मकान की पसंदगी करते हो तो पारिवारिक जीवन में अनेक समस्याएँ पैदा हो जायेंगी। पास-पड़ौस कैसा है-वह भी महत्त्वपूर्ण बात है। यदि पड़ोसी स्वधर्मी होंगे और शीलवान् होंगे तब तो चिन्ता की बात नहीं, परन्तु यदि पड़ोसी विधर्मी होंगे और शील-सदाचार के पक्षपाती नहीं होंगे तो अनेक अनर्थ पैदा हो जायेंगे।

पड़ोसी की पसंदगी सोच-समझकर करो :

सभा में से : हम लोग तो ऐसा कुछ नहीं देखते! हम देखते हैं सुख-सुविधाएँ, अनुकूलताएँ और आर्थिक दृष्टि से सस्ता मकान! पड़ोस भी नहीं देखा जाता!

महाराजश्री : तो आप निर्भयता से नहीं जी सकेंगे। पारिवारिक शील-सुरक्षा भी नहीं रहेगी। आर्थिक दृष्टि से नुकसान हो सकता है और शील-सदाचार की दृष्टि से भी नुकसान हो सकता है। आप लोगों को गंभीरता से सोचना होगा। नया मकान बनाते समय, किराये का मकान लेते समय, आपको ये बातें अवश्य देखनी चाहिए। पड़ोसी का ख्याल तो विशेष करना चाहिए। अयोग्य और विधर्मी पड़ौसी के कारण, कई परिवारों में अनेक दूषण प्रविष्ट हो गये हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सामाजिक जीवन में, पड़ोशी-धर्म भी महत्त्व का होता है। पड़ोसी के वहाँ जाना, बैठना, बातें करना, कुछ लेना-देना यह सब कुछ होता रहता है। पड़ोसियों का आपके घर भी आना-जाना होता है। यदि पड़ोसी के आचार-विचार विपरीत होंगे तो आपके परिवार के आचार-विचार भी बिगड़ेंगे। छोटे बच्चों के ऊपर शीघ्र असर होगा। मनुष्य का यह स्वभाव है कि बुराई को शीघ्र ग्रहण करता है। एक सड़ा हुआ पान, पचास अच्छे पान को सड़ा डालता है! पचास अच्छे पान, एक सड़े हुए पान को अच्छा नहीं बना सकते!

सत्य घटना १ :

एक रिटायर्ड 'हेडमास्टर' का विशाल संस्कारी परिवार ऐसे ही बिखर गया। पड़ोस अच्छा नहीं था! हेडमास्टर के पाँच लड़के थे। जब बड़े लड़के की शादी हुई, पुत्रवधू घर में आई, सारा परिवार खुश था। पुत्रवधू सुशील थी, अप्रमादी थी। सास का सारा काम उसने ले लिया। सास को फुरसत मिल गई। वह पड़ोसन के वहाँ जाती है, बैठती है और अपनी नई बहू की प्रशंसा करती है। पड़ोसन प्रशंसा सुनकर कहती है : 'बहू की ज्यादा प्रशंसा मत किया कर, अन्यथा सर पर चढ़ जायेगी। उसकी गलतियाँ बताया कर। लड़के को भी कहा करना कि बहू के रूप-रंग में मोहित न हो जाय। मैं तो तेरे भले के लिए कहती हूँ। मैंने तो कई जगह देखा है कि ऐसी बहुएँ धीरे-धीरे पूरे घर पर काबू पा लेती हैं और फिर मनमानी करती हैं।'

हेडमास्टर की पत्नी को पड़ोसन की बात जँची। वह बहू को गालियाँ देने लगी। विनीत लड़के को भी कटु बातें कहने लगी। 'इस प्रकार बहू को लेकर घूमने नहीं जाया जाता, रोजाना नये नये कपड़े लाकर बहू को देता है... क्या घर के खर्च में रुपये नहीं देने चाहिए?' शुरुआत में तो लड़का माँ की बात सुन लेता है, परंतु बाद में जवाब देने लगता है। रोजाना झगड़ा होने लगा और एक दिन लड़का अपनी पत्नी को लेकर अलग हो गया।

उस पड़ोसन ने तो इससे भी आगे बढ़कर, हेडमास्टर के कान भर दिये! बहू के साथ आपकी पत्नी को ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए था। बहू कितनी अच्छी थी! मैं देखती थी न... बेचारी सारा दिन घर का काम करती थी। एक शब्द मुँह से नहीं निकालती थी....।' इस हेडमास्टर और उनकी पत्नी के बीच भी तनाव पैदा करने लगी। पड़ोसन को इसमें मजा आता था! उसने पाँचों लड़कों को माता-पिता से अलग कर दिया। बुढ़ापे में हेडमास्टरजी और उनकी पत्नी अकेले हो गये।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सत्य घटना २ :

बंबई में एक परिवार रहता था। पति-पत्नी और एक बेटा। 'लड़का' होगा पाँच-सात साल का। पति एक कम्पनी में 'सेल्समेन' था। बड़ी कम्पनी थी। सेल्समेन को महीने में २०/२२ दिन बाहर ही फिरना पड़ता था। जिस बिल्डिंग में वह परिवार रहता था, उस बिल्डिंग में, इनके फ्लेट के पास ही एक सिंगल कमरे में एक लड़का रहता था, कॉलेज में पढ़ता था। दक्षिण प्रदेश का लड़का था, होगा २२/२३ साल का। प्रारंभ में तो इस परिवार के साथ मात्र औपचारिक बातचीत का ही संबंध था, परन्तु धीरे-धीरे यह लड़का इस परिवार के फ्लेट में भी आने-जाने लगा। सही नाम-पता तो नहीं बताऊँगा, परन्तु पति का नाम पंकज समझना और पत्नी का नाम नीला समझना। पहले तो वह लड़का जब पंकज घर में होता तब ही आता। परन्तु नीला के प्रति उसके मन में राग पैदा हुआ था। नीला का स्वभाव अच्छा था, व्यवहार भी अच्छा था। जब पंकज बाहरगाँव जाता और बेटा स्कूल जाता तब नीला को अकेलापन लगता। वह लड़का मोर्निंग कॉलेज 'एटेन्ड' करता था। दोपहर को अपने कमरे में होता था। नीला दोपहर को उस लड़के को, जिसको अपने गणेश कहेंगे, उसको अपने फ्लेट में बुलाने लगी और बातें करने लगी। दोनों का प्रेम बढ़ता गया। नीला गणेश को अपने वहीं भोजन कराने लगी। एक दिन दोनों होश गवाँ बैठे और शारीरिक संबंध कर बैठे।

एक दिन कम्पनी का आदमी घर पर आया और पंकज के अकस्मात मृत्यु का समाचार दे गया। नीला को बहुत दुःख हुआ। परन्तु वह दुःख क्षणिक था। उसको तो गणेश मिल गया था न! अब गणेश नीला के साथ रहने लगा। पंकज के रिश्तेदारों को अच्छा नहीं लगा, निन्दा भी होने लगी, परन्तु नीला ने गणेश को नहीं छोड़ा। बेटा जब ८/९ साल का हुआ। कुछ बातें समझने लगा। स्कूल में भी दूसरे लड़के इसको नीला-गणेश की गन्दी बातें सुनाने लगे, तब इसने घर आकर नीला को कहा : 'माँ, गणेश अंकल हमारे घर क्यों रहते हैं? उनको कह दो न कि वे अपने घर रहें। मुझे मेरे मित्र...।' तब नीला बच्चे को डाँटने लगी। परन्तु लड़के ने तो एक दिन गणेश को भी कह दिया : 'आप हमारे घर क्यों रहते हो? हमारे सारे रुपये खर्च कर दोगे तो हमारे पास क्या रहेगा? आपके लिए मेरे मित्र भी अच्छी बातें नहीं करते।'

गणेश ने कुछ जवाब नहीं दिया, उसने नीला के सामने देखा। लड़के के स्कूल जाने के बाद नीला ने गणेश से कहा : 'तू लड़के की बात मन पर नहीं

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लेना, मैं उसको समझा दूँगी। लड़का है न....बाहर लोग कुछ बातें करते हैं, इसने सुनी होगी, इसलिए बोल दिया....।' परन्तु गणेश के मन का समाधान नहीं हुआ। उसने सोचा : 'अब यह लड़का बड़ा होता जायेगा। मेरा और नीला का संबंध उसके खयाल में आ जायेगा। नीला उसकी माँ है। उसके मन में हम दोनों के प्रति द्वेष होगा ही और कोई संकट पैदा हो सकता है। नीला को छोड़कर अब मैं जा नहीं सकता। किसी भी प्रकार इस लड़के को हटा देना चाहिए मेरे मार्ग में से।

प्रबल कामवासना इन्सान को क्रूर बना देती है :

राग जब प्रबल हो उठता है, तब मनुष्य को पशु-हिंसक पशु बना डालता है। प्रबल कामवासना मनुष्य को मनुष्य नहीं रहने देती.... क्रूर पशु बना देती है। गणेश ने बच्चे की हत्या कर देने का सोचा। उसने नीला को कोई बात नहीं की, क्योंकि वह जानता था कि नीला को अपने बच्चे पर बहुत प्रेम है। बच्चे की हत्या की बात वह सुन भी नहीं सकेगी। बाहर से गणेश भी बच्चे से प्रेम करता रहा! ताकि नीला को शंका पैदा न हो जाय।

गणेश ने अपना प्लान बनाया। अपने एक एन्ग्लो-इन्डियन मित्र को तैयार किया। एक टैक्सी किराये की लेकर, दोनों मित्र स्कूल छूटने के समय स्कूल के पास पहुँच गये। लड़का 'मोर्निंग' स्कूल में पढ़ने जाता था। स्कूल का समय पूरा हुआ, लड़के अपने-अपने घर जाने लगे। गणेश 'मेइन गेट' पर ही खड़ा था। नीला का लड़का जैसे बाहर आया, गणेश ने कहा : 'मुन्ने, मैं तुझे लेने आया हूँ, गाड़ी लेकर आया हूँ। तेरी मम्मी जोगेश्वरी गई है, तुझे वहाँ चलना है।'

लड़के को कार में बिठा दिया और कार जोगेश्वरी की ओर भागी। जोगेश्वरी के जंगल में पहुँच कर, कार वाले को पैसे दे दिये और कार वापस कर दी। लड़का रोने लगा। 'मुझे मेरी माँ के पास ले चलो....मुझे मेरी माँ के पास जाना है....।' वह एक पेड़ के नीचे बैठ गया। गणेश का मित्र जो ऐंग्लो--इन्डियन था, उसको लड़के पर दया आ गई। उसने कहा : 'क्यों मारना चाहिए लड़के को? खून छिपा नहीं रहेगा। बंबई की पुलिस कहीं से भी हत्यारे को पकड़ लेती है। यदि पकड़ा गया तो जिंदगी बरबाद हो जायेगी....।' गणेश की आँखें लाल होती जा रही थीं। उसका चेहरा क्रूर-कठोर बनता जा रहा था। मित्र कुछ दूर जाकर खड़ा रहा। इधर लड़का जोर-जोर से रोने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लगा। गणेश ने एक बड़ा पत्थर उठाया और मासूम बच्चे पर दे मारा। एक भयानक दर्दभरी चीख निकली और बच्चे के प्राण निकल गये। तुरन्त वहाँ एक खड्डा खोदकर, लड़के के मृतदेह को दफना दिया और दोनों चलकर मेइन रोड़ पर पहुँच गये। वहाँ से टैक्सी पकड़ ली और पहुँचे अपने मकान पर। शाम हो गई थी।

उधर नीला, एक बजे तक मुन्ना घर पर नहीं आया तब घबरा गई और स्कूल पहुँची। स्कूल से तो सभी बच्चे चले गये थे। नीला ने मुन्ने के दोस्तों के घर पर तलाश की....कहीं पर भी मुन्ना नहीं मिला....तब पुलिस स्टेशन जाकर शिकायत लिखवा दी। मुन्ने का फोटो भी दे दिया।

नीला घर पर आई और फूट-फूट कर रोने लगी। उसके मन में अनेक प्रकार की शंका-कुशंकाएँ पैदा हो रही थीं। उसमें एक शंका यह भी थी : 'क्या गणेश तो मुन्ने को उठा कर नहीं ले गया होगा? आज सुबह नौ बजे से गणेश भी घर आया नहीं है, क्या उसने तो मुन्ने को...!!' नीला काँप उठी।

शाम को जैसे ही गणेश घर पर आया। नीला ने पूछा : 'आज तू सुबह से कहाँ गया था? बता, मुन्ना कहाँ है? मेरा मुन्ना कहाँ है?' और नीला फूट-फूट कर रोने लगी। गणेश जवाब बराबर नहीं दे सका। उसने कहा : 'मेरे मित्र के साथ आज तो मैं घूमने गया था, फिर 'पिक्चर' देखने गये थे।' नीला ने कहा : 'कहाँ है तेरा वह मित्र?' उसने कहा : 'नीचे खड़ा है।' नीला गणेश को लेकर नीचे आई। वह ऐंग्लो-इन्डियन नीचे खड़ा ही था। नीला की रोती आँखें....रोती सूरत देखकर वह लड़खड़ा गया। नीला ने उससे पूछा : 'भैया, सच-सच बताना, तुम कहाँ गये थे?' उसने दूसरी ही बात बताई....। नीला की शंका पक्की हो गई। उसने फ्लेट में आकर पुलिस स्टेशन पर फोन किया। आधे घंटे में पुलिस की गाड़ी आई। इधर दोनो मित्रों को नीला ने चाय-नाश्ता करने बिठा दिया था। पुलिस ने आकर दोनों को 'एरेस्ट' कर लिया। गाड़ी में बिठाकर ले गये। ऐन्ग्लो-इन्डियन ताज का साक्षी बन गया। गणेश को फाँसी की सजा हो गई।

नीला ने पुत्र और प्रेमी दोनों को खो दिया।

साधुओं के लिए भी स्थान की पसंदगी अनिवार्य :

घर कहाँ पर होना चाहिए, यह बात बड़ी महत्त्व की है। हम लोग तो साधु हैं न? हमारे लिए भी तीर्थंकरदेवों ने नियम बनाये हैं कि हमें कहाँ पर रहना

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चाहिए, कहाँ पर नहीं रहना चाहिए। हमारे तो पुत्र-पत्नी आदि परिवार नहीं होता है न? फिर भी, संयमधर्म की सुरक्षा की दृष्टि से नियम बनाये गये हैं! साध्वी के लिए तो विशेष सख्त नियम बनाये गये हैं! क्योंकि उनके जीवन की सुरक्षा, साधु से भी ज्यादा महत्त्व रखती है। जैसे, साधु जंगल में किसी बिना दरवाजे के मकान में भी रात्रि व्यतीत कर सकता है, परन्तु साध्वी वैसे स्थान में नहीं रह सकती है। साध्वी को वैसे मकान में रात्रिवास करने का होता है कि जो मकान भीतर से बंद हो सकता हो। जंगल में तो रात्रि के समय रूकने का ही नहीं होता। गाँव में भी, राजमार्ग पर के मकान में नहीं रूकने का है। उपाश्रय के पास यदि निम्नस्तर के और विधर्मी लोगों के घर हों तो वैसी जगह में साधु-साध्वी को नहीं रहना चाहिए।

मकान कितना भी अच्छा हो, सुख-सुविधाओं से परिपूर्ण हो, परंतु यदि वह एकान्त में पड़ता हो, अथवा दूसरे मकानों से सटकर आया हो, पसंद नहीं करना चाहिए। वैसे पड़ोस यदि संस्कारी-सदाचारी न हो तो वहाँ नहीं रहना चाहिए। श्रीमन्त हो, परन्तु संस्कारी न हो, धनवान् हो परन्तु सदाचारी न हो तो, वैसे स्थान में नहीं रहना चाहिए।

सत्य घटना ३ :

अहमदाबाद की एक घटना है। 'एलिसब्रिज एरिये' में एक अच्छा बंगला था। दो मंजिला बंगला था। बंगले में मात्र एक महिला ही रहती थी, वही बंगले की मालकिन थी। काम करनेवाली एक औरत थी, जो दिन में सेठानी का काम करती थी, रात में अपने घर चली जाती थी। सेठानी ने सोचा कि 'यदि कोई अच्छा परिवार मेरे बंगले में किरायेदार आ जाय तो अच्छा रहे।' उसने दो-चार रिश्तेदारों से बात की। एक परिवार मिल गया। अच्छा परिवार था। पति-पत्नी और तीन बच्चे थे। बच्चे भी शरारती नहीं थे, सुशील और संस्कारी थे। बंगले के ऊपर का भाग किराये पर मिल गया। सेठानी को भी 'कंपनी' मिल गई और इस परिवार को, जो 'कच्छी' परिवार था, उसको अच्छा मकान मिल गया। परिवार के सभी लोगों का स्वभाव अच्छा था, व्यवहार अच्छा था, इसलिए सेठानी के साथ घर जैसा सम्बन्ध हो गया।

सेठानी की उम्र होगी ४०/४५ साल की। पैंतीस वर्ष की उम्र में ही वैधव्य का दुर्भाग्य उदय में आया था। दस लाख रुपये की संपत्ति होगी। सेठानी का रूप भी था और बोलने-चलने का तरीका भी अच्छा था। जब कभी, चारूभाई की पत्नी भानु को अपने मायके जाना पड़ता अथवा वह M.C. में होती तब

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चारूभाई को सपरिवार सेठानी के वहीं भोजन का निमंत्रण मिलता। चारूभाई भी सेठानी का बैंक का काम, बाजार काम वगैरह कर देते थे। धीरे-धीरे चारूभाई का सेठानी के साथ संबंध घनिष्ट होता चला। भानु चली गई होती अपने मायके, बच्चे चले गये होते स्कूल, तब चारूभाई और सेठानी का संबंध प्रेमसंबंध हो जाता। शारीरिक संबंध भी हो गया।

जब चारूभाई की पत्नी भानु को पता लगा, तब बहुत देर हो गई थी। पति-पत्नी के बीच झगड़े होने लगे। चारूभाई भानु को मारने लगे। 'डायवर्स' लेने की बात आ गई! सेठानी ने चारूभाई को वैसे मोहपाश में फँसा लिया था कि चारूभाई भानु को छोड़ने तैयार था, परन्तु सेठानी को नहीं! यह तो अच्छा हुआ कि चारूभाई के एक मित्र ने बड़ी बुद्धिमत्ता से काम लिया और इस परिवार को अधोगति से बचा लिया। बंगला खाली करवा दिया और थोड़े महीने के लिए चारूभाई को सपरिवार उनके गाँव में भेज दिया।

पास-पड़ोस के साथ संबंध में विवेक जरूरी :

पड़ोस के साथ कितना संबंध रखना, किसके साथ रखना....वगैरह बातें बड़ी महत्त्व की होती है। आज-कल के सिनेमा देवनेवालों के दिमाग तो इतने बिगड़े हुए हैं कि जीवन बिगड़ने में कुछ देरी नहीं लगती! चूँकि शील-सदाचार का मूल्य ही गिरा दिया है आप लोगों ने! 'मैं शीलभ्रष्ट बनूँगा तो मेरी दुर्गति होगी, मेरा जीवन, मेरे परिवार का जीवन नष्ट हो जायेगा....'यह चिंता होती है आप लोगों को?

मात्र धार्मिक दृष्टि से नहीं, परिवार की सुखशांति की दृष्टि से भी यह बात सोचना अति आवश्यक है। कुसंग बहुत खराब तत्त्व है। कुसंग से मनुष्य शराबी बने हैं, कुसंग से मनुष्य जुआरी बने हैं। पड़ोस में यदि जुआ खेला जाता है, शराब की मेहफिलें जमती हैं, तो आज नहीं....कल नहीं दो-चार महीने के बाद आप भी एक दिन जुआ खेलने बैठ जाओगे! शराब का एकाध प्याला भी लेने की इच्छा हो जायेगी। आप शायद बच जाओगे, दृढ़ रहोगे, तो आपके युवान लड़के उसमें फँसेंगे! आखिर, पड़ोसी-धर्म अदा तो करना पड़ता है न?

अब आगे, कैसी जमीन पर मकान बनाना, कैसा मकान बनाना, शुभाशुभ की परीक्षा कैसे करना....वगैरह बातें बताऊँगा।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- *कुछ एक निमित्त प्रयोगों के द्वारा जमीन की, मकान की परीक्षा की जाती है। कुछ शकुन से मालूम किया जा सकता है। कुछ ऐसे स्वप्न भी आते हैं... जिनके माध्यम से अच्छा-बुरा जाना जा सकता है। कुछ ऐसे दिव्य संकेत शब्दों के जरिये भी मिलते हैं....मालूम पड़ जाते हैं।*
- *मकान अच्छा होगा, अच्छे लक्षणों से युक्त होगा....तो उसमें प्रवेश करते ही तुम्हें प्रसन्नता होगी....आह्लाद होगा! वातावरण घनघोर आषाढ़ी बादलों से घिरा हुआ नहीं, पर सुखद, शीतल वसंतऋतु-सा आह्लादक और परितोषपूर्ण होगा।*
- *सभी भूत उपद्रवी नहीं होते हैं। भूत अच्छे भी होते हैं और खराब भी होते हैं! वैर की वासना से यहाँ आते हैं, वैसे प्रेम की वासना के कारण भी आ सकते हैं।*
- *जीवात्मा के तमाम सुख-दुःख की जड़ है तो वह है पुण्य-पाप कर्म! परन्तु ऐसे भी कुछ कर्म होते हैं जो कुछ न कुछ निमित्त पाकर उदय में आते हैं। ये निमित्त होते हैं द्रव्यात्मक, कालात्मक और क्षेत्रात्मक।*

प्रवचन : ५५

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्य श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी ने स्वरचित 'धर्मबिंदु' ग्रन्थ में, क्रमिक मोक्षमार्ग बताया है। उन्होंने प्रारंभ किया है गृहस्थ के सामान्य धर्म से। ३५ प्रकार के सामान्य धर्म बताये हैं। इसमें नौवाँ धर्म है : 'स्थाने गृहकरणम्।' गृहस्थ को चाहिए कि योग्य जगह पर वह मकान बनवाये। यानी जहाँ जगह मिली वहाँ मकान बना लिया, ऐसा नहीं होना चाहिए। चूँकि आप कैसे मकान में रहते हो, आपकी संपत्ति और विपत्ति का वह प्रमुख कारण बन सकता है। यदि जमीन लक्षणवती होगी तो उस मकान में रहनेवाला वैभवशाली बन सकता है, परिवार की सुख-संपत्ति बढ़ सकती है। यदि जमीन लक्षणवती नहीं होगी तो उस मकान में रहनेवाला निर्धन हो सकता है, परिवार में मौत भी हो सकती है और अनेक आपत्तियाँ आ सकती हैं।

जमीन के कुछ मार्गदर्शक लक्षण :

यदि नया ही मकान बनाना है तो जमीन के लक्षण अवश्य देखने चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ के टीकाकार आचार्यदेव ने, अच्छी जमीन के कुछ लक्षण बताये हैं : १. जहाँ पर दूर्वा के अंकुर प्रस्फुटित न होते हों।

२. जहाँ पर दर्भ के छोटे-छोटे पौधे लगे हुए नहीं हों।

३. जहाँ की मिट्टी की बास-सुगन्ध अच्छी हो।

४. जहाँ की मिट्टी का रंग अच्छा हो।

५. जिस जगह से स्वादिष्ट पानी निकलता हो।

६. जिस भूमि से धन निकले, खज़ाना निकले।

सभा में से : इसमें कुछ लक्षण तो ऐसे हैं कि जो भूमि देखते ही पता लग जायँ, परन्तु कुछ लक्षण ऐसे हैं....जैसे खज़ाना होना....वगैरह उसका पता कैसे लग सकता है?

महाराजश्री : घर में किसी जगह खज़ाने की आशंका तो नहीं है न? इसलिए तो नहीं पूछते हो न? उपाय बताता हूँ, परन्तु खज़ाना निकले तो कुछ हिस्सा धर्मक्षेत्र में खर्च करना, भाई!

कुछ निमित्तों से जमीन की-मकान की परीक्षा की जाती है। कुछ ऐसे शकुनों से पता लग सकता है, कुछ ऐसे स्वप्नों से पता लग सकता है और कुछ ऐसे दिव्य शब्दों से पता लग सकता है। ये सारे निमित्त इन्द्रियातीत होते हैं यानी इन्द्रिय-प्रत्यक्ष नहीं होते। ये निमित्त सही हैं या गलत, इसका निर्णय भी स्वस्थ मन से करना चाहिए। संदेह नहीं होना चाहिए, विपर्यय नहीं होना चाहिए, अनिर्णायकता नहीं होनी चाहिए और निमित्तज्ञान का अभाव या अपूर्णता नहीं होनी चाहिए।

निमित्त का सत्यासत्य-विवेक जरूरी :

एक गाँव में हम गये थे, वहाँ एक श्रावक ने मुझे कहा : 'महाराज साहब, मेरे घर पधारने की कृपा करेंगे?' मैंने पूछा 'क्यों?' उसने बताया कि मेरी एक छोटी-सी लड़की है, उसने ऐसा स्वप्न देखा है कि मेरे घर में किसी जगह भगवान पार्श्वनाथ की मूर्ति है! लड़की कहती है, कि 'मूर्ति कहती है-मुझे बाहर निकालो!' हमने घर में, जहाँ-जहाँ लड़की ने बताया वहाँ-वहाँ खोद डाला, परन्तु अभी तक मूर्ति नहीं निकली है। आप पधारें और बताने की कृपा करें कि हम कहाँ पर खोदें?'

मैंने कहा : 'महानुभाव, एक छोटी बच्ची के स्वप्न की बात यथार्थ मानकर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तुमने पूरा घर खोद डाला....! स्वप्न सही था या गलत, इसका निर्णय किया था क्या? स्वप्न अनेक प्रकार के होते हैं। सभी स्वप्न सही नहीं होते, कुछ विकारजन्य स्वप्न गलत सिद्ध होते हैं। इसलिए, जब तक कोई नया संकेत नहीं मिले, वहाँ तक मकान खोदने का काम स्थगित रहने दो।' हम तो वहाँ एक दिन ही रुके थे, क्या पता उसने खोदना जारी रखा या स्थगित किया।

जमीन के लक्षणों के संकेत भी जैसे-तैसे व्यक्ति को नहीं मिलते हैं। जो व्यक्ति उपशान्त होता है, जितेन्द्रिय होता है, जिसे वायु का और पित्त का प्रकोप नहीं होता है, अपने इष्टदेवता के प्रति जिसकी निष्ठा होती है, ऐसे व्यक्ति को स्पष्ट और असंदिग्ध संकेत प्राप्त होते हैं। शुभ शकुन होते हैं, स्पष्ट स्वप्नदर्शन होता है और स्पष्ट दिव्य ध्वनि सुनाई देती है। उसी अनुसार यदि जमीन पसन्द की जाय और मकान बनाया जाय तो उस मकान में रहनेवाला प्रायः संपत्ति और सौभाग्य से भरपूर रहता है।

आजकल तो बात ही दूसरी बन गई है! मकान बनानेवाला दूसरा और मकान में रहनेवाला दूसरा! जमीन का मालिक एक होता है, उस पर ठेके से मकान बाँधनेवाला 'बिल्डर्स' दूसरा होता है, और मकान में रहनेवाला तीसरा ही होता है! नहीं होती है जमीन की परीक्षा, नहीं देखे जाते हैं कोई लक्षण! कौन देखेगा? किसको होती है गरज? सबको पैसे से मतलब होता है। जमीन के मालिक को ज्यादा पैसे चाहिए! 'बिल्डर' को भी ज्यादा पैसे चाहिए! मकान खरीदने वाले को कुछ सुविधाएँ चाहिए और अपनी मालिकी का मकान चाहिए। एक-दो बड़े रूम हों, एक ड्राइन्ग रूम हो, किचन, बाथरूम और लेट्रीन हो....एक बाल्कनी हो, पानी हो और लाइट हो-बस, हो गया काम। इतना ही देखने का। ठीक है न? स्वयं लक्षण देखकर जमीन लेनेवाले कितने? फिर अपनी ही निगरानी में मकान बनवानेवाले कितने? मकान भी शिल्प के नियमानुसार बनानेवाले कितने? मकान के विषय में भी आप लोगों की लापरवाही गजब की है! जिसमें आपको रहना है, सुख-चैन से रहना है, उस घर के विषय में भी यदि आप इतनी घोर उपेक्षा करते हैं तो फिर धर्म के विषय में तो पूछना ही क्या?

शोर और प्रदूषण के बारे में भी सोचो :

किराये के मकान को भी लेते समय शकुन-स्वप्न आदि संकेत देखने चाहिए। शोर, आवाज, प्रदूषण, वातावरण....इत्यादि से भी मकान को देखना

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चाहिए। यदि मकान अच्छा होता है, अच्छे लक्षणों से युक्त होता है तो मकान में जाते ही आपको आह्लाद होगा। वातावरण घनघोर बादलों से छाये हुए आकाश जैसा नहीं लगेगा परन्तु वसन्त ऋतु के आगमन जैसा मधुर और सुखप्रद लगेगा।

परन्तु संसार में ऐसे बहुत लोग हैं कि जिनको अपनी पसंदगी के मकान में रहने को नहीं मिलता है! जैसे सरकारी कर्मचारी! कोई मील के कर्मचारी, नौकर....इनको सरकार की ओर से, कम्पनी की ओर से जो मकान मिलता है, उसमें रहना पड़ता है। अभी थोड़े दिन पहले एक पत्रिका में विदेश की एक घटना पढ़ी, विश्वसनीय लेखक ने लिखी हुई घटना है, इसलिए विश्वास किया जा सकता है कि ऐसी घटना घटी होगी।

विदेश की एक सत्य घटना :

यह घटना है एडिनबरो की। वहाँ एक स्ट्रीट में एक मकान ऐसा था कि जो व्यक्ति उस मकान में आकर रहता था उसको एक स्त्री का प्रेत दिखाई देता था। और वह व्यक्ति, वह परिवार डरकर वहाँ से भाग जाता था! कौन रहे ऐसे मकान में? फिर भी जिनको दूसरा कोई मकान नहीं मिलता था, वह इस मकान में रहने के लिए आ जाता था! जब भूत को देखता था, घर छोड़कर भाग जाता था।

एक बार इस मकान में पुलिस इन्स्पेक्टर डिक्सन रहने को आये। उन्होंने किराये पर यह मकान ले लिया था। पहली रात थी, अखबार पढ़कर जब वे सोने जा रहे थे कि हवा का एक सर्द झौंका इतनी तेजी से कमरे में आया कि खिड़की के दरवाजे एवं पर्दे जमीन पर गिर पड़े और ‘फायरप्लेस’ में जलती हुई आग अपने आप बुझ गई। डिक्सन ने खड़े होकर पुनः दरवाजे बन्द किये और बिस्तर की ओर बढ़े....तभी द्वार पर दस्तक हुई। दरवाजा खोला तो सामने एक युवती खड़ी थी! प्रश्नसूचक दृष्टि से डिक्सन ने उसको देखा तो युवती बोली : ‘क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ?’ डिक्सन ने उसको अन्दर आने दिया।

वह युवती, वास्तव में इस मकान में पहले रहनेवाली एक लड़की का प्रेत थी! जिसकी इस मकान में हत्या कर दी गई थी। उसका नाम था ‘मिस ज्यूरी’। उसने डिक्सन से कहा : ‘आप पुलिस इन्स्पेक्टर हैं, इसलिए मुझे विश्वास है कि आप मेरी सहायता करेंगे। जिस बंगले में आप रह रहे हैं,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पन्द्रह वर्ष पहले यह मेरा बंगला था। मैं यहाँ मेरे वृद्ध पिता के साथ रहती थी। मेरे पिता ने ही मुझे पाला-पोषा, बड़ा किया और पढ़ाया। मेरे बड़े होने के बाद मेरे पिताजी की मृत्यु हो गई। मैं असहाय हो गई। गुजारे का प्रबन्ध करने के लिए मैं इस बंगले को किराये पर देने लगी।

और ज्यूरी का प्रेत खामोश हो गया :

पहला किरायेदार आप जैसा ही पुलिस अफसर था। उससे मेरी घनिष्ठता बढ़ी। हम दोनों ने शादी करने का सोचा। हम दोनों में पति-पत्नी के सम्बन्ध भी स्थापित हो गया। मैंने अपनी सारी जिम्मेदारियाँ उस अफसर पर छोड़ दीं। परन्तु जब मैं गर्भवती हुई, मैंने उससे अपनी स्थिति स्पष्ट करके, कानून की निगाह में पति-पत्नी बन जाने के लिए कहा तो वह इनकार कर गया। जब मैंने दबाव डाला तब उसने मेरी हत्या कर दी।

इतना कहकर ज्यूरी का प्रेत चूप हो गया। फिर बोला : 'आप उस अपराधी को गिरफ्तार कर सजा दिलवाइये। परन्तु आप अपराध सिद्ध करने के प्रमाण कहाँ से लायेंगे? आप इसी असमंजस में हैं न? चिन्ता नहीं करें, मैं सारे प्रमाण उपलब्ध करा दूँगी। जब तक अपराधी को सजा नहीं मिलेगी तब तक मेरी आत्मा इसी प्रकार भटकती रहेगी और इस बंगले में आनेवाले किसी व्यक्ति को चैन से नहीं रहने देगी! आप अच्छी तरह विचार कर निर्णय करना, मैं कल फिर इसी समय आऊँगी।'

इसके बाद उस युवती का रूप एकदम बदल गया। उसका चेहरा पूरी तरह विकृत हो गया। एक चुडैल जैसी आकृति उभर आई। कुछ देर बाद वह आकृति भी लुप्त हो गई।

डिक्सन ने ज्यूरी की हत्या की जाँच करने का निर्णय कर लिया। ज्यूरी की आत्मा ने उसका उस प्रकार मार्गदर्शन किया, जिस प्रकार कोई प्रत्यक्षदर्शी व्यक्ति कर रहा हो! ज्यूरी की लाश के अवशेष बरामद किये गये। उसके हत्यारे प्रेमी को खोज लिया गया, उसे गिरफ्तार किया गया और सजा भी मिल गई। इसके बाद ज्यूरी के प्रेत ने डिक्सन को खूब धन्यवाद दिये और अनेक उपहार दिया!

भूतहा बंगला :

कई बार ऐसा होता है कि निमित्त-परीक्षा सही नहीं होने के कारण मकान अच्छा होने पर भी लोग शंका करते हैं! और एक बार शंका होने के बाद वह

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शंका जल्दी दूर नहीं होती है। पूना-बंबई रोड़ पर एक गाँव है, वहाँ रोड़ पर ही एक बंगला है। लोग उसको 'भूतहा बंगला' कहते हैं। जब से बंगला बना तब से शंका हो गई कि 'इस बंगले में भूत रहता है!' बंगला बनानेवाला रहने ही नहीं आया!

हमारा स्वानुभव :

एक बार हम लोग अपने आचार्यदेव के साथ विहार करते-करते वहाँ पहुँचे। हम करीबन् ५० साधु थे। रात्रि-निवास के लिए बड़ा मकान चाहिए था। हमने वह भूतहा बंगला देखा। उसके चौकीदार से पूछा : 'भाई, हम लोग क्या इस मकान में रात्रि व्यतीत कर सकते हैं? सुबह तो हम लोग चले जायेंगे।' चौकीदार ने कहा : 'महाराज, यह भूतहा बंगला है! इसमें तो बंगले का मालिक भी रात में नहीं रहता है! चूँकि रात्रि में भूत दिखाई देता है!' चौकीदार की बात सुनकर मुझे मज़ा आ गया! मैंने कहा : 'भाई, तब तो तू हमें इजाज़त दे, ताकि हम भूत को देख सकें! हमने कभी भूत देखा नहीं है।' तब उसने कहा : 'महाराज, ठहरना हो तो ठहरो, परन्तु कुछ हो जाय तो मेरी जिम्मेदारी नहीं रहेगी!' हमने कहा : 'तुम निश्चिंत रहो, हमें कुछ भी होनेवाला नहीं है! भूत होगा तो भी चला जायेगा!'

इजाज़त मिल गई। बंगला खुल गया। चौकीदार ने बंगला साफ कर दिया। हम ऊपर ही पहली मंजिल पर ठहरे। किसी साधु को हमने भूत की बात नहीं बताई, केवल हमारे आचार्यदेव को बताई। उन्होंने कहा : 'चिन्ता नहीं करना, परन्तु दो-दो साधु जगते रहना।' हमने आज्ञा स्वीकार की और हम दो साधु बारह बजे तक जगते रहे। सब साधु सो गये थे। संभवतः पूर्णिमा की रात थी, बंगले पर चन्द्र का प्रकाश गिर रहा था।

न तो भूत आया, न हमने भूत देखा! :

उस बंगले के चार दरवाजे थे। चौकीदार ने हमको एक दरवाजा बताकर कहा था कि 'इस तरफ ध्यान रखना।' हम उस तरफ ध्यान रखते बैठे थे। करीबन् एक बजे उस दरवाजे पर किसी ने दस्तक दी। फिर कोई नीचे का दरवाजा खोलने की कोशिश करता हो, वैसी आवाज आने लगी। हम दोनों साधु खड़े हुए और धीरे-धीरे उस सीढ़ी के पास पहुँचे। नीचे के द्वार पर खटखट की आवाज आ रही थी। धीरे-धीरे हम नीचे उतरे। दरवाज़े की चिटकनी खुली थी, हमने बंद कर दी। दरवाजा बिल्कुल बन्द हो गया। हम

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वहाँ १० मिनट खड़े रहे। आवाज बन्द हो गई थी। हम भी सो गये। कुछ भी दुर्घटना नहीं हुई। प्रातः आवश्यक धर्मक्रिया कर जब हमने वहाँ से प्रयाण किया, चौकीदार को कहा : 'भाई, हम जाते हैं, हमें कोई तकलीफ नहीं हुई है! न भूत आया....न भूत देखा! हाँ, उस दरवाजे पर आवाज आई थी, परन्तु वह तो हवा से दरवाजे के द्वार ही खटखट करते थे, हमने द्वार पर चिटकनी लगा दी, आवाज बंद हो गई! इसलिए भूत की शंका नहीं रखना!'

निमित्त-परीक्षा अच्छी तरह होनी चाहिए। जमीन या मकान के लक्षण निमित्त-परीक्षा से ही जाने जा सकते हैं। परीक्षा करनेवाले का ज्ञान यथार्थ होना चाहिए। परीक्षा करते समय उसका मन स्वस्थ होना चाहिए। उसका निर्णय संशयरहित होना चाहिए।

गुजरात के एक शहर में मेरा एक परिचित परिवार रहता था। यों तो वे लोग एक छोटे गाँव में रहते थे, परन्तु वे शहर में रहने आये। किराये पर एक मकान ले लिया और एक दुकान ले ली। परिवार सहित शहर में बस गये और धन्धा शुरू कर दिया। परन्तु एक वर्ष में ही लाख रूपये का नुकसान कर दिया! ४० साल पहले की बात कहता हूँ। जिस घर में रहते थे, उस घर में भी शान्ति नहीं रही। बीमारी ही बीमारी और भूत-प्रेतों का दर्शन! शीघ्र ही उन्होंने घर बदल दिया। दुकान बंद कर दी और दो लड़कों को बंबई भेज दिया। तब जाकर वे स्थिर हुए, स्वस्थ बने और कुछ समृद्धि पायी।

दूसरे एक भाई ने मुझे बताया कि उनको रात्रि के समय सतत तीन दिन तक एक आवाज सुनाई देती थी - 'मुझे बाहर निकालो, मुझे बाहर निकालो....।' वे महानुभाव कुछ समझ नहीं पाये। उन्होंने एक अनुभवी मांत्रिक से पूछा। मांत्रिक ने बताया कि तुम्हारे घर में कुछ न कुछ दबा हुआ पड़ा है। तुम खोदकर देखो। उसने जगह बताई, खोदा गया तो भीतर से एक अस्थिपिंजर निकला! यह निकल जाने के बाद उस भाई के पास विपुल संपत्ति आई और परिवार में भी शान्ति हुई।

भूत-प्रेत की भी अपनी विशाल दुनिया है :

सभा में से : आपने भूत-प्रेत की बात कही, क्या वास्तव में भूत-प्रेत होते हैं?

महाराजश्री : होते हैं वे भी! निम्नस्तर के देवों की विशाल दुनिया है। जैनदर्शन संसार की चार गति बताता है। देवगति, मनुष्य गति, तिर्यंच गति और नरक गति। देवगति में असंख्य देव हैं। देवियाँ भी होती हैं। उनमें अनेक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कक्षाएँ होती हैं। भिन्न भिन्न दृष्टि से वे कक्षाएँ होती हैं। संपत्ति की दृष्टि से और गुणों की दृष्टि से। देवों की सृष्टि में एक व्यंतर जाति होती है। व्यंतर जाति में भी अनेक प्रकार हैं। उसमें एक प्रकार होता है भूतों का। हालाँकि सभी भूत उपद्रवी नहीं होते। भूत अच्छे भी होते हैं और बुरे भी होते हैं। यदि कोई मनुष्य वासना को लेकर मरता है और भूतयोनि में जन्म पाता है, वहाँ यदि उसकी वासना-अच्छी या बुरी-जाग्रत होती है तो वह अपने दिव्य ज्ञान से जिसको 'विभंग ज्ञान' कहते हैं, उस ज्ञान से वह अपनी गत जन्म की घटनाओं में यदि हत्या की घटना देखता है, यानी उसकी हत्या हुई हो, उसके प्रेमपात्र की हत्या हुई हो और उसका बदला लेने की वासना रह गई हो, तो वह मनुष्यलोक में आता है। बदला लेकर छोड़ता है।

वैसे, उसके पूर्वजन्म में यदि किसी ने उसकी संपत्ति छीन ली हो, किसी ने बलात्कार किया हो, अपहरण किया हो....और वैर की वासना लेकर मरा हो, तो उसका बदला लेने के लिए वह मनुष्यलोक में आता है। बदला लेकर वापस लौट जाता है अथवा मनुष्यलोक में भटकता रहता है।

जिस प्रकार वैर की वासना से भूतयोनि के देव यहाँ आते हैं वैसे प्रेम की वासना से भी आते हैं। ये देव आकर अपने प्रेमपात्र की रक्षा करते हैं, उसको धन-संपत्ति देते हैं और अनेक प्रकार के उपहार देते हैं।

ठगों से-असली-नकलियों से सावधान! :

परन्तु एक बात अच्छी तरह समझ लेना कि असल की नकल होती ही है! कुछ लोग ऐसा दावा करते हैं कि उनके शरीर में देव आता है! कुछ के शरीर में भूत-प्रेत आता है! कुछ स्त्री-पुरुष, जो ऐसा दावा करते हैं, मैंने देखा है कि नब्बे प्रतिशत दंभी होते हैं। अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए, भूत-प्रेत और देवों में श्रद्धा रखनेवालों को धोखा देते हैं। लोगों को ठगते हैं। ऐसे लोग, बुद्धिमानों को देव-देवी के विषय में अश्रद्धा पैदा करते हैं। परन्तु दुनिया में दुःखी और मूर्ख लोग नहीं होते तो धूर्तों का अस्तित्व ही नहीं होता! कभी कभी मनुष्य ज्यादा दुःखों से मूर्ख बन जाता है। बुद्धिमान् मनुष्य भी जब गहरे संकट में फँस जाता है तब मूर्ख बन जाता है और किसी ठग के पल्ले पड़ जाता है।

सभा में से : मालूम हो जाय कि यह धूर्त है, तो उसको फिर प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए न?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महाराजश्री : नहीं देना चाहिए, इतना ही नहीं, लोगों को सावधान भी कर देना चाहिए। फिर भी मैं आपको कहता हूँ कि उन लोगों का 'बिजनेस' चलता रहेगा! 'मुझे अमुक देव प्रसन्न है....अमुक देवी प्रसन्न है!' बस, दो चार सहयोगी मिल जाने चाहिए और कुछ आडंबर! फिर चालू हो जायेगा तमाशा!

सत्य घटना - एक ढकोसले की :

बंबई के उपनगरीय विस्तार में एक राजस्थानी परिवार रहता है। लड़के की शादी हुई। पुत्रवधू घर में आई। अभिमानी थी, सास के साथ झगड़े शुरू हुए और बहू अपने मायके राजस्थान चली गई। एक वर्ष तक पितृगृह में रही। पर्युषणपर्व में १५ दिन के उपवास किये। उसके माता-पिता ने पूछा : 'तू १५ उपवास कैसे करेगी?' उसने कहा : 'मेरे स्वप्न में गुरुदेव आये और उन्होंने कहा कि तू १५ उपवास करना। मैं तेरे लिए देवलोक से वासक्षेप भेजूँगा। मेरी तसवीर में से वासक्षेप मिलेगा!' और उसने वासक्षेप की एक पुड़िया बताई, जो उसको गुरुदेव ने दी थी! बस, बात चल पड़ी सारे गाँव में! लोग उसका दैवी वासक्षेप लेने आने लगे! बात पहुँची उसके ससुराल में बंबई! वे लोग भी तुरन्त राजस्थान पहुँचे। पुत्रवधू का मान-सम्मान देखा! वे लोग भी मुग्ध बने। पारणा करा कर बंबई ले आये। गुरुदेव का फोटो भी साथ में ले आये, जिसमें से दैवी वासक्षेप निकलता था! बंबई में भी हजारों नहीं, लाखों राजस्थानी जैन बसते हैं। लोगों को ज्यों-ज्यों मालूम पड़ता गया, त्यों-त्यों उसके घर लोग पहुँचने लगे। उस स्त्री के सर में से कंकु निकलने लगा था! घर में उसकी सास, उसके श्वसुर, उसका पति....सब उसके आज्ञांकित बन गये थे!

बात अखबारों तक पहुँची। अखबारों के प्रतिनिधि भी बात क्या है - जानने के लिए उस महिला के घर पहुँचे। उन प्रतिनिधियों ने उससे पूछा : 'आप हमें वासक्षेप बतायेंगी? जो वासक्षेप आपके गुरुदेव देवलोक से भेजते हैं!' उस महिला ने गुरूदेव की तसवीर के पीछे से एक पुड़िया निकाली और बताई।

'क्या सीधी ऐसी पुड़िया ही आती है या आप पुड़िया बनाती हैं?'

'नहीं नहीं, यह पुड़िया ही आती है!'

यह सुनकर अखबारों के प्रतिनिधि एक-दूसरे के सामने देखने लगे! तो एक प्रतिनिधि बोला : 'भाइयो, हमारा अखबार 'मुंबई समाचार' तो देवलोक में भी जाता है....देखो पुड़िया का कागज!'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'मुंबई समाचार' अखबार के ही कागज में वासक्षेप बंधा हुआ था! सारी बात 'बोगस' सिद्ध हुई।

एक गाँव में एक दिलचस्प घटना सुनने को मिली थी। वहाँ एक परिवार एक किराये के मकान में रहता था। किसी ने शंका की थी कि इस मकान में रहनेवाला सुखी नहीं होता है। इस परिवार का भी वैसा ही था। न व्यापार जमता था, न घर में शान्ति और प्रेम रहता था। रोजाना सास-बहू के झगड़े! पुत्र और पुत्रवधू में भी झगड़े!

पुत्रवधू को मिरगी आने लगी। उसके दांत बंध जाने लगे। शरीर काँपने लगा....मूर्च्छा आने लगी। आसपास के कुछ लोगों ने कहा : 'बहू को चुड़ैल लगी है....किसी मांत्रिक को बताइये।' गाँव में एक ही मुसलमान मांत्रिक था। उसको बुलाया गया। तीन दिन तक रोजाना आता रहा। उसे जो जानना था वह जान लिया। चौथे दिन उसने आकर कहा : 'आज मैं इस चुड़ैल से लड़ूँगा, मारकर भगाऊँगा....इसलिए मुझे गुप्त मंत्रप्रयोग करने पड़ेंगे। सो आप सब इस कमरे से चले जायँ। सबको बाहर निकाल दिया, भीतर से दरवाजा बन्द कर दिया। खिड़कियाँ भी बन्द कर दीं। दीया जलाया, धूप किया और उस औरत को जगाया। दोनों का पूर्व संकेत था। दोनों की दुराचार-लीला होने लगी। बीच-बीच में वह मियां हल्ला मचाता, औरत भी चिल्लाती....ताकि बाहरवाले समझें कि चुड़ैल को निकाला जा रहा है!

परन्तु जब एक घंटा हो गया, द्वार खुले नहीं तब उस महिला के पति से रहा नहीं गया, उसने मकान के छप्पर को खोलकर देखा.... दोनों की पाप-लीला देख ली। फिर क्या हुआ होगा, वह क्या मुझे कहना पड़ेगा? आप समझ सकते हो। मियां की तो हड्डी-पसली एक भी सलामत नहीं रही होगी।

भूत की शंका के गैरलाभ भी इस प्रकार उठाते हैं लोग! कभी वास्तविकता होने पर भी लोग नहीं मानते! आखिर तो जीव के जैसे पापकर्म-पुण्यकर्म होते हैं, उसी प्रकार सुख-दुःख मिलते हैं।

कर्मोदय में निमित्त की अपेक्षा :

सभा में से : सुख और दुःख का आधार यदि पुण्यकर्म और पापकर्म होते हैं तो फिर जमीन-मकान आदि के लक्षण वगैरह देखने की आवश्यकता क्यों?

महाराजश्री : सही बात है आपकी, परन्तु फिर भी जानकारी है अपूर्ण आपकी। जीवात्मा के सभी सुख-दुःख के मूलभूत कारण पुण्य-पाप कर्म हैं,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यह बात तो सही है, परन्तु ऐसे भी कर्म होते हैं कि जो निमित्त पाकर ही उदय में आते हैं। वे निमित्त होते हैं द्रव्यात्मक, कालात्मक और क्षेत्रात्मक। जैसे, मनुष्य के पास कोई उत्तम द्रव्य, उत्तम वस्तु आती है और उसका भाग्योदय होता है! उसका पुण्यकर्म तो था, परन्तु कोई निमित्त की उसको अपेक्षा थी। उसके पास दक्षिणावर्त्त शंख आया और पुण्य उदय में आया! उसके घर में पद्मिनी नारी आई और पुण्यकर्म उदय में आया! उसके घर में उत्तम पुत्र का जन्म हुआ और पुण्यकर्म उदय में आया! ये हैं द्रव्यात्मक निमित्त।

कालात्मक निमित्त उसको कहते हैं कि पुण्यकर्म अमुक उम्र होने पर ही उदय में आये। गुजरात का राजा कुमारपाल ५० वर्ष की उम्र में राजा बना था। ५० वर्ष की उम्र में पुण्यकर्म उदय में आया। वैसे किसी को १० वर्ष की आयु में, किसी को २५ वर्ष की आयु में कर्म उदय में आता है।

वैसे क्षेत्रात्मक निमित्त भी होते हैं। एक व्यक्ति इस शहर में जब आया तब ही उसको पुण्योदय हुआ। देश में-गाँव में था तब उसके पास पापोदय था।

पुण्यकर्म और पापकर्म सनिमित्तक हैं :

सभा में से : यहाँ पर हम लोग जो बैठे हैं, उनमें से ६० प्रतिशत लोगों ने यहाँ आकर ही रुपये कमाये हैं।

महाराजश्री : वैसे, कुछ लोग बंबई जाकर, कुछ लोग मद्रास जाकर....दूसरी दूसरी जगह जाकर धन-संपत्ति कमाते हैं, यह क्या है? पुण्यकर्म तो है, परन्तु क्षेत्रनिमित्तक पुण्यकर्म! अमुक क्षेत्र में जायँ तो ही पुण्यकर्म उदय में आये!

मैंने ऐसे लोग देखे हैं कि जिस घर में वे २५ साल से रहते थे, दरिद्र थे, वे लोग नये-दूसरे मकान में रहने गये और उनकी दरिद्रता चली गई! ३० साल से जिस दुकान में धंधा करते थे, लाख रुपये भी जमा नहीं कर पाये थे, दुकान बदल दी और दो वर्ष में पाँच लाख रुपये जमा कर लिए! इसमें स्थान का, जगह का, क्षेत्र का महत्त्व मानना ही पड़ेगा। पुण्यकर्म और पापकर्म सनिमित्तक होते हैं और अनिमित्तक भी होते हैं। कुछ कर्म ऐसे भी होते हैं जो बिना निमित्त उदय में आ जाते हैं। जहाँ तक जमीन और मकान का प्रश्न है, सनिमित्तक कर्मों का महत्त्व होता है।

जहाँ तक हो सके, जमीन और मकान लेते समय आप लक्षण देखें। निमित्त परीक्षा के माध्यम से देखें। शंका, विपर्यास और अज्ञान को दूर करके देखें।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक जरूरी सावधानी :

गृहनिर्माण के विषय में तो ग्रन्थकार एक ही सावधानी रखने की बात करते हैं। मकान में प्रवेश-निर्गमन के अनेक द्वार नहीं होने चाहिए! परिवार की और धन-संपत्ति की सुरक्षा की दृष्टि से यह बात कही गई है। अनेक प्रवेश-निर्गमन के द्वार होने से चोर, बदमाश वगैरह का खतरा ज्यादा रहता है। परिवार की महिलाओं की लज्जा-मर्यादा भी नहीं रह सकती है।

हाँ, जो लोग चारों दरवाजों पर चौकीदार रख सकते हों, सुरक्षा का कड़ा प्रबन्ध कर सकते हों, वे लोग अनेक द्वार रखें तो चिन्ता की बात नहीं हो सकती है। जैसे पहले राजमहल में रक्षा का प्रबन्ध रहता था न? फिर भी रानीवास में प्रवेश-निर्गमन के अनेक मार्ग नहीं रखे जाते थे! एक ही दरवाजा होता था आने का और जाने का! यह थी सुरक्षा की दृष्टि। यह है गृहस्थ जीवन का सामान्य धर्म!

गृहस्थ को घर में रहकर धर्मआराधना करने की होती है, यदि घर के विषय में इतनी सावधानियाँ रखी जायँ, तो निष्प्रयोजन अनेक उपद्रव टल जायँ और शान्ति से धर्माराधना हो सके। उपद्रवग्रस्त, दरिद्रताग्रस्त गृहवास में मनुष्य इच्छा होने पर भी विशेष धर्मपुरुषार्थ नहीं कर पाता है। इसलिए इस सामान्य धर्म के पालन की आवश्यकता बताई गई है।

योग्य स्थान पर गृहनिर्माण होना चाहिए-इस नौवें सामान्य धर्म का विवेचन यहाँ पूर्ण करता हूँ।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***दसवाँ सामान्य धर्म है वेश-भूषा। आज आप लोग केवल शरीर-सौन्दर्य को लक्ष्य करके और एक-दूसरे का अन्ध-अनुकरण करके वस्त्र-परिधान कर रहे हो!***
- ***तुम्हारे वैभव-रुतबे के अनुरूप, तुम्हारी उम्र के अनुरूप, तुम्हारी अवस्था के अनुरूप और तुम्हारे देश-राष्ट्र के अनुरूप तुम्हारी वेश-भूषा होनी चाहिए। लोगों में मज़ाक हो वैसी वेश-भूषा से बचना चाहिए।***
- ***धर्मस्थानों में कुछ लड़के-लड़कियाँ, समझ में नहीं आता है....वे 'एक्टर'-'एक्ट्रेस' बन कर क्यों आते हैं? क्या वे सज्जन-सद्गृहस्थ और सन्नारी बनकर नहीं आ सकते?***
- ***जो लोग अपने देश के अनुरूप, अपने समाज के अनुरूप कपड़े नहीं पहनते हैं वे कभी न कभी आफत का शिकार हो ही जाते हैं।***
- ***उत्तर प्रदेश की एक सच्ची घटना मैं आपको बता रहा हूँ!***

प्रवचन : ५६

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्यदेव श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी ने स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में क्रमिक मोक्षमार्ग का प्रतिपादन किया है। जिस किसी मुमुक्षु को क्रमिक आत्मविकास करते जाना है और आत्मानन्द की निकटता प्राप्त करना है, इसके लिए इस ग्रन्थ का मार्गदर्शन सर्वोत्तम सिद्ध होगा।

गृहस्थ जीवन के एक-एक कर्तव्य में कैसी दिव्य ज्ञानदृष्टि दी है ग्रन्थकार ने! ताकि कर्तव्य मात्र कर्तव्य नहीं रहे, परन्तु धर्म बन जाय! जीवन के हर कर्तव्य को धर्मरूप बना देने के लिए 'धर्मबिन्दु' का गहन और व्यापक अध्ययन करना चाहिए। मैं भी इसलिए इन ३५ सामान्य धर्मों का व्यापक और गहराई में जाकर विवेचन कर रहा हूँ ताकि आपके हर कर्तव्य के पालन में धार्मिकता आ जाय। आपका समग्र जीवन-व्यवहार मंगलमय बन जाय।

मनुष्य-जीवन की महत्त्वपूर्ण क्रिया : वस्त्र-परिधान :

दसवाँ सामान्य धर्म है वेश-भूषा। गृहस्थ को कैसे वस्त्र पहनने चाहिए, इसका समुचित मार्गदर्शन दिया गया है। आज के युग में यह मार्गदर्शन विशेष महत्त्व रखता है। चूँकि आज आप लोग केवल सौन्दर्य की दृष्टि से और

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गतानुगतिकता से वस्त्र परिधान कर रहे हो। सौन्दर्य की दृष्टि भी संस्कृत नहीं है, विकृत है। सच्चा सौन्दर्यबोध भी नहीं है।

वस्त्र-परिधान, मनुष्य-जीवन की महत्त्वपूर्ण क्रिया है। अपने देश में इसका विशेष महत्त्व है, क्योंकि इस देश में जन्म पानेवालों का विशेष महत्त्व है। यह महत्त्व मोक्षमार्ग की दृष्टि से है, धर्मपुरुषार्थ की दृष्टि से है। यह महत्त्व यदि आप समझेंगे तो ही वस्त्र-परिधान की जो बात यहाँ मैं बताऊँगा वह बात आप समझ पायेंगे।

वस्त्र-परिधान के विषय में पाँच बातें यहाँ बताई गई हैं :

१. आपके वैभव के अनुरूप वेश-भूषा होनी चाहिए।

२. आपकी उम्र के अनुरूप वेश-भूषा होनी चाहिए।

३. आपकी परिस्थिति के अनुरूप वेश-भूषा होनी चाहिए।

४. आपके देश के अनुरूप वेश-भूषा होनी चाहिए और

५. लोगों में उपहास न हो, वैसी वेश-भूषा होनी चाहिए।

वस्त्र-परिधान करते समय इतनी बातें आपके ध्यान में रहनी चाहिए। इन बातों को ध्यान में रखते हुए आपको वस्त्र-परिधान करना चाहिए। कहिए, इन में से कितनी बातों का ध्यान रखते हो? हाँ, आप लोग जो व्यापारी हैं, प्रौढ़ और वृद्ध हैं, उनकी वेश-भूषा तो फिर भी ठीक है, उचित और मर्यादा में है, परन्तु जो युवक हैं, युवतियाँ हैं, उनकी वेश-भूषा कैसी हो गई है? चूँकि उनको यह मार्गदर्शन मिला नहीं है। यदि किसी को मिला है, तो इस मार्गदर्शन के अनुसार वह जी नहीं सकता है! क्योंकि ज्यादातर युवक-युवतियाँ जिस प्रकार के वस्त्र पहनते होंगे, उसी प्रकार के कपड़े यदि नहीं पहनें तो उनका उपहास होता है! उस उपहास को सहन करते हुए अपनी उचित वेश-भूषा करनेवाले कितने? इतना सत्त्व कितनों का?

फैशन ज्यादा कपड़े फाड़ता है :

युवावर्ग में आज 'फैशन' और अनुकरण ही व्यापक बना है। सिनेमा और नाटक देखने वाले, 'एक्टर' और 'एक्ट्रेसों' की वेश-भूषा देखते हैं और उनका अनुकरण करते हैं। और ज्यादातर लोग जब वैसी वेश-भूषा पसंद करते हैं तब लोगों को कुछ अनुचित भी नहीं लगता है। माता-पिता को भी अनुचित नहीं लगता है। किसी माता-पिता को अनुचित लगता है तो वे रोक नहीं पाते।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'क्या करें? लड़का मानता नहीं, लड़की मानती नहीं!' मनस्विता और औद्धत्य भी व्यापक बना है न? किसी की बात मानता नहीं, मन में आये वैसा करना, यह आज के समय की सबसे बड़ी समस्या बन गई है।

यूँ देखा जाय तो अंग्रेजों की वेश-भूषा 'इन्टरनेशनल' बन गई है। पेन्ट और शर्ट, पेन्ट और बुशशर्ट! पेन्ट, शर्ट, कोट, टाई....! फिर कोई भी ऋतु हो! सर्दियों में और गर्मियों में....ये ही वस्त्र! श्रीमन्त हो, गरीब हो या मध्यम स्थिति का हो। वस्त्र-परिधान में वैभव-संपत्ति कोई माध्यम नहीं रहा है।

कपड़ों का कमाल :

एक बार जब हम राजस्थान में विहारयात्रा कर रहे थे, रास्ते में एक फैशनेबल वस्त्र पहना हुआ युवक मिल गया। स्टेशन से अपने गाँव जा रहा था। ऐसे वस्त्र पहने थे उसने, जैसे गाँव का ठाकुर हो! हमने उसका परिचय पूछा तो पता लगा कि वह अहमदाबाद की एक मिल का मजदूर था! हमने कहा : 'भाई तुम ऐसे लगते हो कि जैसे गाँव के ठाकुर हो!' तो वह हँसने लगा। उसने कहा : 'इससे गाँव में लोग मेरी ओर देखते रहते हैं और मानते हैं कि मैं अहमदाबाद में बहुत रुपये कमाता हूँ। मेरी इज्जत बढ़ती है।' मैंने कहा : 'परन्तु गाँव का कोई आदमी अहमदाबाद आ जाय और तुम्हें मजदूर के रूप में देखेगा तब तुम्हारी इज्जत का क्या होगा?' उसने मेरे सामने देखा, कुछ बोला नहीं और गाँव चला गया!

सत्य घटना :

गरीब होने पर भी श्रीमंत दिखने की आकांक्षा आज बहुत व्यापक दिखाई दे रही है। जब कि प्राचीन काल में, श्रीमंत होने पर भी श्रीमंताई का प्रदर्शन करने की नफरत कैसी सख्त होती थी इस विषय पर एक सच्ची घटना सुनाता हूँ।

दक्षिण में तब माधवराव पेशवा का राज्य था। पेशवा के प्रधान मंडल में 'रामशास्त्री' नाम के प्रकांड विद्वान का भी समावेश था। वे प्रधान तो थे ही, साथ-साथ वे न्यायाधीश भी थे और पेशवा परिवार के गुरुपद पर भी उनकी प्रतिष्ठा थी। उस समय भारत में रामशास्त्री जैसे बहुत थोड़े न्यायाधीश थे। कहा जाता था कि न्याय तो रामशास्त्री का!

नये वर्ष का पवित्र दिन था। नगर की महिलाएँ राजमाता के दर्शन करने और नूतन वर्ष के अभिनन्दन देने के लिए राजमहल में जाती थीं। रामशास्त्री

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की पत्नी भी राजमहल गई। राजमहल के नारीवृन्द ने रामशास्त्री की पत्नी को बिल्कुल साधारण वस्त्रों में देखा....सादगी की मूर्ति देख लो! न कोई आडम्बर, न कोई अलंकार! नारीवृन्द ने सोचा : 'रामशास्त्री जैसे रामशास्त्री की धर्मपत्नी और कोई सुन्दर साजसज्जा न हों तो अच्छा नहीं लगता। अपन उनको सुन्दर वस्त्र पहनाएँ और मूल्यवान् अलंकारों से सुशोभित करें।' नारीवृन्द था पेशवा का! रामशास्त्री की पत्नी को घेर लिया। पहना दिये सुन्दर वस्त्र! सजा दिये अलंकार! वह बेचारी तो इनकार करती रही....पर सुने कौन? राजपरिवार की महिलाओं को रामशास्त्री की पत्नी की ओर गुणानुराग था, प्यार था। बस, फिर क्या? उसको सजाकर राजमाता के पास ले गईं। राजमाता भी खुश हो गई।

भाई, तुम्हारी गलती हो रही है :

राजमाता को मिलकर जब वह राजमहल से बाहर आई तो पालकी तैयार थी! पालकी में बैठकर वह अपने घर पर आई। राजपुरुष ने रामशास्त्री के घर के द्वार खटखटाये। रामशास्त्री ने स्वयं द्वार खोले और बाहर आये। देखा तो श्रीमतिजी पालकी में बैठी हैं! शास्त्रीजी तुरंत ही सारी बात समझ गये! पालकी के साथ जो राजपुरुष आये थे, उनको शास्त्रीजी ने कहा। : 'भाई, आप लोगों की कुछ गलती हो रही है, आप लोग जो घर खोजते हो वह यह नहीं है। इतनी साजसज्जा की महिला मेरे सादे-सीधे घर की कैसे हो सकती है?'

शास्त्रीजी ने मकान का दरवाजा बन्द कर दिया। पालकी में बैठी हुई शास्त्रीजी की पत्नी ने बात सुन ली थी! उसने राजपुरुषों से कहा : 'पालकी वापस राजमहल ले चलो।' राजमहल में जाकर शास्त्रीजी की पत्नी ने सारे गहने उतार दिये और अपने सादे वस्त्र पहन लिये। पैदल चलकर अपने घर पर आई। शास्त्रीजी खुश हो गये। उन्होंने अपनी पत्नी से कहा : 'तुझे मालूम है? तू घर में नहीं थी तब कौन यहाँ आया था?'

'कौन आया था?' पत्नी ने पूछा।

'एक खूबसूरत महिला, बड़ा शृंगार किया था उसने और वह अपने घर में प्रवेश करना चाहती थी!'

सुनकर शास्त्रीजी की पत्नी बात का मर्म समझ गई और हँसकर बोली : 'उस बेचारी को पता नहीं होगा कि आप एक पत्नी व्रतधारी महापुरुष हैं।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और दोनों एक साथ हँस पड़े।

रामशास्त्री सादगी के कितने आग्रही थे, वह बात आप समझे न? क्या इससे उनका व्यक्तित्व गिर गया था? समाज में उनकी इज्जत कम हो गई थी? आज तो यह भी एक भ्रमणा व्यापक बनी हुई है कि सुन्दर और मूल्यवान् वस्त्र पहनने से व्यक्तित्व प्रभावशाली बनता है।'

क्या जमाना है?

मेरा एक परिचित लड़का कॉलेज में पढ़ता है। एक बार अपने एक दोस्त को लेकर मेरे पास आया। कुछ धर्मचर्चा हुई। उस मित्र को जाना था इसलिए वह चला गया। मैंने अपने परिचित लड़के से पूछा : 'तेरा मित्र श्रीमंत परिवार का लड़का दिखता है।' उसने कहा : 'नहीं, नहीं, उसके पिताजी तो गरीब हैं, दूसरे श्रीमन्तों की सहायता से वह पढ़ रहा है।'

मैंने कहा : 'क्या इतने बढ़िया किस्म के कपड़े भी वह दूसरों की सहायता से पहन रहा है? इतना मूल्यवान् 'रिस्ट वाच' भी दूसरों की सहायता से पहन रहा है?'

उसने कहा : 'महाराज साहब, आपके सामने क्या बात करूँ? वह एक लड़की के चक्कर में है। उसके सामने वह यह बताना चाहता है कि 'मैं श्रीमन्त पिता का लड़का हूँ।' आजकल ऐसी धोखेबाजी चल रही है। दानवीरों के दान का गैरलाभ उठाया जा रहा है। अलग-अलग फैशन के दस-बीस सूट रखना तो मामुली बात हो गई है।'

लड़कियों की दृष्टि में लड़कों को सुन्दर दिखना है और लड़कों की दृष्टि में लड़कियों को अपने आपको सुन्दर दिखाना है! सुन्दर, श्रीमन्त और शिक्षित दिखने के लिए वस्त्र-परिधान किया जाता है। कुकर्म और कुरूपता को ढँकने के लिए साजसज्जा की जाती है। स्कूल-कॉलेज में और सिनेमा-नाटक में, होटल-रेस्टोरन्ट में और क्लबों में, गार्डनों में और शादी-समारंभों में तो वस्त्रप्रदर्शन और देहप्रदर्शन की स्पर्धाएँ देखने को मिलती ही होंगी।

मंदिरों में मेला लगता है... क्या....??

धर्मस्थानों में और धार्मिक प्रसंगों में भी ऐसी प्रदर्शनियाँ देखने को मिलती हैं।

धर्मस्थानों में आनेवाले स्त्री-पुरूषों को, कैसे वस्त्र पहनकर धर्मस्थानों में

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आना चाहिए, यह विवेक है क्या? कोई मर्यादा का खयाल है क्या? आप लोग किसलिए धर्मस्थानों में आते हो, यहाँ आकर आपको क्या करना है, क्या पाना है-इस बात का खयाल है क्या? इधर मन्दिरों में कोई मेला तो लगता नहीं! इधर धर्मशाला में-उपाश्रय में कोई पार्टी का आयोजन तो होता नहीं! यहाँ पर क्यों एक्टर बनकर और एक्ट्रेस बनकर आते हो? यहाँ भी सद्‌गृहस्थ और सन्नारी बनकर नहीं आ सकते? दुर्भाग्य है अपना और अपने समाज का। न आप लोग किसी का अनुशासन मानते हो, न आप स्वयं उद्‌बुद्ध बनते हो।

आप एक बात मत भूलना कि जैसे कपड़े पहनेंगे, आपके मन पर वैसा प्रभाव पड़ेगा। जीवन की हर क्रिया का संबंध मन के साथ है। यदि आप संयम की दृष्टि से वस्त्र-परिधान करेंगे तो आपका मन संयम में रहेगा। यदि आप औद्धत्यपूर्ण वस्त्र-परिधान करेंगे तो आपका मन संयम में नहीं रहेगा। आप अनुभव करके देखना! एक दिन धोती पहनकर बाहर घूमने जाओ और एक दिन पेन्ट पहनकर बाहर जाओ। आप अपनी मनःस्थिति का अध्ययन करना। एक दिन एक महिला साड़ी पहनकर बाहर जाय और एक दिन स्कर्ट पहनकर या मेक्सी पहनकर बाहर घूमने जाय-बाद में वह यदि अपने मानसिक विचारों का अध्ययन करेगी तो पता लगेगा कि विचारों में कितना फर्क पड़ता है।

'मेरे मन में पवित्र विचार ही रहने चाहिए,' यह निर्णय है आपका?

कौन बचाये उनको? :

सभा में से : कैसे रहें पवित्र विचार? मेरी ऑफिस में, जहाँ मैं सर्विस करता हूँ, ऐसी लड़कियाँ आती हैं सर्विस करने के लिए कि उनकी वेश-भूषा देखकर ही मन गन्दा हो जाता है।

महाराजश्री : इसलिए कहता हूँ कि ऐसे स्थानों में नौकरी ही नहीं करनी चाहिए कि जहाँ शील और सदाचार को खतरा हो। जब परस्त्री के प्रति अनुराग पैदा हो, तब ही सावधान हो जाना चाहिए। चूँकि सर्विस करनेवाली कुछ लड़कियाँ तो Extra `एकस्ट्रा इन्कम' करने के लिए कुछ पुरुषों को अपने मोहपाश में फँसाने का अवसर ही देखती रहती हैं। मैत्री के नाम पर भोगवृत्ति ही पुष्ट होती जाती है और एक दिन पतन के खड्डे में गिर जाते हैं। सर्विस करनेवाली लड़कियाँ और महिलाएँ ज्यादातर ऐसी ही वेश-भूषा बनाती हैं कि दूसरों की दृष्टि उन पर जाये ही। अपने बॉस को खुश करने के लिए,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अपने 'डिपार्टमेन्ट' के मेनेजर को खुश रखने के लिए और कुछ अपने मित्रों को खुश करने के लिए वैसा वस्त्र-परिधान और वैसी हेयर-स्टाइल रखती हैं कि जो मात्र देहप्रदर्शन होता है। शील और सदाचार उनकी कल्पना के बाहर के तत्त्व बन गये हैं। उनकी पर्स में गर्भनिरोधक दवाइयाँ होती हैं। फिर भी यदि गर्भाधान हो जाता है तो 'एबोर्शन' करने में उसे कोई पाप नहीं लगता है। क्रूर हृदय में भृणहत्या करने में उसे कोई संकोच नहीं होता है। दुर्भाग्य से, अपने समाज की भी कुछ लड़कियाँ और महिलाएँ इस मार्ग पर चल रही हैं। कौन बचाये - इनको? भौतिक शारीरिक सुख-सुविधा ही जिनकी दृष्टि बन गई है, उनको कोई बचा नहीं सकता। जिनको बचना ही नहीं है, डूबना ही है, उनको कोई भी नहीं बचा सकता।

जिनको बुराइयों से बचना होता है, बचने की तीव्र इच्छा होती है, वे लोग कैसा वस्त्र-परिधान करेंगे? वे लोग कैसे स्थानों में घूमेंगे? वे लोग किस प्रकार के परिचय करते रहेंगे?

आत्मदृष्टि के अभाव में संस्कृति का नीलाम :

आत्मदृष्टि के अभाव में कुछ ऐसा ही होता रहता है। 'मैं आत्मा हूँ,' यह विचार आता है क्या आप लोगों को? यह शरीर जो है, वह मैं नहीं हूँ, शरीर विनाशी है, मैं अविनाशी हूँ। शरीर में असंख्य विकार हैं, मैं अविकारी हूँ।' ऐसे विचार आते रहते हैं क्या? ऐसे विचार मात्र आप श्रावक-श्राविकाओं को ही आयें ऐसा नहीं है, जो लोग जैन नहीं हैं, अजैन हैं, परन्तु किसी भी धर्म में श्रद्धा रखते हैं, उनको भी ऐसे विचार आने चाहिए। जितने भी आत्मवादी दर्शन हैं वे सभी आत्मस्मृति का, आत्मकल्याण का उपदेश देते हैं। कैसा जीवन जीने से आत्मकल्याण होता है और कैसा जीवन जीने से आत्मा का अहित होता है, ये बातें, इस देश के घर-घर में गूँजती थीं। माता-पिता की ओर से ही वैसी शिक्षा दी जाती थी। वस्त्र-परिधान के विषय में भी अपनी मर्यादाओं का बोध होता था। इससे पारिवारिक और सामाजिक समस्याएँ कम पैदा होती थीं।

यह भी सत्य घटना है :

जो लोग अपने देश के अनुरूप, अपने समाज के अनुरूप वस्त्र नहीं पहनते वे लोग कभी आफत में फँस जाते हैं। कुछ वर्ष पूर्व मैंने उत्तर प्रदेश का एक ऐसा ही किस्सा पढ़ा था। एक गाँव के दो लड़के बनारस विश्वविद्यालय में

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पढ़ते थे। दीपावली की छुट्टियों में अपने गाँव आये थे। दोनों ब्राह्मण थे। परन्तु कॉलेज में पढ़ते थे न! सर से चोटी कटवा दी थी। चोटी रखें तो कॉलेज में 'ओर्थोडाक्स' कहा जाये! दूसरे लड़के-लड़कियाँ उपहास करें! कटवा दी थी अपनी अपनी चोटी। जब वे अपने गाँव आये तब पास में ही कोई पवित्र नदी के किनारे धार्मिक मेला लगा था। नदी के किनारे कोई मन्दिर होगा और वहाँ मेला लगता होगा।

उस गाँव के पास जो दूसरा गाँव था वहाँ मुसलमानों की आबादी थी। उस समय हिन्दू-मुसलमानों को बीच घोर विद्वेष पैदा हुआ था। झगड़े भी हुआ करते थे। हिन्दुओं के गाँव में यदि मुसलमान जाय तो जिन्दा नहीं लौटता था और मुसलमानों के गाँव में हिन्दु जाय तो जिन्दा नहीं लौटता था। हिन्दू मुसलमान को देखते ही मनुष्य मिट जाता था, हिंसक पशु बन जाता था, वैसे मुसलमान हिन्दू को देखते ही मनुष्य मिट जाता था, हिंसक पशु बन जाता था। भीतर की वैर की आग बाहर निकलने का निमित्त देखती थी।

ब्राह्मण है तो मुसलमानी 'ड्रेस' क्यों पहना है?

मेले में सब हिन्दू ही जाते थे, मुसलमान एक भी वहाँ नहीं जाता था। हिन्दू में भी ज्यादातर ब्राह्मण ही वहाँ जाते थे, हजारों की तादाद में! ये दो ब्राह्मण कॉलेजियन युवक भी एक दिन मेले में गये। परन्तु दोनों ने लुंगी पहनी थी! नया-नया फैशन आया था लुंगी पहनने का। और उस प्रदेश में लुंगी हिन्दू लोग नहीं पहनते थे, मुसलमान पहनते थे। मेला ब्राह्मणों का, मेला धार्मिक था और ये दो बुद्धिमान मुसलमान की वेश-भूषा बनाकर पहुँचे मेले में! मेले में लोग इन दो युवकों को घूर-घूर कर देखने लगे। जब ये दोनों युवक मंदिर के पास पहुँचे तब ब्राह्मणों ने घेर लिया और 'मलेच्छों को मारो...मुसलमानों को मारो...' कहते-कहते लोगों ने प्रहार करने शुरू कर दिये। ८/१० लाठियाँ तो लग चुकी थीं और दोनों मित्र जमीन पर गिर गये थे, इतने में उस गाँव के ही तीन-चार पुरुष वहाँ आ पहुँचे और उन्होंने पहचाना कि 'अरे, ये तो अपने गाँव के लड़के हैं....ब्राह्मण हैं!' उन्होंने मारने वालों से कहा : 'भाई, इनको मत मारो, ये तो हमारे गाँव के ही ब्राह्मण युवक हैं।' उन दो लड़कों के तो बोलने के भी होश नहीं थे। दूसरे लोगों ने कहा : 'यदि ब्रह्माण हैं तो म्लेच्छों का वेश क्यों पहना है? सर पर चोटी भी नहीं रखी, क्या बात है? नये मुसलमान बने लगते हैं!' तब गाँव वालों ने कहा : 'भैया, ये लड़के बनारस में कॉलेज में पढ़ते हैं और अपन जानते हैं न कि कॉलेज में जाकर लड़के अपने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धर्म को भूल जाते हैं। फैशन और अन्धानुकरण में भटक जाते हैं। इन दोनों का ऐसा ही हुआ है। ये कपड़े उन्होंने फैशन के नाम के पहने हैं। दूसरे लड़कों का अनुकरण किया है।

दोनों की अच्छी पिटाई हुई थी। थोड़े दिन अस्पताल में आराम मिल गया होगा और मन में से भी लुंगी निकल गई होगी!

ताबीज ने जान ले ली :

ऐसी ही एक घटना अहमदाबाद में घटी थी। भारत का विभाजन हुआ था उस समय। अहमदाबाद में हिन्दू-मुसलमान के भयानक दंगे हो रहे थे। कोई अपने घर से बाहर नहीं निकल सकता था। गरीब लोग जो कि रोजाना कमाते और खाते थे, वे तो भूख से ही मर रहे थे। एक गरीब मुसलमान मिल में नौकरी करता था। पंद्रह दिन से मिल में नहीं जा रहा था। जब घर में एक पैसा भी नहीं रहा और दंगे कुछ कम हो गये तब उसने मिल में जाने का सोचा। वह घर से निकला। रास्ते पर सन्नाटा था। बहुत कम राहगीर दिखाई देते थे रास्ते पर। कोई डरता हुआ चलता था तो कोई दौड़ता हुआ जाता था! वातावरण में भय था, आतंक था।

जब यह मुसलमान मिल के द्वार पर पहुँचा, दरबान ने उसको रोक दिया। इसने कहा : 'भैया, मुझे जाने दो....आज पंद्रह दिन के बाद आ पाया हूँ इधर नौकरी करने....।'

गोरखे ने कहा : 'तुम भीतर नहीं जा सकते, देरी से आये हो, चले जाओ यहाँ से।' इसने जब बार-बार प्रार्थना की तब गोरखे ने गुस्से में आकर कहा : 'चला जाता है या नहीं? पुलिस को बुलाकर सौंप दूँ क्या?' निराश होकर जब वह वापस लौटा, उसके दिल में अपार दर्द था। बाहर का भय तो था ही। घर में खाने को कुछ बचा नहीं था, पास में रुपये थे नहीं। चला जाता है रोड़ पर। रोड़ पर एक छोटी-सी दुकान थी, दुकान में कुछ खिलौने और देवी-देवताओं के फोटो वगैरह थे। किसी हिन्दू देवता के ताबीज भी थे। इस मुसलमान को हिन्दू देवता का ताबीज लेने की इच्छा हुई। चूँकि उसको जिस रास्ते से गुजरना था, वह रास्ता पूरा हिन्दुओं का था। उसने ताबीज खरीद लिया और अपने गले में डाल दिया। अब वह अपने आपको निर्भय महसूस करने लगा। 'चलो, नौकरी तो नहीं मिली, परन्तु सलामत घर तो पहुँच जायेंगे!' तेज रफ्तार से वह चलने लगा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इतने में पास वाली गली में से बड़े बड़े छूरे लेकर, दो मुसलमान दौड़ते आये और इस मुसलमान पर वार कर दिया... 'काफिर, तू यहाँ से जिन्दा नहीं जायेगा....!' बचने गया था हिन्दू से, मारा गया अपने ही जाति भाई से! यदि उसने अपने गले में हिन्दू देवता का ताबीज नहीं पहना होता तो कम से कम, मुसलमान से तो नहीं मरता!

वस्त्र-परिधान में औचित्य का पालन करो :

वस्त्र-परिधान के विषय में, इस ग्रन्थ के टीकाकार आचार्यश्री ने जो पाँच बातें बताई हैं, वे बहुत औचित्यपूर्ण हैं और लाभदायी हैं। उन्होंने पहली बात बताई है वैभव के अनुरूप वस्त्र-परिधान। इसका अर्थ यह होता है कि आप श्रीमन्त हैं तो आपको गरीब जैसे वस्त्र नहीं पहनने चाहिए। यदि आपको एक सद्गृहस्थ के रूप में जीवन जीना है तो यह बात है। आप श्रीमन्त हैं तो आपको वैसे वस्त्र-परिधान करने चाहिए कि आपका व्यक्तित्व अभिमान की अभिव्यक्ति न करे। आपको अपनी उम्र के हिसाब में कपड़े पहनने चाहिए। आप युवक हैं और आप अपने पिता जैसे कपड़े पहने तो भी अनुचित है! हाँ, उम्र के साथ साथ आपके व्यवसाय का भी विचार होना चाहिए। आप 'डॉक्टर' हैं, आप वकील हैं, आप न्यायाधीश हैं....आप कोई कंपनी के 'सेल्समेन' हैं, आप एक व्यापारी फर्म के मालिक हैं, तो आपको अपने व्यवसाय के अनुरूप वेश पहनना होगा। उपहास हो वैसा वेश नहीं पहनना चाहिए।

कहाँ कैसे कपड़े पहनना....जरा सोचो? :

आप कॉलेज में पढ़ने जाते हो और धोती-कोट और गांधी केप पहनकर जाओगे तो? हँसी ही होगी न? और, आपको परमात्मा के मंदिर में पूजा करने जाना हो, वहाँ पर पेन्ट-शर्ट पहनकर जाओगे तो? उपहास ही होगा न?

आप अपनी आर्थिक स्थिति का खयाल करो। आप अपनी उम्र का और व्यवसाय का विचार करो। आप अपने समाज का, धर्म का और देश का विचार करो। देश के 'क्लाइमेट' का विचार करना चाहिए। अपना देश ज्यादा गर्म है। इस देश के लिए बारह महीने पेन्ट या स्कर्ट जैसे चुस्त कपड़े सर्वथा अनुचित है। गर्म देश में चुस्त कपड़े पहनने से शरीर को नुकसान होता है।

मैंने एक कॉलेज में, प्रवचन के दौरान लड़कों से पूछा था कि आप लोग अभी जो चुस्त पेन्ट पहनते हो, वह फैशन कहाँ से आया है? चुस्त पेन्ट क्यों पहनते हो?' एक भी लड़के ने मेरे प्रश्न का जवाब नहीं दिया था। चूँकि

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उन्होंने तो मात्र किसी का अनुकरण किया था! अनुकरण में अक्ल की जरूरत नहीं पड़ती है! मैंने उनको बताया : 'यह फैशन नहीं है, परन्तु इंग्लैंड में जो लोग घुड़सवारी करते हैं, उनको ऐसा चुस्त पेन्ट पहनना सुविधाजनक रहता है, इसलिए वे लोग पहनते हैं। दूसरी बात, वह देश शीत है, गर्म नहीं है, इसलिए वहाँ चुस्त कपड़े सुविधाजनक होते हैं। अपने देश में चुस्त कपड़े कष्टदायी बनते हैं और कभी तो शर्मजनक भी बन जाते हैं।

चुस्त कपड़े का कमाल :

एक लड़का अहमदाबाद में कॉलेज में पढ़ता था। था वह एक छोटे से गाँव में रहनेवाला एक किसान का लड़का। हॉस्टेल में रहता था और कॉलेज में पढ़ता था। एक साल में तो वह 'मोडर्न' आधुनिक वेश-भूषा वाला बन गया था। वेकेशन में जब वह अपने घर आने निकला, उसने चुस्त पेन्ट, चुस्त शर्ट.... वगैरह पहना था। स्टेशन पर उसको लेने के लिए गाँव के ८/१० भाई-बहन आये थे, जो उसके रिश्तेदार थे, मित्र थे। यह लड़का जैसे ही गाड़ी से उतरा और पिता का चरण-स्पर्श करने झुका....त्यों ही पीछे से पेन्ट फट गया! कैसी रही होगी? अच्छा था कि 'अन्डरवेयर' पहना हुआ था, अन्यथा...?

कपड़े पहनते समय इतना तो सोचना हि चाहिए कि 'ये कपड़े मेरे आरोग्य को तो हानि नहीं पहुँचायेंगे न? मेरे जीवन-व्यवहार में बाधक तो नहीं बनेंगे न?'

कपड़े....आरोग्य और 'फैशन' :

जिस लड़की को अपने घर में खड़े-खड़े रसोई नहीं बनाने की है, बैठकर बनानी है रसोई, यदि वह लड़की मिनी स्कर्ट पहनकर रसोईघर में जायेगी तो क्या होगा उसका?

जिसके शरीर में एलर्जी का रोग है और वह यदि 'सिन्थेटिक' कपड़ा पहनेगा तो क्या होगा उसके शरीर में?

जिसके शरीर में ज्यादा गर्मी है और यदि वह चुस्त कपड़े पहनता है तो क्या होगा उसके शरीर का?

वस्त्र-परिधान के विषय में अज्ञानता के कारण आज अनेक स्त्री-पुरुष गुप्त रोगों के शिकार बन गये हैं। शिकार बनने के बाद भी जब समझते नहीं हैं तब तो उनकी बुद्धिमत्ता की प्रशंसा ही करनी पड़ती है!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वेश-भूषा मर्यादापूर्ण रखो :

आज तो मुझे विशेष करके महिलाओं को कहना है कि वे अपनी वेश-भूषा में विवेक को स्थान दें। जैनशासन की महिलाओं को चाहिए कि वे अपनी मर्यादाओं का दृढ़ता से पालन करें। वे सिनेमा देखे नहीं, और देखें तो उसका अनुकरण नहीं करें। महिलाओं पर तो सकल संघ की जिम्मेदारी है। उनके ही पुत्ररत्न साधु बनेंगे, उनकी ही कन्यारत्न साध्वी बनेंगी, उनकी ही संतान श्रावक और श्राविक बनती हैं। चतुर्विध संघ का मूल स्रोत ही तो महिला है। तो, मूल स्रोत को कितना निर्मल रखना चाहिए? कितना पवित्र और सुरक्षित रखना चाहिए?

हमारे जिनशासन की माताओं को और बहनों से मेरा आग्रहपूर्ण निवेदन है कि वे एकदम मर्यादा में रहती हुई वेश-भूषा करें। अपने वैभव, अपनी उम्र अपनी अवस्था और समाज के अनुरूप वेश-भूषा करें।

आप अपने शरीर को आवृत्त रखों। आप अपने सौन्दर्य को कभी भी प्रदर्शनी की वस्तु मत बनायें। सुन्दर दिखने की इच्छा के बजाय शीलवती और गुणवती दिखने की इच्छा बनाये रखें। आधुनिक युगप्रवाह में बह नहीं जायें। अपने आदर्शों को अच्छी तरह समझें और दृढ़ता से आदर्शों का पालन करें। आप इस तरह महान् आदर्शों को समझें कि दूसरों को समझा सकें। अपने बच्चों को समझा सकें। अपने पति को समझा सकें और स्नेही-स्वजनों को भी अवसर आने पर समझा सकें।

जिनशासन को पानेवाली, समझनेवाली महिलाओं से ही ऐसी अपेक्षाएँ रखी जा सकती हैं, औरों से तो ऐसी अपेक्षाएँ कैसे रखूँ? हालाँकि जब आकाश ही फट गया है तब उसको सीना असंभव-सा लगता है। स्वाभाविक ही आकाश ठीक हो जाय....कोई चमत्कार हो जाय तो बात बन सकती है, अन्यथा नहीं।

अयोग्य-अनुचित वेश-भूषा का त्याग कर के योग्य और समुचित वेश-भूषा करें - यही गृहस्थ जीवन का दसवाँ सामान्य धर्म है। इस धर्म का यथायोग्य पालन करने में सक्षम बनें, यही मंगल अभिलाषा।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***आत्मशुद्धि की साधना में अशुद्ध व्यवहार बाधक बनता है। जिनका जीवन-व्यवहार अशुद्ध होता है उनकी धर्मआराधना निर्मल, निश्चल और आनंदसभर नहीं हो सकती!***
- ***रुपये कमाने में यदि ज्ञानदृष्टि हो तो वह 'धर्म' बन जाता है। व्यवहार में जितनी शुद्धि उतना धर्म! व्यवहार में जितना जिनाज्ञापालन उतना धर्म!***
- ***आय के अनुसार खर्च करना रखो। 'इन्कम' के अनुसार खर्च करो। कमाई कम हो तो खर्चे भी कम कम कर दो। खर्च की मात्रा कमाई के अनुपात से ज्यादा नहीं होनी चाहिए।***
- ***जितनी 'इन्कम' हो उसके चार हिस्से करो। एक हिस्से को स्थायी संपत्ति में जोड़ो। एक हिस्सा तुम्हारे धंधे में लगाओ। एक हिस्सा कुटुंब के निर्वाह के लिए और एक हिस्सा धर्म-कार्य के लिए अलग रखो....'सेपरेट' रखा करो।***

प्रवचन : ५७

परम उपकारी, महान् श्रुतधर, पूज्य आचार्यदेव श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी ने स्वरचित 'धर्मबिंदु' ग्रन्थ में क्रमिक मोक्षमार्ग का प्रतिपादन किया है। जिस किसी व्यक्ति को क्रमशः विकास की दिशा में आगे बढ़ना है, उसके लिये यह ग्रन्थ अद्भुत मार्गदर्शक बन सकता है। जिस किसी को अपने जीवन-व्यवहार को समुचित और विशुद्ध बनाना है, उसके लिये भी यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी बन सकता है। और, न जिसको आत्म-कल्याण करना है और न जिसको जीवन-व्यवहार को विशुद्ध बनाना है, उसके लिये तो यह ग्रन्थ क्या, कोई भी ग्रन्थ हो, कोई भी शास्त्र हो, कोई भी पुस्तक हो, कुछ भी महत्त्व नहीं रखते हैं।

जीवन में अच्छी आदतें आवश्यक हैं :

सुनते-सुनते कभी चोट लग जाये, सुनते सुनते कभी आध्यात्मिक भीतरी केन्द्र खुल जाये और सुनते-सुनते कभी वैराग्यभाव जाग्रत हो जाये, यह दूसरी बात है। 'मुझे आध्यात्मिक ऊर्जा जाग्रत करनी है, मुझे मेरे जीवन-व्यवहारों को विशुद्ध बनाना है, मुझे क्रमिक मोक्षमार्ग की आराधना करना है,' इस भावना से सुनना महत्त्वपूर्ण बन जाता है। आप लोग इस उद्देश्य से सुनने आते

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हो न? कि 'सुनते सुनते कभी कल्याण हो जायेगा....' इस भावना से आते हो? अथवा 'नित्य-प्रतिदिन गुरुमुख से धर्मोपदेश सुनना चाहिए,' इस श्रद्धा से आते हो? अच्छा है, धर्मोपदेश सुनने की आदत भी अच्छी आदत है! मनुष्य के जीवन में अच्छी आदतें होनी चाहिए।

परन्तु जो विशेष बुद्धिमान लोग हैं, जिनके हृदय में मोक्षमार्ग की आराधना करने की भावना जगी हुई है, वे लोग जैन हों या अजैन हों, देशी हों या विदेशी हों, उनके लिए ऐसे ग्रन्थों का अध्ययन और श्रवण बड़ा लाभप्रद हो सकता है।

व्यवहारशुद्धि की साधना जरूरी :

आत्म-कल्याण की साधना के पूर्व जीवन-व्यवहार की साधना, व्यवहारशुद्धि की साधना कर लेनी चाहिए, यदि गृहस्थजीवन जीना है तो! अशुद्ध व्यवहार, आत्मशुद्धि की साधना में बाधक बनता है। जिनके जीवन-व्यवहार अशुद्ध होते हैं उनकी धर्मआराधना निर्मल, निश्चल और आनन्दप्रद नहीं होती है। फिर, भले वह धर्माराधक अपने मन को मना ले कि 'क्या करूँ? मेरे पापकर्मों का वैसा उदय है कि धर्माराधना में मेरा मन स्थिर रहता ही नहीं है, मन्दिर में भी पापविचार आ जाते हैं।' आ जायेंगे पापविचार। क्यों नहीं आयेंगे? जीवनचर्या ही अशुद्ध बना रखी है, फिर पापविचार नहीं आयेंगे तो क्या आयेगा? पाप ही प्रिय हैं, तो पापविचार आना स्वाभाविक है। आप जीवन-व्यवहार को शुद्ध करें, फिर देखें कि मन धर्माराधना में स्थिर रहता है या नहीं! पापविचारों का प्रवाह कम होता है या नहीं? अपनी वास्तविक भूलों का निदान नहीं करना, भूलों का सुधार करना नहीं और 'मेरे पापकर्म का उदय है - 'ऐसा मानकर, बोलकर अपने मन का समाधान कर लेना, अपने आपके साथ ही छलना है। बहुत बड़ी वंचना है।

३५ प्रकार का सामान्य धर्म क्या है? गृहस्थजीवन की विशुद्ध चर्या ही तो है। विशुद्ध जीवनचर्या का दूसरा नाम है गृहस्थ का सामान्य धर्म। आप लोगों को तो पता ही कहाँ है विशुद्ध जीवनचर्या का! एक-दूसरे की जीवनचर्या देखकर जीवन जी रहे हो न? 'जिस प्रकार दूसरे लोग जीते हैं उस प्रकार हम जीते हैं।' यही है न आपका जवाब? जीवन-व्यवहार में किसका मार्गदर्शन लेते हो? किसी का नहीं। देखादेखी जीवन जी रहे हो। धर्म भी देखादेखी कर रहे हो न? जिस प्रकार दूसरे लोग विधिपूर्वक या अविधिपूर्वक धर्म करते हैं,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उनको देखकर आप भी धर्मक्रियाएँ करते हो न? इससे ही तो अनेक अविधियों की परम्परा चल पड़ी है।

व्यवहारशुद्धि ही प्रथम धर्म है :

आज मुझे धर्मक्षेत्र में, धर्मक्रियाओं में जो अविधियाँ चल रही हैं, उस विषय में बात नहीं करनी है, आज तो मैं आपके गृहस्थजीवन की एक विषम परंपरा की बात करूँगा। संसार में मनुष्य धन कमाता है, व्यय करने के लिए। धन कैसे कमाना चाहिए यह बात तो पहले ही बता दी है। कमाये हुए धन का व्यय कैसे करना चाहिए यह बात आज बताऊँगा।

आय और व्यय, संसार का महत्त्वपूर्ण व्यवहार है। जैसे न्याय और नीति से धनप्राप्ति करना विशुद्ध व्यवहार है, वैसे सुयोग्य मार्गों से व्यय करना विशुद्ध व्यवहार है। रुपये कमाना एक बात है, खर्च करना दूसरी बात है। रुपये कमाने में जिस प्रकार विशेष ज्ञानदृष्टि हो तो वह 'धर्म' बनता है वैसे रुपये खर्च करने की ज्ञानदृष्टि हो तो वह 'धर्म' बनता है। व्यवहार में जितनी विशुद्धि उतना धर्म! व्यवहार में जितना जिनाज्ञापालन उतना धर्म!

ग्रन्थकार आचार्यश्री खर्च करने में, धन का व्यय करने में विशेष दृष्टि प्रदान करते हैं। वे कहते हैं 'आय के अनुसार व्यय करो। कमाई के अनुसार खर्च करो। यदि कमाई कम है तो खर्च कम करो। कमाई के अनुपात से खर्च का अनुपात ज्यादा नहीं होना चाहिए। बहुत अच्छी बात बताते हैं आचार्यश्री! मुझे तो अच्छी लगती है यह बात। आप लोगों को अच्छी लगती है क्या?

खर्च के अनुसार आय या आय के मुताबिक व्यय?

सभा में से : अच्छी तो लगती है, परन्तु हम लोग उलटा काम कर रहे हैं। आय के अनुसार व्यय नहीं, व्यय के अनुसार आय।

महाराजश्री : चूँकि आय आपके हाथों में होगी। आप चाहें उतनी आय कर सकते होंगे? आप चाहें उतने रुपये कमा सकते हो न?

सभा में से : नहीं जी, हम चाहे उतने रुपये कमा सकते होते तो इस दुनिया में दरिद्रता ही नहीं होती।

महाराजश्री : तो फिर, व्यय के अनुसार आय का सिद्धान्त मानने का या आय के अनुसार व्यय का सिद्धान्त मानने का? आय आपके बस की बात नहीं है, व्यय आपके बस की बात है। आय भाग्याधीन है, व्यय पुरुषार्थ के अधीन है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धनप्राप्ति को जो लोग भाग्याधीन नहीं मानते, यानी पुण्यकर्म के उदय से, पापकर्म के क्षय से धनप्राप्ति होती है, इस सिद्धान्त को जो लोग नहीं मानते उन लोगों ने पुरूषार्थ को ही सब कुछ मान लिया। 'जो करने से रुपये प्राप्त होते हों वह सब कुछ करना चाहिए,' ऐसा सिद्धान्त बना लिया। क्योंकि वे लोग पुण्य-पाप को मानते ही नहीं। हर प्रकार के उद्योग होने लगे। 'स्लोटर हाउस' का भी धंधा होने लगा! मांस के निर्यात का ठेका भी लोग लेने लगे। सरकार भी पाप-पुण्य के सिद्धान्त को नहीं मानती। बड़े-बड़े उद्योग सरकार के पास हैं। सरकार ने भी व्यय के अनुसार आय का सिद्धान्त अपनाया है। व्यय के अनुसार जब आय नहीं होती है तब विदेशों का कर्जा लेती है सरकार। विश्वबैंक से उधार रुपये लेती है सरकार। आज भारत पर कर्जे का इतना भार हो गया कि निकट भविष्य में इतना कर्जा चुकाना सरकार के लिए नामुमकिन है। देश की प्रजा पर 'टैक्स' बढ़ते जा रहे हैं। गरीबों को जीना भी मुश्किल हो गया है।

जैसी स्थिति देश की हुई है वैसी स्थिति उन सभी परिवारों की हो सकती है, 'व्यय के अनुसार आय' का सिद्धान्त जो मानते हैं। 'मन चाहे उतना खर्च करते रहो और खर्च के अनुपात से व्यय बढ़ाने का पुरुषार्थ करो!' यह बात कितनी हास्यास्पद है? खर्च ज्यादा हो जाय और आय ज्यादा न हो तो कर्जा लिया करो! फिर क्या? कर्जा कर्जा ही होता है, दान नहीं होता। जब कर्जा चुकाने का समय पूर्ण हो जाय और कर्जा चुकाने के पैसे पास में न हों तब क्या करने का? या तो दिवाला निकाल दो, या आत्महत्या कर लो। तीसरा है कोई रास्ता? हो तो बता दें आप।

और उन्होंने आत्महत्या कर ली :

बंबई में एक सद्गृहस्थ थे। गृहस्थजीवन में मेरे भी वे परिचित थे। भाग्य से उनके पास दो-तीन लाख रुपये हो गये। उदार प्रकृति के सद्गृहस्थ थे। धार्मिक संस्थाओं में एक लाख रुपये का दान दिया, धार्मिक महोत्सवों में और अपने स्वयं के मकान बनवाने वगैरह में एक लाख रुपये खर्च कर दिये। सामाजिक प्रतिष्ठा बन गई। इधर आय बंद हो गई इतना ही नहीं, धंधे में नुकसान आने लगा। फिर भी वे अपनी इज्जत बनाये रखने के लिए दान देते रहे। अपना रहन-सहन इत्यादि वैसा का वैसा बनाये रक्खा। आय से व्यय बढ़ता गया। दूसरे लोगों के जो रुपये अमानत के रूप में उनके पास थे, वे भी खर्च हो गये। कर्जा काफी बढ़ गया। क्या करें अब? मरने के अलावा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दूसरा कोई रास्ता नहीं रहा उनके पास। एक दिन आत्महत्या कर ली उन्होंने।

हालाँकि धनप्राप्ति के लिए केवल भाग्य पर भरोसा रखकर नहीं बैठने का है, कुछ पुरुषार्थ करना चाहिए। योग्य दिशा में, योग्य मात्रा में पुरुषार्थ करना चाहिए। परन्तु फिर भी निर्णायक तो भाग्य ही बनेगा। इसलिए आय के अनुसार व्यय करना, सर्वथा उचित है।

'व्यय के अनुसार आय' के सिद्धान्त पर चलनेवाले लोग ही चोरी, बेईमानी वगैरह पाप करते हैं। एक सरकारी ऑफिसर ने बताया था कि उसकी पत्नी को ज्यादा खर्च करने की आदत थी। पन्द्रह दिन में ही उसकी तनख्वाह पूरी हो जाती थी। ऑफिसर ने पत्नी को बहुत समझाया कि 'सोच-समझकर खर्च किया करो, ऐसे घर कैसे चलेगा?' फिर भी पत्नी नहीं मानी। ऑफिसर को मजबूरन बेईमानी-रिश्वतखोरी करनी पड़ी। तनख्वाह से भी चार गुनी इन्कम होने लगी। पत्नी खुश हो गई....। किराये का बंगला लिया, फरनिचर, फ्रीज, फोन, फैन इत्यादि बसाया। परन्तु एक दिन ऑफिस से फोन आया कि साहब रिश्वत के अपराध में रंगे हाथ पकड़े गये हैं और हाथ में हथकड़ियाँ पड़ गई हैं। नौकरी से 'डिसमिस' हो गये हैं।' बीवी रोने लगी....दूसरा क्या करें? जो कुछ बसाया था, धीरे-धीरे बेचना पड़ा।

'इन्कम' के अनुसार 'एक्सपेन्स' करनेवालों का मन कुछ निश्चिंत और निर्भय रह सकता है। मन कुछ चिन्ताओं से मुक्त भी रह सकता है। कर्ज होता नहीं है। सदैव आर्थिक चिन्ता बनी नहीं रहती है।

खर्च का तरीका :

व्यय कैसे करना, इस विषय में टीकाकार आचार्यश्री ने नीतिशास्त्र के माध्यम से बताया है :

'पादमायान्निधिं कुर्यात् पादं वित्ताय घट्टयेत्।
धर्मोपभोगयोः पादं पादं भर्तव्यपोषणे ।।'

प्रतिवर्ष आपने जितना धन कमाया हो, जितनी 'इन्कम' हुई हो, उसके चार भाग करें। उसमें से एक भाग को आप अपनी स्थायी संपत्ति में जोड़ दें। एक भाग को आप अपने व्यापार में जोड़ दें, एक भाग कुटुम्ब-परिवार के लिए - उनका खाना-पीना-कपड़े-शिक्षा इत्यादि के लिए रखें और एक भाग धर्मकार्यों

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के लिए एवं अपने स्वयं के उपभोग के लिए रखें। अब एक उदाहरण से इस व्यवस्था को समझाता हूँ।

एक व्यक्ति की सालाना 'इन्कम' बारह हजार रुपये है। तीन-तीन हजार के चार भाग होंगे। तीन हजार रुपये अलग स्थायी संपत्ति में जोड़ देगा वह। तीन हजार रुपये अपने व्यवसाय में जोड़ देगा। तीन हजार रुपये कुटुम्ब-परिवार के पालन में जोड़ेगा और तीन हजार रुपये धर्मकार्य में एवं स्वयं के भोगोपभोग में लगाएगा।

सभा में से : हमारे तो बारह हजार रुपये कुटुम्ब-परिवार के पालन में और स्वयं के व्यसनों में ही पूरे हो जाते हैं।

महाराजश्री : तो इन्कम पचास हजार की होगी आपकी! हाँ, जो सालाना पचास हजार रूपये कमाता है, वह कुटुम्ब-परिवार के लिये १२-१३ हजार रुपये खर्च कर सकता है। अथवा जो 'सर्विस' करते हैं और प्रति मास एक हजार रुपये कमाते हैं, उसको तीन भाग ही करने होंगे। अपना व्यवसाय तो उनको होता नहीं है, इसलिए व्यवसाय में कुछ भी जोड़ने का नहीं होता। इसलिए यदि वे लोग कुटुम्ब-परिवार के लिये छह हजार रुपये भी खर्च कर सकते हैं। तीन हजार की बचत तो करनी ही होगी और तीन हजार रुपये धर्मकार्यों में एवं अपने स्वयं के खर्च के लिए रखने होंगे।

कुछ अपेक्षाओं से सोचा जाय तो नीतिशास्त्र की यह व्यय-व्यवस्था अच्छी है। प्रतिवर्ष रुपयों की बचत होने से, जब घर में कोई शादी वगैरह का प्रसंग उपस्थित होता है तब खर्च की चिन्ता नहीं रहती है। बचत नहीं होती है तो विशेष प्रसंग उपस्थित होने पर चिन्ता का भार बढ़ जाता है। कुछ लोगों को बचत का खयाल ही नहीं रहता है। वे सभी आय का व्यय कर देते हैं।

बचत की उपयोगिता :

बंबई में एक परिवार है। परिवार में कमानेवाले दो थे। पिता और पुत्र। पिता प्रतिमास दो हजार रुपये कमाते, लड़का प्रतिमास डेढ़ हजार रुपये कमाता था। परन्तु घर का खर्च और फालतू खर्च इतना ज्यादा था कि कुछ भी नहीं बचता था। घर में एक लड़की भी थी। उसकी भी शादी होनेवाली थी। लड़के की शादी हुई। जिस कन्या के साथ उसकी शादी हुई, वह लड़की काफी समझदार थी। उसने ससुराल में आकर सभी का प्रेम संपादन कर लिया। घर की आर्थिक परिस्थिति से भी परिचित हो गई। उसने देखा कि घर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में अनावश्यक खर्च काफी ज्यादा हो रहा है। कुछ भी बचता नहीं है। परन्तु वह किसको समझाए? ससुर को उपदेश दे नहीं सकती और पति को कहने में भय था! 'शायद मेरी बात सुनकर नाराज हो जायें तो। कोई दूसरी कल्पना कर लें तो?'

उसने दूसरा उपाय सोचा। अपने पति से कहा : 'आप दो साल के लिए अपनी सर्विस ट्रान्सफर क्यों नहीं करवा लेते? मुझे इस गाँव में अच्छा नहीं लगता....।' रोज रोज बड़े प्रेम से अपने पति को नौकरी का तबादला करा लेने को कहती रही और एक दिन तबादला हो गया।

ससुर, ननद वगैरह कुछ नाराज भी हुए परन्तु नाराजगी सहन करके भी वे दोनों दूसरे शहर चले गये। एल. आई. सी. में नौकरी थी। महीने दो हजार रुपये मिलने लगे। पत्नी ने अच्छे ढंग से अपना घर बसाया और सजाया।

दो-तीन महीने तक लड़के ने घर पर एक रुपया भी नहीं भेजा, तो घर से पत्र आया 'कुछ रुपये भेजो।' लड़का तो पूरे दो हजार रुपये पत्नी को दे देता था। उसने पिताजी का पत्र पत्नी को दिया। पत्नी ने कहा : 'मैं पिताजी को पत्र लिख देती हूँ।' उसने लिखा कि 'पिताजी को मालूम हो कि हमने यहाँ नया-नया घर बसाया है इसलिए सारे रुपये खर्च हो जाते हैं और संभव है कि आगे भी १०-१२ महीने तक यहाँ से रुपये भेज नहीं सकेंगे। क्षमा करें, वगैरह।' बहुत नम्रता से और विनय से पत्र लिखा।

'बैन्क बेलेन्स' के अभाव में बाप का बुरा हाल :

इधर लड़की की शादी करने का प्रसंग निकट आ रहा था। बैंक बेलेंस कुछ था नहीं। पिता को चिन्ता लग गई। 'लड़की की शादी कैसे करूँगा? मेरे पास तो १०० रूपये की भी बचत नहीं है और लड़के के पास भी बचत कैसी होगी? उसको तो नया घर ही बसाना है। शादी का क्या होगा? मेरी इज्जत कितनी बड़ी है? कम से कम दस हजार रुपये तो चाहिए ही। कहाँ से मिलेंगे रुपये?' चिन्ता बढ़ने लगी। शरीर पर उसका असर हुआ। उनकी पत्नी को और लड़की को भी चिन्ता सताने लगी। खर्च करने की जो आदत पड़ी हुई है वह छूटती नहीं थी। ऐसी परिस्थिति में भी खर्च कम नहीं होता है! लड़का एक रुपया भी भेजता नहीं है। पिता का स्वास्थ्य गिरने लगा।

बारह महीने के बाद जब बहन ने भाई को लिखा कि 'तू जल्दी यहाँ आ जा, पिताजी का स्वास्थ्य अच्छा नहीं है।' पत्र मिलते ही दोनों गाड़ी में बैठे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और पिताजी के पास पहुँचे। बंबई जाकर देखा तो पिता का स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया था। दोनों ने आकर पिताजी के चरणों में प्रणाम किया और कहा : 'पिताजी, ऐसा स्वास्थ्य कैसे हो गया?' पुत्रवधू तो अपनी सास और ननद के पास पहुँच गई थी। दोनों के साथ बातें करती थी परन्तु उसके कान तो पिता-पुत्र की बातों पर लगे थे। पिता पुत्र से कह रहे थे : 'बेटा, तेरी बहन की शादी करनी है। दो महीने के बाद मुहूर्त आता है। परन्तु शादी कैसे करूँगा? मेरे पास सौ रुपये की भी बचत नहीं है। इस चिन्ता से ही मेरा स्वास्थ्य बिगड़ा है। खाना भी अच्छा नहीं लगता है। बेटा, तू भी क्या कर सकता है? तुझे वहाँ नया-नया घर बसाना अनिवार्य है....तू भी रुपये नहीं बचा सकता, यह मैं समझता हूँ।' लड़का बैठा रहा। उसके पास इस समस्या का हल नहीं था। परन्तु उसकी पत्नी कमरे में आयी, उसके पीछे-पीछे उसकी सास और ननद भी आयीं।

पुत्रवधू ने ससुर के चरणों में प्रणाम कर, अपनी पर्स में से नोटों का एक बंडल निकाल कर ससुरजी को कहा : 'लीजिए ये दस हजार रुपये हैं, बहन की शादी में काम आयेंगे।'

उसका पति तो देखता ही रह गया। वह कभी नोटों के बंडल को देखता है, तो कभी पत्नी को देखता है। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा है। 'तू ये रुपये कहाँ से लायी?' 'मैं और कहाँ से लाती? आप मुझे प्रति माह दो हजार रुपये देते थे, उसमें से मैं एक हजार रुपये बचा लेती थी। दस महीने के दस हजार बचा लिये।'

बचत ने इज्जत बचा ली :

'सुनिये पिताजी, शादी करके मैं आपके घर में आयी, आपने मुझे कितनी सुख-सुविधा दी! आपकी उदारता मैंने अद्भुत पायी, परन्तु मैंने देखा कि अपने घर में बचत कुछ भी नहीं होती है। मुझे मालूम था कि मेरी ननद के हाथ पीले करने के दिन नजदीक हैं! रुपयों के बिना शादी कैसे होगी? आपको और आपके सुपुत्र को मैं कैसे उपदेश दूँ? मैंने दूसरा ही रास्ता लिया! इनकी सर्विस ट्रान्सफर करवा ली और वहाँ जाकर दस हजार रुपये बचा लिये!'

सास तो पुत्रवधू को अपने उत्संग में लेकर आँसू बहाने लगी। ससुर की आँखों में से भी आँसू टपकने लगे। उन्होंने कहा : 'बेटी, तुझे समझने में हमने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गलती ही कर दी थी। तूने वहाँ जाकर रुपये यहाँ नहीं भेजे, यह अच्छा ही किया। यहाँ रुपये भेजती तो खर्च हो जाते। मैं अपने जीवन में बचत करना तो समझता ही नहीं हूँ और इसलिए एक वर्ष से चिन्ता में मर रहा हूँ। बेटी, तूने बड़ी समझदारी का काम किया।' सारे परिवार में आनन्द छा गया। और, पिता-पुत्र ने मिलकर अब प्रतिमास दो हजार रुपये बचाने का संकल्प किया। फालतू खर्चे सभी बंद कर दिये। पिता तो आज नहीं हैं, परन्तु उनका परिवार आज भी सुखी-संपन्न है।

नीतिशास्त्र ने जो व्यय-व्यवस्था बतायी है, बहुत ही अच्छी है। ठीक है, थोड़ा-बहुत परिवर्तन आप कर सकते हो, परन्तु बचत का लक्ष तो होना ही चाहिए।

विश्व के प्रसिद्ध समृद्धतम व्यक्तियों में 'डेविडसन रोकफेलर' का नाम है। जानते हो उसके प्रारंभिक जीवन को? डेविडसन छोटा था तभी उसके पिताजी का स्वर्गवास हो गया। वह और उसकी माँ, प्रतिदिन सवा रुपये की नौकरी करते थे। मजदूरी करते थे। इसमें से भी डेविडसन की माँ कुछ पैसे बचा लेती थी। डेविडसन को उसकी माँ ने बचत का लक्ष दिया था। जो रुपये बचाये, उसमें से डेविडसन ने छोटा-सा धंधा शुरू किया और पचास वर्ष की उम्र में तो वह अरबपति बन गया। एक समय रोकफेलर ने कहा था : 'मैं मेरे विवेक और पुरुषार्थ पर विश्वास करता हूँ। मैं प्रतिदिन, प्रतिमास और प्रतिवर्ष कितनी बचत होती है, इसका पूरा ध्यान रखता हूँ। मैं शराब, तमाकू, जुआ जैसे व्यसनों को व्यर्थ और फालतू मानता हूँ। मिथ्या आडंबरों के प्रति मुझे सख्त घृणा है। अपने वैभव के दिखावे को मैं मनुष्य की सबसे बड़ी कमजोरी मानता हूँ। मैंने कभी शराब को और तमाकू को हाथ भी नहीं लगाया है।'

बचत तभी हो सकती है, जब आप आपके फालतू खर्च बंद करें। जितना खर्च भोजन के लिये नहीं होता उससे ज्यादा खर्च चाय, पान, सिगरेट और सिनेमा के लिए होता है। तेल और साबुन का खर्च कितना? सौन्दर्य के प्रसाधनों का खर्च कितना? बाहर जाकर होटल-रेस्टोरन्टों में कितना खर्च करते हो? लड़के-लड़कियों के ट्यूशन का खर्च कितना? जब तक आप ये फालतू खर्च बंद नहीं करोगे तब तक बचत कैसे होगी? धर्मकार्यों में खर्च कैसे कर सकोगे?

दुनिया का एक दूसरा अरबपति टॉमस लिप्टन कहता था : 'फालतू खर्च की तरफ मुझे सख्त नफरत है। जो काम मैं स्वयं कर सकता हूँ वह काम मैं कभी दूसरों के पास नहीं करवाता हूँ। जो काम दो डोलर से हो सकता हो, मैंने कभी सवा दो डोलर खर्च नहीं किये। अपनी मेरी व्यर्थ की आवश्यकताएँ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कभी नहीं बढ़ायीं।' 'लिप्टन-टी' आज विश्व में प्रसिद्ध है न? उस लिप्टन-टी कम्पनी का मालिक टॉमस लिप्टन, प्रारंभिक जीवन में प्रति सप्ताह मात्र दस शीलिंग कमाता था। उसमें से भी वह कुछ रुपये बचाए रखता था। बाद में प्रति सप्ताह लाखों डोलर कमाने लगा था। आज विश्व भर में इस कम्पनी के दस हजार एजेन्ट हैं।

फालतू खर्च बंद करके रुपये बचाने चाहिए, नहीं कि धार्मिक खर्च बंद करके! एक हिस्सा धार्मिक कार्यों में खर्च करने का तो रखना ही। भोजन से, अच्छे वस्त्रों से और अच्छे मकान से आपको बाह्य संतोष प्राप्त होगा, परन्तु जिन्दगी मात्र बाह्य आवश्यकताओं की पूर्ति से संतुष्ट नहीं होती है, जिन्दगी जो भीतर की है, उसकी संतुष्टि के लिए भी कुछ करना आवश्यक होता है। कुछ अन्तरात्मा की प्रेरणा से अच्छे कार्य भी करते रहो। भीतर की चेतना को संतुष्ट रखो। जो गरीब हैं, अनाथ हैं, अपंग हैं उनको भोजन-वस्त्र आदि देना। प्यासे को जल देना। निरक्षर को ज्ञान देना, साधुपुरुषों की सेवा करना, मंदिरों का निर्माण करना अथवा अपनी शक्ति के अनुसार सहयोग देना, धर्मशाला बनाना, तीर्थयात्रा करना, रूग्ण की सेवा करना, इत्यादि अनेक सत्कार्य हैं। जो भी सत्कार्य आपके मन को जँचे, आप करते रहो। अच्छे कार्य को स्थगित मत रखो। जिन्दगी का पता नहीं, कब वह समाप्त हो जाय... इसलिए अच्छा कार्य अविलंब करो। एक अध्यात्म के कवि ने कहा है :

'खबर नहीं या जग में पल की,
सुकृत करना हो सो कर ले,
कौन जाने कल की?'

इस जगत में एक पल का भी भरोसा नहीं हैं। तुझे जो सुकृत-सत्कार्य करना हो वह कर ले, कल का क्या पता?

धर्मकार्यों के लिए एक हिस्सा अपनी 'इन्कम' में से रखते हो तो सत्कार्य करने का उत्साह बना रहेगा। मन उदार बना रहेगा। पैसे का संकोच नहीं रहेगा। हाँ, धर्मकार्यों में भी इतना ज्यादा खर्च नहीं करना चाहिए कि कुटुम्ब-परिवार के पालन में क्षति पहुँचे। बचत नहीं हो सके। कुछ लोग धर्मकार्यों में अपनी शक्ति से भी ज्यादा खर्च करते रहते हैं और बचत करते नहीं, कर्जा बढ़ाते रहते हैं अथवा लोगों के जो रुपये उनके पास जमा होते हैं, वे रुपये खर्च कर देते हैं! इससे नयी आफत पैदा होती है। धर्मकार्यों में ज्यादा रुपये

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

खर्च करनेवाले जब दिवाला निकालते हैं तब धर्म की काफी निन्दा होती है। लोगों की धर्मश्रद्धा डगमगा जाती है। सच्चे धार्मिकों के ऊपर भी विश्वास टिकता नहीं। यह प्रत्याघात छोटा नहीं है, बहुत बड़ा प्रत्याघात है।

चार भागवाली यह व्यय-व्यवस्था आपको पसन्द आयी होगी? यदि आपको व्यवसाय में नये रुपये नहीं जोड़ने हैं, पर्याप्त 'इन्वेस्टमेंट' किया हुआ है तो तीन भाग कर सकते हो। यदि आपके पास लाखों रुपयों का बैंक बेलेंस है और बचत करने की आवश्यकता नहीं है तो, कुटुम्ब-परिवार के लिए जितने रुपये आवश्यक हों उतने रख कर, शेष रुपयों का धार्मिक ट्रस्ट - 'रिलिजीयस ट्रस्ट' बना दो! प्राइवेट ट्रस्ट भी हो सकता है। सरकार उन रुपयों पर 'टैक्स' भी नहीं लेती है। प्रतिवर्ष उस ट्रस्ट में रुपये जोड़ते रहो और अच्छे कार्यों में खर्च करते रहो।

जो बड़े श्रीमन्त हैं, जो उद्योगपति हैं उनके लिए 'चेरिटेबल एन्ड रिलिजीयस ट्रस्ट' की व्यवस्था बहुत अच्छी है। विदेशों में तो अनेक उद्योगपतियों ने ऐसे ट्रस्ट बनाये हैं। भारत में भी अब श्रीमन्त लोग ऐसे ट्रस्ट बनाते जा रहे हैं। आपका ट्रस्ट और आप ही ट्रस्टी! आपके परिवार में से भी ट्रस्टी बनाये जा सकते हैं।

व्यय-व्यवस्था का एक दूसरा विधान भी प्राप्त होता है :

'आयादूर्ध्वं नियुंजीत धर्मे समधिकं ततः।
शेषेण शेषं कुर्वीत यत्नतस्तुच्छमैहिकम् ।।'

'आय के दो भाग करना, उसमें एक भाग धर्म में व्यय करना और एक भाग इहलौकिक तुच्छ कार्यों में व्यय करना। परन्तु धर्म का भाग कुछ बड़ा रखना।'

यह व्यवस्था भी ठीक ही है। इन्कम के दो ही भाग करने के हैं। एक भाग कुछ बड़ा, दूसरा भाग कुछ छोटा! बड़ा भाग धर्मकार्य में व्यय करने का और कुछ छोटा भाग संसार के कार्यों में खर्च करने का। यदि धर्मकार्य में ज्यादा खर्च नहीं करना हो तो दो भाग समान करना! ठीक है न? जो कुछ भी करो, आय के अनुसार करना। आय से व्यय बढ़ाना मत। यदि व्यय बढ़ाओगे तो मरने के दिन आ जायेंगे! यह ग्यारहवाँ सामान्य धर्म है। आप इसका समुचित पालन करनेवाले बनें, यही मंगल कामना।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***अपने देश की मोक्षप्रधान संस्कृति करीब-करीब हतप्राण हो गई है। अपनी संस्कृति पर पहले मुस्लिमों के आक्रमण होते रहें....इसके बाद अंग्रेजों के शासन में ईसाइयों के द्वारा सांस्कृतिक आक्रमण होते रहे....जो आज भी चालू हैं।***
- ***सदाचार में तीन बातें प्रमुख है : १. सात्त्विक खाना-पीना, २. मर्यादापूर्ण वेश-भूषा और ३. परस्पर के पवित्र संबंध।***
- ***मांसाहर करने से अनेक प्रकार के रोग होते हैं, मांसाहार से 'केन्सर' भी हो सकता है और मौत का शिकार भी होना पड़ सकता है।***
- ***किसी भी बहाने शराब को अपने जीवन में प्रविष्ट मत होने दो। शराबी के साथ दोस्ती रखो ही मत। शराबी से किसी भी तरह का संबंध नहीं रखना चाहिए।***
- ***आज तो अपने पूरे देश में व्यापक रूप से एक भी सदाचार नहीं बचा है, देश में व्यापक बने हुए, फैल रहे हुए पापाचारों को जानो, समझो और पापाचारों से बचकर जीवन जियो!***

प्रवचन : ५८

महान् श्रुतधर, परम कृपानिधि, आचार्य श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी ने, स्वरचित 'धर्मबिंदु' ग्रन्थ में गृहस्थजीवन का सामान्य धर्म सर्वप्रथम बताया है। **गृहस्थजीवन का बारहवाँ सामान्य धर्म है : प्रसिद्ध देशाचारों का पालन।**

देशाचारों के पालन का विचार करते समय हमें देश और आचारों का विचार करना होगा। देश की प्राचीन परिस्थिति और अर्वाचीन परिस्थिति-दोनों परिस्थितियों का विचार करना पड़ेगा। पहले अपन प्राचीनकाल का अवलोकन करेंगे।

इस अवसर्पिणी काल में सर्वप्रथम भगवान ऋषभदेव के समय में राज्यव्यवस्था अस्तित्व में आई है। ऋषभदेव सर्वप्रथम राजा थे। उन्होंने प्रजा का हित सोचकर ही सारी राज्य-व्यवस्था और आचार-मर्यादाओं की स्थापना की थी। केन्द्र में था प्रजा का हित, प्रजा का कल्याण, प्रजा की सुखाकारिता! लक्ष्य था मोक्ष! असंख्य वर्षो तक इस भारतवर्ष की प्रजा को ऐसी मोक्षप्रधान संस्कृति मिलती रही और प्रजावत्सल राजा मिलते रहे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आचारपालन : सामाजिक और राष्ट्रीय कर्तव्य

असंख्य वर्षों से इस देश में राजाओं के सर पर देश की सुरक्षा की जिम्मेदारी रही और प्रजा के योगक्षेम की भी जिम्मेदारी रही और प्रजा के योगक्षेम की भी जिम्मेदारी उनकी रही। भारत में हजारों राजा रहे और अपनी-अपनी धार्मिक मान्यता के अनुसार आचार-मर्यादाएँ प्रस्थापित करते रहे। प्रजा को उन आचार-मर्यादाओं का पालन करना होता था। धीरे-धीरे कुछ आचार परंपरागत बन जाते थे। जो कोई व्यक्ति उन आचारों का पालन नहीं करता वह दंडित होता था, समाज से तिरस्कृत या बहिष्कृत भी होता था।

एक भारत में अनेक देश हैं....जैसे गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान वगैरह....। और हर देश के अपने विशिष्ट परंपरागत आचार होते थे। अपने-अपने देश के आचारों का पालन करना, राष्ट्रीय और सामाजिक कर्तव्य माना जाता था। विशेष रूप से ये आचार-मर्यादाएँ होती थी : भोजनविषयक, वस्त्र-परिधानविषयक और संबंधविषयक। जो व्यक्ति या जो परिवार इन देशाचारों का पालन करता था उसको राजपुरुषों की ओर से अथवा समाज की ओर से उपद्रव नहीं होते थे, वह शान्ति से अपनी जीवनयात्रा करता रहता था।

शान्तिमय जीवन व्यतीत करने के लिए निरुपद्रवी देश और समाज में रहना आवश्यक होता है। इसलिए यदि एक राज्य में-एक देश में उपद्रव होते थे, धर्मविरूद्ध आचरण होता था, तो लोग दूसरे राज्य में चले जाते थे।

परन्तु, कहीं पर भी जायें, उस देश के आचारों का पालन करना आवश्यक होता था। गृहस्थजीवन का यह सामान्य धर्म है।

असभ्यता के आक्रमण का परिणाम :

परन्तु वर्तमानकाल की परिस्थिति बदल गई है। अब इस देश में और दुनिया के ज्यादातर देशों में राजा ही नहीं रहे! राजाओं के राज्य नहीं रहे! भारत एक सार्वभौम राज्य हो गया है। प्रजातंत्र आ गया है। अपने देश की मोक्षप्रधान आचार-परंपराएँ लुप्तप्रायः हो गई हैं। अपनी भारतीय संस्कृति पर पहले मुसलमानों के आक्रमण होते रहे और बाद में अंग्रेजों के शासनकाल में ईसाइयों के सांस्कृतिक आक्रमण हुए। विदेशी असभ्यता के आक्रमणों ने अपनी भव्य आचार-परंपराओं को तोड़ दिया।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अंग्रेजों की गुलामी से देश स्वतंत्र होने के बाद तो कुछ बची हुई अच्छी आचार-परंपराएँ भी टूटती चली हैं। अनाचारों की परंपराएँ काफी चल पड़ी हैं। कोई व्यापक देशाचार रहा ही नहीं है। नैतिकता की सारी बातें भूगर्भ में चली गई हैं। देश में व्यापक अनाचार और भ्रष्टाचार पनप रहा है। अच्छे देशाचार ही नहीं रहे तो उनका पालन करने की बात ही कहाँ रही? आज तो, देश में व्यापक बने हुए अनाचार और भ्रष्टाचार का पालन नहीं करने का उपदेश देना पड़ता है।

सदाचार की 'ट्रि-पोय' :

सदाचारों में तीन बातें प्रमुख होती हैं :

१. अच्छा खाना-पीना,

२. मर्यादाशील वस्त्रभूषा,

३. परस्पर के पवित्र संबंध।

इन बातों के प्रति 'धर्मबिन्दु' के टीकाकार आचार्यश्री ने भी निर्देश किया है। अब, आप ही बताइए, इन तीन सदाचारों में से एक भी सदाचार देशव्यापी रहा है? देशव्यापी प्रचार तो मांसाहार का हो रहा है। देशव्यापी प्रसार शराब का हो रहा है। देश के वर्तमान शासकों को प्रजा से, प्रजा के आत्महित से कहाँ संबंध है? शासकों को चाहिए रुपये, चाहिए वैभव, चाहिए भौतिक विकास....!!!

मांसाहार को अच्छा खाना बताया जा रहा है इस देश में! आश्चर्य है न? अहिंसा जिस देश की संस्कृति है, दया और करुणा जिस देश के प्राण हैं....इस देश के विद्यालयों में पढ़ाया जाता है कि 'अंडे-मछली का भोजन श्रेष्ठ भोजन है! मांसाहार करना ही चाहिए!' विद्यालयों में बच्चों को यह पढ़ाया जाता है।

मांस का विदेशों में निर्यात होता है भारत से। चूँकि देश के शासकों को इससे ढेर सारे रुपये मिलते हैं।

आज तो भ्रष्टाचार जैसे कि देशाचार :

सभा में से : उन रुपयों से देश में अच्छी योजनाएँ कार्यान्वित होती हैं न?

महाराजश्री : योजनाओं को माध्यम से नेता लोग अपने घर की, अपने सगे-संबंधियों की योजनाएँ पहले पूर्ण कर लेते हैं, यह बात आप नहीं जानते?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक लाख रुपये की योजना बनती है, तो योजना में कितने रुपये लगते हैं? मात्र ३० या ४० हजार! शेष रुपये नेता लोगों की एवं सरकारी अधिकारियों की अपनी योजनाओं में काम आ जाते हैं न? यह भ्रष्टाचार प्रसिद्ध देशाचार बन गया है! मांसाहार और भ्रष्टाचार व्यापक बन गये हैं। बचना होगा इन बुराइयों से। दृढ़ मनोबल और अच्छी जानकारी होगी तब ही बच सकोगे।

मांसाहार से केन्सर और मौत :

मनुष्य के लिए मांसाहार कितना हानिकारक है, यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। अमेरिका की सरकार को 'वाशिंग्टन पोस्ट' नामक अखबार ने सूचना दी है :

The danger of food poisoning in men is becoming so prevalent that the American Public Health Association has thought to bring suit against the U. S. Government, because it does not require for lables on meat-similar to those required on Cigarette packages stating that ment can cause disease.

[The Washington Post, Nov. 8, 1971]

तात्पर्य यह है कि मांस खाने से अनेक बीमारियाँ पैदा होती हैं। मांसभक्षण से केन्सर भी हो सकता है और मौत भी हो सकती है।

Flesh food - An important cause of disease and death.

मांस, मछली और मुर्गी में डी. डी. टी. विष की बहुत अधिक मात्रा पाई गई है। जानवर के मरते ही उसके मांस में सड़न तथा खतरनाक कीड़ों की उत्पत्ति प्रारम्भ हो जाती है। ऐसा मांस खानेवाले को अनेक रोग नहीं होंगे तो किसको होंगे?

मांस खाने से मनुष्य की पाचनशक्ति भी बरबाद हो जाती है। अंडे खाने से दिल की बीमारी होती है, क्योंकि उसमें कोलेस्टेरोल अधिक मात्रा में होता है। डॉ. रोबर्ट ग्रोस (U.S.A.) ने कहा है :

An egg contains about 4 grains of cholesterol. When eggs are eaten, the cholesterol content of the blood rises and the tendency towards the development of gall stones, heart troubles, brain and kidney diseases increases.

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सरकार की ओर से अंडे, मछली और मांस खाने का कितना घोर प्रचार हो रहा है? सावधान रहना। 'मांसाहार करने से शक्ति बढ़ती है,' ऐसी भ्रमणा में मत रहना। मांसाहार से शरीर का बल बढ़ता नहीं है, घटता है। मनुष्य का पेट पशुओं का कब्रस्तान नहीं बनना चाहिए!

सरकार ने दूसरा पापाचार फैलाया है शराब का! सरकार शराब के कारखाने को 'लाइसन्स' देती है। इसका अर्थ यही हुआ कि शराब का उत्पादन सरकार ही करवाती है। विदेशी शराब का आयात करने देती है। सरकार के विदेशी मेहमानों की पार्टी में शराब परोसा जाता है।

कुर्सी के लिए शराब से सौदा :

सभा में से : सरकार में बैठे हुए अनेक मिनिस्टर भी शराब पीते हैं महाराजश्री!

महाराजश्री : इसलिए तो उन लोगों की बुद्धि भ्रष्ट हुई है। परन्तु पहले अपराधी तो आप लोग हैं, भारत के नागरिक हैं, चूँकि आप लोग ही शराबी को वोट देते हैं! मांसाहारी को वोट देते हैं! प्रजा ही देशनेताओं को चुनती है न? आप लोग यदि ऐसे पापाचारियों को अपने वोट नहीं दें तो वे कैसे चुने जायेंगे? वोट देते समय नेताओं के जीवन-व्यवहार की जाँच करते हो? ना रे ना! अच्छा भाषण देता हो और ज्यादा पैसा लुटाता हो....बस, उनको ज्यादा वोट मिल जाते हैं! वास्तव में देखा जाय तो गलती प्रजाजनों की ही है। दिल्ली में तो एक चुनाव का उम्मीदवार प्रचार ही ऐसा करता था कि 'यदि मैं चुनाव जीत जाऊँगा तो नशाबंदी दूर करूँगा। सबको शराब पीने की इजाजत मिल जायेगी। 'नशाबंदी होनी चाहिए' ऐसी बात करनेवाले को वोट मत दो!'

आप लोग जानते हैं क्या, कि भारत के संविधान में शराबबंदी करने की बात लिखी गई है। संविधान का पालन ही कौन करता है?

सभा में से : शराब से राज्य सरकारों को अच्छी आमदनी होती है इसलिए शराब पर प्रतिबंध नहीं लगाया जा रहा है।

महाराजश्री : सच्ची बात है : जिस 'बिजनेस' में ज्यादा आमदनी होती है, वह सब 'बिजनेस' सरकार करती है और प्रजा से करवाती है। भारत में अंग्रेजों के समय में जितने बूचड़खाने-स्लोटर हाउस नहीं थे, इतने स्लोटर हाउस स्वतंत्र भारत में बढ़ गये हैं। क्यों? अंग्रेज शासक भारतीय अहिंसाप्रिय जनता से कुछ डरते थे। स्वतंत्र भारत के शासक प्रजा को कुचलने की ही

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चेष्टा करते रहे हैं। अहिंसाप्रिय के हृदय को क्रूरता से कुचल रहे हैं।

आप लोग सावधान रहें। किसी भी निमित्त से शराब आपके जीवन में प्रविष्ट नहीं होनी चाहिए। शराबी के साथ संबंध ही नहीं रखना चाहिए। शराबी से मित्रता नहीं होनी चाहिए।

अर्थलोभ अति खतरनाक है :

सभा में से : यदि हम लोगों को मिनिस्टरों के काम निकलवाना होता है, कम्पनी के 'डायरेक्टरों' से काम लेना होता है, सरकारी अधिकारियों से काम निकलवाना होता है....तो उनके साथ बैठकर शराब पीनी पड़ती है....

महाराजश्री : ऐसे कौन-से काम करवाने होते हैं? ऐसे काम ही छोड़ दो। अर्थलोभ बहुत बुरा है। ज्यादा धन कमाने के लिए ही ऐसे पापाचार करने पडते हैं ना? पापाचारों के सेवन से धन नहीं मिलता है, पुण्यकर्म के उदय से ही धन मिलता है। दूसरी बात, मात्र मिनिस्टरों के साथ या सरकारी अधिकारियों के साथ ही शराब पीने वाले पीते हैं, ऐसा नहीं। जब आदत बन जाती है तब घर मे और होटल में भी पीते हैं। यह व्यापक पापाचार हो गया है। बचना होगा इस पापाचार से।

सभा में से : कुछ दवाइयों में भी शराब आती है....

महाराजश्री : ऐसी दवाइयों का उपयोग नहीं करना चाहिए। डाक्टर से पूछ लेना चाहिए। दूसरी दवाइयाँ मिलती हैं जिनमें शराब नहीं होती है। बचने की प्रबल इच्छा होगी तो बच सकोगे।

तीसरा व्यापक पापाचार है जुए का। आजकल लोग कितना जुआ खेलते हैं? श्रीमन्त खेलते हैं और गरीब भी खेलते हैं। श्रीमन्त लोगों का फैशन हो गया है जुआ खेलने का। ऐसी क्लबें चलती हैं। जहाँ प्रतिदिन-२४ घंटा जुआ खेला जाता है। चलती हैं न ऐसी क्लबें?

सभा में से : आपने कैसे जान लिया?

महाराजश्री : एक शहर में जिस उपाश्रय में हम वर्षाकाल व्यतीत कर रहे थे, उसके पीछे ही एक ऐसी क्लब थी। एक दिन रात को १२ बजे वहाँ जोरदार झगड़ा हुआ। जुआरी आपस में लड़ रहे थे। मैं जाग रहा था। खिड़की से मैंने देखा....प्रातःकाल एक भक्त से पूछा कि : 'यह मकान किसका है और रात में वहाँ इतने सारे लोग क्यों इकट्ठे होते हैं?' उस भक्त ने बताया

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कि 'यह एक क्लब है, वहाँ लोग जुआ खेलने आते हैं। रातभर जुआ खेलते रहते हैं।' बाद में तो एक जुआरी ने ही मुझे बताया था कि कहाँ-कहाँ और कैसी-कैसी ऐसी क्लबें चलती हैं। पुलिस जानती है परन्तु पुलिस को 'हप्ता' मिलता रहता है। पुलिस अधिकारियों को भी 'दक्षिणा' मिलती रहती है....इसलिए जुआरी पकड़े नहीं जाते। कभी पकड़े जाते हैं तो तत्काल छूट जाते हैं। पापाचार की रक्षा करनेवाला भ्रष्टाचार उतना ही पनपा है न?

ट्रस्टी लोग कान खोलकर सुनें तो अच्छा है :

तीर्थधामों की धर्मशालाओं में भी जुआ खेलते हुए लोग पकड़े गये हैं! तीर्थधामों की धर्मशालाओं में निर्भयता से जुआ खेला जा सकता है न? कमरा या ब्लॉक बंद करके बैठ जाते हैं जुआ खेलने। धर्मशाला के मुनीम को 'दक्षिणा' मिल जाती है। अथवा 'बड़े लोगों को कौन रोके?' मुनीम यदि रोकने जाय तो उस बेचारे की नौकरी ही चली जाय न?

तीर्थस्थानों की धर्मशालाओं का दुरुपयोग-पापाचारों के सेवन से पाप बढ़ता ही जा रहा हैं। जितनी सुविधाएँ ज्यादा, उतना पापाचारों का सेवन ज्यादा!

यदि आप लोगों में से कोई तीर्थस्थानों के 'ट्रस्टी' हों, तो कान खोलकर सुन लेना कि आप बहुत बड़े पापाचारों में निमित्त बनते हो।

सभा में से : तो क्या हमें तीर्थस्थान में ट्रस्टी नहीं बनना चाहिए?

महाराजश्री : तभी बन सकते हैं 'ट्रस्टी', जब आप में शक्ति हो, तीर्थस्थानों की पवित्रता की रक्षा करने की। मात्र कीर्ति कमाने के लिए, मान-सम्मान पाने के लिए, ज्यादा सुविधाएँ पाने के लिए ट्रस्टी बनते हों तो मर जाओगे। अनन्त पापकर्म उपार्जन करोगे। तीर्थस्थानों की व्यवस्था करनेवाले जाग्रत चाहिए। बार-बार तीर्थ में जाकर वहाँ की परिस्थिति जाननी चाहिए। तीर्थ के नौकरों की हलचल देखनी चाहिए। धर्मशालाओं में जाकर यात्रिकों की गतिविधि देखनी चाहिए। कोई भी पापाचार वहाँ नहीं चले, उसके लिए कड़ा प्रबंध रखना चाहिए।

तीर्थों की पवित्रता को बनाये रखो :

सभा में से : ऐसा करें तो यात्रियों से झगड़ा हो जाय।

महाराजश्री : हो जाने दो झगड़ा। पापाचारों का सेवन करनेवाले यात्रिक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

नहीं चाहिए हमें। वे यात्रिक ही नहीं होते। वे तो होते हैं आवारा लोग। अपने घर में, गाँव में पापाचारों का सेवन करें तो बदनाम होने का भय लगता है इसलिए तीर्थस्थानों में चले आते हैं। ऐसे लोगों को तो धर्मशाला में से बाहर ही निकाल देना चाहिए अथवा पुलिस को सुपुर्द कर देना चाहिए, यदि जुआ खेलते हुए या शराब पीते हुए 'रेड हेंडेड' पकड़े जायँ तो। यदि ऐसा कड़ा अनुशासन नहीं होगा तो तीर्थस्थानों की पवित्रता नष्ट हो जायेगी। तीर्थ तैरने का - भवसागर तैरने का स्थान नहीं रहेगा, डूबने का स्थान बन जायेगा।

एक तीर्थ में हमने स्वयं देखा था कि वहाँ के 'स्टाफ' के ही ज्यादातर लोग शराब पीते थे। अभक्ष्य खाते थे। मुनिम जैन नहीं था। ट्रस्टी तो वहाँ कोई था ही नहीं हाजर....शिकायत किसको करें? जिस पेढ़ी की व्यवस्था है [आज भी है] वह पेढ़ी ऐसी बातों पर ध्यान ही नहीं देती है! वह तो पैसे की ही व्यवस्था करती है न?

पापाचार को जानो, समझो और उसका त्याग करो :

आज मुझे वर्णन करना है 'प्रसिद्ध देशाचारों के पालन' का, परंतु मैं वर्णन कर रहा हूँ प्रसिद्ध पापाचारों के त्याग का। चूँकि देश में कोई व्यापक सदाचार ही नहीं बचा है। सारे सदाचार इने-गिने लोगों में रह गये हैं। देश में व्यापक बने हुए पापाचारों को जान लो, समझ लो और उन पापाचारों से बच कर जीवन जियो। परिवार के लोगों को भी इन पापाचारों से बचाना हैं। लड़के और लड़कियों को बचाना पड़ेगा।

चौथा व्यापक पापाचार है नशे का। शराब के अलावा भी कई प्रकार के नशे होते हैं। गांजा, अफीम, चरस, भांग वगैरह द्रव्यों का सेवन काफी बढ़ गया है समाज में। इंजेक्शन के माध्यम से भी नशा करते हैं लोग! नशा करने का एक प्रबल कारण होता है व्यभिचार। व्यभिचारी लोग ही ज्यादातर नशा करते हैं। इन्द्रियों की उत्तेजना तभी होती है न? शराब से भी शतगुण ज्यादा नशीले पदार्थ इस्तेमाल किये जाते हैं। इससे मनुष्य का शरीर रोगी और अशक्त बनता जाता है। मानसिक रोग भी बढ़ते जाते हैं। स्वभाव उत्तेजनापूर्ण बन जाता है।

नशे में चकचूर रहनेवाले लोगों का पारिवारिक जीवन नष्ट होता है। परिवार उस से परेशान होता है। तन से, मन से और धन से बरबादी होती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परन्तु दुःख इस बात का होता है कि ऐसे नशेबाजों का भी समाजों में स्वागत होता है! यदि वे श्रीमन्त होते हैं तो! दुनिया में श्रीमन्तों की पूजा व्यापक बनी है, फिर वे श्रीमन्त कैसे भी पापाचारों का सेवन करते हों! इसलिए आज सब को श्रीमन्त बनने की धुन चढ़ी है। अपने ५/१० लाख रुपये होंगे तो अपन कुछ भी कर सकेंगे, अपने को कोई कुछ भी नहीं कहेगा....।' ऐसी मान्यता बन गई है। श्रीमन्तों के पापाचार भी 'फैशन' माने जाते हैं! 'एटीकेट' माने जाते हैं।

विजातीय मैत्री की पापलीला से सावधान :

पाँचवा व्यापक पापाचार है विजातीय मैत्री का। पुरुष की परस्त्री के साथ मैत्री और स्त्री की परपुरुष के साथ मैत्री। नाम होता है 'मैत्री' का, काम होता है व्यभिचार का। 'मैत्री' जैसे पवित्र शब्द को कलंकित बना दिया गया है। यदि किसी युवक की किसी लड़की से मैत्री नहीं है तो वह युवक 'आर्थोडोक्स' गिना जाता है, निर्माल्य माना जाता है। यदि किसी लड़की के कोई युवक मित्र नहीं है तो उसकी 'रील' उतारी जाती है, यानी उपहास किया जाता है। 'व्यभिचार' को पाप ही नहीं माना जा रहा....कैसा भयानक और बीभत्स युग आया है?

पहले विदेशों में तो ऐसे पापाचार चलते ही थे, अब इस देश में भी चल पड़े हैं ये सारे भ्रष्टाचार। विजातीय संबंध के साथ-साथ सजातीय संबंध का पापाचार भी नयी फैशन का रूप लेकर चल पड़ा है। विषयवासना-कामवासना मनुष्य में बलवती बनती जा रही है और ज्यादा व्यापक बनती जा रही है। इस वैतरणी के प्रवाह में बह मत जाना, यही मुझे कहना है।

अब एक देशाचार की चर्चा करके प्रवचन पूर्ण करूँगा। प्राचीनकाल में अपने अपने देश की वेश-भूषा निश्चित होती थी। गुजरात की अपनी वेश-भूषा होती थी, महाराष्ट्र की अपनी वेश-भूषा होती थी। राजस्थान की अलग वेश-भूषा देखकर ही पहचाना जाता था कि यह व्यक्ति किस देश का निवासी है। राजाओं का और समाजों का वैसा आग्रह भी रहता था कि हर व्यक्ति अपने देश की वेश-भूषा ही धारण करें। इसलिए यह प्रसिद्ध देशाचार माना जाता था और उसका पालन करना गृहस्थधर्म माना जाता था।

परन्तु जब से भारत में अंग्रेज आये, भारत पर अंग्रेजों का शासन हुआ, तब से वेश-भूषा में परिवर्तन आ गया, और देश स्वतन्त्र होने के बाद तो वेश-

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परिधान के कोई नियम ही नहीं रहे। अंग्रेजों की वेश-भूषा सारे देश में व्यापक बनती चली। जिसको जो पसन्द आये वह वेश-भूषा होने लगी। कोई विरोध नहीं, कोई आक्रोश नहीं। गुजराती मनुष्य पंजाब की वेश-भूषा कर सकता है और पंजाबी गुजराती पद्धति का वस्त्र-परिधान कर सकता है। वस्त्र-परिधान के विषय में धर्मशास्त्रों के आदेश कौन मानता है? सिनेमा के एक्टर-एक्ट्रेसों की वेश-भूषा ही निर्णायक बन गई है।

कम से कम धर्मस्थानों में तो विवेक रखो :

वस्त्र-परिधान अब कोई देशाचार नहीं रहा है, स्वेच्छाचार बन गया है। अपने आपको सुन्दर दिखाने की दृष्टि से वस्त्र-परिधान होने लगा है। अर्धनग्नता व्यापक बनती जा रही है। महिलाओं ने फैशन के नाम पर अपना देह-प्रदर्शन करना शुरू कर दिया है। पुरुषों ने भी मर्यादाओं को खयालों को भुला दिया है।

धर्मस्थानों में आनेवाले भी वस्त्र-परिधान की मर्यादा को भूलते जा रहे हैं। इससे दुष्परिणाम भी देखने को मिलते हैं... परन्तु इस विषय में संघ और समाज ने आँखें बंद कर ली है। परमात्मा के मंदिर में परमात्मा की शर्म नहीं छूती है और उपाश्रय में गुरूजनों की शर्म नहीं छूती है। जैसे वस्त्र पहन कर होटल या सिनेमा देखने जाते हैं, वैसे वस्त्र पहनकर मंदिर और उपाश्रय में आते हैं।

आप लोग कुछ सोचेंगे या नहीं? अब तो हद हो गई हैं....लड़कियों ने लड़कों के वस्त्र पहनने शुरू कर दिये हैं! पेन्ट और शर्ट! अभी इतना अच्छा है कि लड़कों ने लड़कियों के मिनी स्कर्ट पहनने शुरू नहीं किये हैं! हालाँकि बाल तो लड़कियों के जितने बढ़ाने लगे हैं!

मेरा आप लोगों से आग्रहपूर्ण निवेदन है कि आप मंदिर और उपाश्रय में अपने धर्म की मर्यादा को समझ कर आयें। यहाँ 'फैशन-शो' का आयोजन नहीं करें। अपना धर्म त्याग और वैराग्य का उपदेश देता है। सादगी और नम्रता का उपदेश देता है। विनय और विवेक की प्रेरणा देता है।

इस विषय में अपने जैन संघ के पूज्य आचार्यदेवों को गंभीरता से सोचकर संघ को उचित मार्गदर्शन देना चाहिए। मंदिर और उपाश्रय के ट्रस्टी लोगों को भी गंभीरता से सोचना होगा, अन्यथा इस प्रकार की बीभत्स और मर्यादारहित वेश-भूषा के परिणाम बुरे ही आयेंगे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दुर्भाव न हो वैसा व्यवहार रखो :

गृहस्थ का बारहवाँ सामान्य धर्म है प्रसिद्ध देशाचारों का पालन करना, परन्तु आज देश में जब कोई आचार ही नहीं बचा है, अनाचार ही व्यापक बने हैं, तब मैं आपको कौन-से देशाचार का पालन करने का उपदेश दूँ?

प्रसिद्ध देशाचार का पालन करने का हेतु था प्रजा के साथ संवादिता-अविरोध के साथ जीवन जीने का। यदि देशाचारों का पालन नहीं करें मनुष्य, तो प्रजा के साथ उसका विरोध हो जाय। इससे उसके धर्मपुरुषार्थ में बाधा उत्पन्न हो जाय। इसलिए देशाचारों का पालन करना धर्म कहा गया है।

हेतु को लक्ष्य में रखना। जिस गाँव में रहते हों, उस गाँव की प्रजा के साथ वैर-विरोध हो वैसी प्रवृत्तियाँ नहीं करना। प्रजा को आपके प्रति दुर्भावना हो, तिरस्कार हो, वैसे काम नहीं करना।

देशवासी-नगरवासी लोगों के साथ उचित संबंध स्थापित करने से और निभाने से आप निर्भयतापूर्वक अपने धर्मपुरुषार्थ और अर्थ-कामपुरुषार्थ में सफलता प्राप्त कर सकते हैं। विवेक और औचित्य से अपने जीवन को व्यतीत करें यही मंगल कामना।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***मानसिक तनाव से छुटकारा पाने के लिए सत्पुरुषों का समागम, धर्मग्रन्थों का पठन-पाठन, योगाभ्यास और प्रकृति के सांनिध्य में रहना - ये उपाय हैं।***
- ***अपने दिल-दिमाग पर बुरे निमित्तों का असर न हो, वैसी मानसिक स्थिति का निर्माण करना है... मन को इतना*** Evilproof ***बना देना है।***
- ***मनुष्य एक तरफ अति निंदनीय पापों का आचरण करता रहे और दूसरी तरफ विशिष्ट धर्मक्रियाएँ भी करता रहे, तो क्या संसार से उसकी मुक्ति हो सकती है क्या? नहीं न? तो, जिन्हें भी सुख-शांतिमय जीवन जीना हो उन्हें इन निंदनीय पापों का त्याग करना ही होगा।***
- ***कम से कम इतना तो दिल में कसकना ही चाहिए कि 'मैं जो निंदनीय काम करता हूँ, वह मुझे नहीं करना चाहिए। यह करके मैं पापकर्म बाँध रहा हूँ....मेरी आत्मा मलिन होती है, मेरा मन कमजोर होता है।'***
- ***सामान्य धर्म के पालन के लिए मन को तैयार करना होगा। बंधी-बंधायी जीवन-पद्धति में कुछ परिवर्तन करना होगा।***

प्रवचन : ५९

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्य श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में गृहस्थजीवन का सामान्य धर्म बता रहे हैं। तेरहवाँ सामान्य धर्म है निन्दित कार्यों में तनिक भी प्रवृत्ति नहीं करना। इस वर्तमान जीवन में और पारलौकिक जीवन के लिए जो कार्य अहितकारी होते हैं, वे कार्य नहीं करने चाहिए। मन-वचन और काया से नहीं करने चाहिए।

टीकाकार आचार्यदेव ने लिखा है कि 'निन्दनीय कार्यों में मन को भी नहीं जोड़ना चाहिए।' इसका तात्पर्य यह है कि पाप-कार्यों से मनुष्य को सर्वथा अलिप्त रहना चाहिए। आपके मन में प्रश्न पैदा होगा ही कि 'जब सर्वत्र मांसाहार, शराब, जुआ और परदारागमन जैसे पाप फैल गये हैं....वातावरण ही दूषित बन गया है, तो हम कैसे इन पापों से बच सकते हैं? ये पाप तो वायुमंडल में व्याप्त हो गये हैं....।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सरकार बुराइयों को प्रोत्साहन देती है :

परिस्थिति तो विकट है ही। फिर भी हमारे ऊपर ऐसा कोई दबाव नहीं है कि हमें इन पापों का सेवन करना ही पड़े। हमारे ऊपर किसी का जोर-जुल्म भी नहीं है कि हमें ऐसे घोर पापों का सेवन करना पड़े। अलबत्ता, इन पापों का प्रचार-प्रसार इस प्रकार हो रहा है कि मनुष्य न पापों को-दुष्कृत्यों को दुष्कृत्य ही न मानें! निन्दनीय कार्यों को प्रशंसनीय मानें! निन्दनीय कार्य 'फैशन' बन गये हैं। दुष्कृत्यों को सरकार का अनुमोदन प्राप्त हो गया है। सरकार इन दुष्कृत्यों का भरसक प्रचार-प्रसार कर रही है, चूँकि उसके पास प्रचार-प्रसार की विपुल साधन-सामग्री है। प्रचार-प्रसार के मुख्य तीन साधन हैं : अखबार, रेड़ियो और टेलिविज़न। ये तीनों साधन सरकार के पास हैं! जिन-जिन बातों को हमारे ज्ञानी पुरुष निन्दनीय बताते हैं, उन-उन बातों की घोर प्रशंसा हो रही है।

हमारे गुजरात की सरकार तो मत्स्य उद्योग चलाती है! दूसरे-दूसरे राज्यों की सरकारें भी कतलखाने चलाती हैं, परन्तु गुजरात की धरा तो अहिंसा की भावना से भरीपूरी धरती है। गुजरात के हजारों गाँवों के तालाबों में मछली मारने का निषेध था.... आज वहाँ की सरकार स्वयं मछलियाँ मारने का और बेचने का उद्योग चलाती है! है न आप लोगों का... जनता का दुर्भाग्य? मद्यपान-शराब का भी धड़ल्ले से प्रचार-प्रसार हो रहा है। जिन राज्यों में मद्यपान का निषेध था उन राज्यों में मद्यपान करने की इजाजत मिलने लगी है। शराब के 'लायसेंस' दिये जा रहे हैं। शराब की दुकानें खुलती रहती हैं।

सभा में से : लोग मानसिक तनाव से मुक्त होने के लिए शराब पीते होंगे न?

महाराजश्री : हाँ, कुछ लोग ऐसे है कि जो मानसिक तनावों से मुक्त होने के लिए, 'रिलेक्स' पाने के लिए शराब पीते हैं, परन्तु ज्यादातर लोग तो मात्र वैषयिक आनन्द पाने के लिए, शरीर में गर्मी लाने के लिए और व्यसनपरवशता को लेकर शराब पीते हैं।

'टेन्शन' में से बचने का उपाय :

मानसिक तनाव से मुक्ति पाने के लिए दूसरे बहुत उपाय हैं, शराब पीना वास्तविक उपाय नहीं है। शराब पीने से कुछ समय के लिए मनुष्य अपनी चिन्ताएँ भूल जाता है, यह बात मानता हूँ परन्तु चिन्ताओं को थोड़े समय के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लिए भूल जाना, तनावमुक्ति का सच्चा उपाय नहीं है। तनाव पैदा ही न हो, वैसी जीवन-व्यवस्था होनी चाहिए। आज तो मनुष्य की जीवन-व्यवस्था ही नहीं है! अव्यवस्था, अस्तव्यस्तता और अराजकता जीवन के पर्याय बन गये हैं।

शान्त, स्वस्थ और प्रसन्न जीवन वही मनुष्य जी सकता है कि जो अपने मन को संतुलित रख सकता है। नशा करनेवालों का मन संतुलित नहीं रहता है। उनकी विचारशक्ति क्षीण होती है। इससे उनका पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन बिगड़ता है। अपने उचित कर्तव्यों के पालन में समर्थ नहीं बन पाते हैं। उनके मानसिक और पारिवारिक तनाव बढ़ते जाते हैं। शरीर में रोग भी बढ़ते हैं।

तनावों से मुक्ति पाने के लिए सत्पुरूषों का समागम, धर्मग्रन्थों का अध्ययन, योगाभ्यास और प्रकृतिसुन्दर गाँवों में निवास करना चाहिए। परमात्मश्रद्धा को दृढ़ करनी चाहिए। परमात्मश्रद्धा से चिन्ताएँ, उलझनें, प्रतिकूलताएँ.... सब दूर होती हैं। साथ साथ सत्पुरुषों का समागम होने से परमात्मश्रद्धा निर्बल नहीं बनती है। गुरूजनों का मार्गदर्शन लेकर धर्मग्रन्थों का अध्ययन करने से और योगाभ्यास करने से तन और मन स्वस्थ, शान्त और प्रफुल्लित होते हैं।

मनुष्य को अपना दैनिक कार्यक्रम ही ऐसा बनाना चाहिए कि उसका दिमाग तनावग्रस्त ही न बनें।

मन पर निमित्तों का असर मत होने दो :

सभा में से : परिवार के निमित्त, समाज के निमित्त और व्यापार के निमित्त भी तनाव पैदा होते हैं न?

महाराजश्री : उन निमित्तों का यदि आप पर असर होता होगा, तो ही तनाव पैदा होंगे। उन निमित्तों का आप पर असर ही न हो, वैसा आपका मनोबल होना चाहिए। संसार में निमित्त तो मिलते ही रहेंगे...अपन को उन निमित्तों से बचना होगा। अपने दिमाग पर उन निमित्तों का असर नहीं हो, वैसी मनःस्थिति का निर्माण करना होगा। वह निर्माण होगा सत्पुरूषों के समागम से। तत्त्वज्ञान के ग्रन्थों के अध्ययन से, योगाभ्यास से और परमात्मश्रद्धा से। यदि तनावमुक्ति का यह मार्ग नहीं लिया और नशे का मार्ग लिया तो जीवन बरबाद हो जायेगा।

एक युवक का ऐसे ही जीवन नष्ट हो गया, कि जो धनी परिवार का था।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

यों तो आज लाखों युवकों के जीवन नष्ट हो रहे हैं नशे के मार्ग पर, परन्तु इस युवक ने जब अपनी कहानी सुनायी....तब विश्वास दृढ़तर हुआ कि वास्तव में ज्ञानीपुरुषों का कथन सम्पूर्ण सत्य है! प्रत्यक्ष प्रमाण बलवत्तर होता है न!

एक दिलधड़क सत्य घटना :

उस युवक ने कहा : 'मैं कॉलेज में पढ़ता था। पढ़ने का तो नाम था, काम तो था मौज-मज़ा करने का। काफी रुपये खर्च करता था। एक दिन मेरे पिताजी ने मुझे बहुत डाँटा....मेरा दिमाग ज्यादा बिगड़ा। घर पर आना मुझे अच्छा नहीं लगता। कुछ ऐसे मित्रों के साथ मैं क्लब में जाने लगा। वहाँ मैंने शराब पीना शुरू किया। जुआ भी खेलने लगा। घर में से रुपये चुराने लगा।

एक दिन क्लब के बाहर कुछ बदमाशों के साथ झगड़ा हो गया, तब से मैं अपनी जेब में छुरी रखने लगा। कॉलेज में जाता कभी, तो भी छुरी साथ में रखता।

मेरे जीवन की भयानक घटना तो बाद में घटी। एक दिन मैंने काफी तेज शराब पी ली। जब मैं क्लब से बाहर निकला, तो मेरा बदन जल रहा था, मेरी इन्द्रियाँ उत्तेजित हो गई थीं। मैं एक बदमाश गली में चला गया। वह गली वेश्याओं की थी। मैं एक मकान की सीढ़ी चढ़ गया.... परन्तु ज्यों ही कमरे में प्रवेश करता हूँ, सामने दूसरा आदमी आ गया। हम टकरा गये....उसने गाली बोल दी.... मेरा खून खौल उठा.... मैंने उसके मुँह पर वज्र जैसा मुष्टिप्रहार कर दिया। हमारी लड़ाई जम गई और मैंने जेब से छुरी निकालकर पूरी ताकत से प्रहार कर दिया....।

हत्या करने के बाद मुझे होश आया.... मुझे पसीना छूट गया। मेरा कलेजा धक-धक करने लगा। मैं जल्दी से नीचे उतरकर अंधेरी गलियों में भागने लगा। मैं भयभीत था। पुलिस का भय था और जिसको मैंने मारा था उसके साथियों का भी मुझे भय था। मैं दो घंटे तक भागता रहा.... थक गया था.... एक मकान के नीचे अंधेरे में मैं खड़ा रह गया। परन्तु दुर्भाग्य मेरे साथ था। मैं एक भयानक बदमाश के सिकंजे में फँस गया। मैंने जो हत्या की थी वह उसने जान लिया था। मुझे उस बदमाश की टोली में शामिल होना पड़ा। मेरी मजबूरी थी। मेरी सारी दुनिया ही बदल गई। हिंसा, चोरी, जुआ, शराब, वेश्या इत्यादि मेरी दुनिया बन गई।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जब मेरे पिता को मेरे जीवन का खयाल आया, उन्हें घोर आघात लगा और वे मर गये। मेरी माँ और बहन-दोनों मुझे समझाते रहे, परन्तु मैं अन्धेरी दुनिया में से बाहर नहीं निकल सका। इतना ही नहीं, मैं पापों में ज्यादा डूबता गया। माँ को जितने रुपये चाहिए उतने रुपये देता रहता था। बेचारी माँ को मेरे दुष्कृत्यों का पूरा खयाल ही नहीं था। वह नहीं जानती थी कि उसका बेटा हत्यारा बना है.... वह नहीं जानती थी कि उसका लाड़ला वेश्यागामी बना है.... वह नहीं जानती थी कि उसका पुत्र शराबी और बदमाश बना है। मैंने उसको इतना ही बताया था कि 'मैं स्मगलिंग तस्करी के धन्धे में हूँ, इसलिए मुझे ज्यादा समय घर से बाहर रहना पड़ता है। पुलिस से दूर रहना पड़ता है वगैरह।' मैं नहीं चाहता था कि मेरी माँ को और बहन को मेरे पापों का खयाल आ जाय। क्योंकि मेरे दिल में माँ और बहन के प्रति अपार स्नेह था।'

युवक की आँसूभरी मजबूरी :

मैंने उस युवक से पूछा : 'यदि तेरे दिल में माँ और बहन के प्रति इतना प्यार था तो तुझे उनके लिए भी इन घोर पापों का त्याग करना चाहिए था न? माँ और बहन को दुःख हो वैसा नहीं करना चाहिए था न?'

उसने कहा : 'आपका कहना सही है। मेरी मजबूरी थी। यदि मैं उस बदमाश की टोली को छोड़ता तो मुझे कारावास में बन्द होना पड़ता अथवा जिन्दगी से हाथ धोना पड़ता। चूँकि मैं अपराधी था, मैंने हत्या की थी! मेरे साथी मुझे पुलिस के हवाले कर देते अथवा मेरी हत्या कर देते!'

परन्तु एक दिन ऐसा आया ही कि, मुझे मेरी टोली के लोगों से लड़ना पड़ा। क्योंकि उनमें से दो व्यक्तियों ने मेरी अनुपस्थिति में मेरी बहन से दुर्व्यवहार करने का प्रयास किया था। मैंने उन दोनों को यमराज के पास पहुँचा दिया और मेरे सरदार को कह दिया : 'अब मैं स्वयं पुलिस के पास जाकर मेरे अपराध कह दूँगा.... चाहे वे लोग मुझे फाँसी पर लटका दें....।'

सरदार ने कहा : 'पुलिस के पास जाने की जरूरत नहीं है, तू जायेगा तो भी पुलिस तुझे सजा नहीं करेगी... इसलिए अब तू घर पर चला जा और अपनी बहन की शादी कर दे। तुझको जँचे वह धन्धा करना। मेरे लायक कभी कोई काम हो तो आ जाना मेरे पास।'

मैंने सरदार के पैर पकड़ लिये। मेरी आँखों में से आँसू बहने लगे। मैं घर पर आ गया। मैंने पहला निर्णय किया शराब को नहीं छूने का। मेरी वजह से

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

हमारे घर की समाज में घोर बदनामी हो गई थी, इसलिए मैंने बंबई छोड़ दिया। मेरे जीवन में मैंने परिवर्तन कर दिया। दो साल के बाद बहन की शादी हो गई। माँ का स्वर्गवास हो गया और अब मैंने अपने जीवन को धर्ममय बनाने का सोचा है।

मैंने आपको संक्षेप में यह घटना कही है। इस प्रकार की घटनाएँ एक-दो या पाँच-पचास ही नहीं हैं, हजारों-लाखों की संख्या में हैं। निंदित पापकार्य अपने देश में ही नहीं, सारे विश्व में बढ़ रहे हैं। इस विकट परिस्थिति में अपने आपको बचा लेना.... सरल कार्य तो नहीं है, फिर भी जिस सद्गृहस्थ को धर्मपुरुषार्थ करना है, आत्मकल्याण की साधना करनी है, उस गृहस्थ को तो इन पापमय प्रवृत्तियों का त्याग ही करना होगा।

अशांति की जड़ : सामान्य धर्मों की उपेक्षा :

सभा में से : हम लोगों को तो वैसी पाप-प्रवृत्तियाँ प्रिय हैं, इसलिए तो हम वैसे सिनेमा देखने जाते हैं!

महाराजश्री : तो फिर आप धर्मपुरुषार्थ नहीं कर सकते। गृहस्थजीवन के सामान्य धर्मों का पालन किये बिना विशेष धर्मों का पालन कैसे होगा? यदि सामान्य धर्मों की उपेक्षा कर, विशेष धर्मों का पालन करते हो तो आत्मकल्याण होने का नहीं है। आत्मकल्याण तो दूर रहा, वर्तमान जीवन भी शान्तिमय नहीं रहेगा। विशिष्ट धर्मक्रियाएँ करनेवाले भी जो अशान्ति की शिकायत करते हैं, इसका मूल कारण यही है - सामान्य धर्मों की उपेक्षा। निन्दनीय कार्य करते रहते हैं और विशेष धर्मक्रियाएँ भी करते रहते हैं। यह तो ऐसी बात है कि जैसे कोई मरीज दवाई लेता हो और कुपथ्य सेवन भी करता हो। क्या इस प्रकार रोगमुक्ति मिल सकती है? वैसे यदि मनुष्य अति निन्दनीय पापों का सेवन करता रहे और विशिष्ट धर्मक्रियाएँ भी करता रहे, तो क्या उसकी संसार से मुक्ति हो सकती है?

आप तो जैन हैं, परन्तु जो जैन नहीं हैं, अजैन हैं, उनके जीवन में भी ये घोर पाप नहीं होने चाहिए। सुखमय-शान्तिमय जीवन जिस किसी को व्यतीत करना है, उसको इन पापों का त्याग करना ही होगा।

मांसाहार, शराब, जुआ, परस्त्रीगमन (स्त्री के लिए परपुरुषगमन) और गुण्डागर्दी.... जैसे पाप किसी भी सद्गृहस्थ के जीवन में नहीं होने चाहिए। इसलिए ऐसे मित्र ही नहीं होने चाहिए कि जो ऐसे अधम कृत्य करते हों। वैसे मित्र ही नहीं बनायें।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

केवल अर्थ और काम से शांति संभव नहीं है :

सभा में से : हम तो वैसे मित्र बनाते हैं कि जिनसे आर्थिक काम होता हो.... मौज़-मजा करने को मिलता हो!

महाराजश्री : आप लोग अर्थ और काम में इतने आसक्त बने हो....कि पाप-पुण्य का भेद ही भूल गये हो। आत्मा को ही भूल गये हो। परन्तु एक बात मत भूलना कि मात्र अर्थ और काम से ही आपको सुख नहीं मिलेगा, शान्ति नहीं मिलेगी। वैभव-संपत्ति और रंग-राग ही जीवन नहीं है। प्रसन्न, उन्नत और प्रशान्त जीवन यदि चाहते हो तो सर्वप्रथम इन घोर पापों से जीवन को बचाना होगा। इसलिए पहले ही, यदि वैसे पापाचरण करनेवाले मित्र हों तो उनका त्याग कर दो। त्याग करने से थोड़ा बहुत आर्थिक नुकसान होता हो तो होने दो। विशेष आर्थिक लाभ चला जाता हो तो भी चले जाने दो। धन-संपत्ति से जीवन ज्यादा मूल्यवान है-यह बात मत भूलो। गलत मित्रता के कारण कई किशोरियों ने, युवतियों ने और महिलाओं ने भी अपना सतीत्व-अपना शील खो दिया है। दुराचार के मार्ग पर चल रही हैं। पैसे का प्रलोभन और विषय-सुख की लंपटता! जीवन को नष्ट-भ्रष्ट करने में जरा भी देरी नहीं करते।

मौज-मज़ा यह चिकनी सड़क है :

कुछ साल पूर्व एक ऐसी ही दुर्घटना जो कि सच्ची घटना थी, पढ़ने को मिली थी। एक परिवार था। आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी, फिर भी परिवार का गुजारा हो जाता था। परिवार में माता-पिता और दो संताने थीं। एक लड़का और एक लड़की थीं। दोनों कॉलेज में पढ़ते थे। लड़का सुशील था, सात्त्विक था, परन्तु लड़की का जीवन व्यतीत करने का ढंग दूसरा था। श्रीमंत सहेलियों के साथ घूमने से मौज-मजा करने की आदत पड़ गई थी। मौज-मजा के लिये पैसे चाहिए! माता-पिता से तो पैसे मिल नहीं सकते थे। कैसे भी कर के पैसे प्राप्त करने की तीव्र इच्छा जाग्रत हुई। रास्ता भी मिल गया...शील बेचकर पैसा कमाने का पापमय रास्ता ले लिया।

एक कॉलेज-होस्टेल में जाने का था उस लड़की को। जिस लड़के के पास वह जानेवाली थी वह लड़का इस लड़की के भाई का खास मित्र था। परन्तु पहले उसको खयाल नहीं आया था कि 'यह लड़की मेरे मित्र की बहन है....' जब खयाल आया तब सावधान हो गया। उसने अपने मित्र को सारी बात बता

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दी और कहा : 'तेरी बहन वह मेरी बहन है। इस गलत रास्ते जाती हुई उसे रोकना चाहिए। बहुत शान्त दिमाग से सोचकर रास्ता निकालना चाहिए। वह पैसे के लिए ही ऐसा काम करने को तैयार हुई है। मैं इनकार कर दूँगा तो वह दूसरे के पास जायेगी.... उसका जीवन नष्ट हो जायेगा।'

लड़की के भाई ने गंभीरता से कुछ सोचा और मित्र से कहा : 'उसको तेरे कमरे में आने दे, तेरी जगह मैं सो जाऊँगा....बाद में सब रास्ता निकल जायेगा।'

निश्चित समय पर वह लड़की होस्टेल में पहुँची। जिस कमरे में जाना था, उस कमरे में प्रवेश कर, कमरा भीतर से बंद कर दिया। धीरे-धीरे वह पलंग के पास पहुँची। लड़का चद्दर ओढ़कर सोया हुआ था। लड़की ने धीरे से उसके मुँह पर से चद्दर हटायी.... मुँह देखते ही चार कदम दूर हट गई। स्तब्ध हो गई। उसका शरीर काँपने लगा। आँखें चूने लगीं।

भाई ने बहन को पाप से बचा लिया :

भाई पलंग से नीचे उतरा। बहन के सामने जाकर खड़ा रहा। धीरे से बोला :

'ऐसा गलत काम करने को तू क्यों तैयार हुई, यह मैं समझ सकता हूँ। परन्तु तूने तेरे-अपने सबके भविष्य का तनिक भी विचार नहीं किया। तूने मात्र तेरे शारीरिक सुखों का ही विचार किया। तुझे ढेर सारे पैसे चाहिए, क्योंकि पैसे से ही अच्छे वस्त्र, मौज-मजा और घूमने-घामने का सुख मिल सकता है। पैसे के लिये तू शरीर बेचने निकली है.... सही है न?'

बहन जमीन पर बैठकर रोने लगी। फूट-फूट कर रोने लगी। भाई पलंग पर बैठ गया। भाई की आँखें भी गीली हो गईं स्वर भर्रा गया। उसने कहा :

'तू मेरी बहन है। एक ही बहन है। तेरे सुख के लिए मैं कितना सोचता हूँ- तुझे मालूम नहीं है। आज मेरे हृदय पर क्या बीती होगी, इसकी तू कल्पना भी नहीं कर सकेगी। यदि अपनी माँ को, अपने पिताजी को इस बात का पता लग जाय तो क्या वे जिंदा रह सकते हैं? 'हार्ट-एटेक' आये बिना रहे? क्या तू तेरे शारीरिक सुखों का ही विचार करेगी? तेरे मन का क्या होगा? तेरी आत्मा का क्या होगा? शरीर जब रोगो से भर जायेगा तब तू क्या करेगी? तब तेरा कौन होगा?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

तूने पैसे पाने का जो रास्ता लिया है वह रास्ता भयानक है। बरबादी का रास्ता है। तू क्यों गलत रास्ते पर भटक गई? अपने घर की आर्थिक परिस्थिति के अनुसार ही जीवन जीना चाहिए। अपनी खानदानी का विचार करना चाहिए। 'सेक्सी' वृत्तियों पर संयम रखना होगा। ये वृत्तियाँ उत्तेजित हों वैसा रहन-सहन नहीं होना चाहिए।

सच कहूँ तो, मैं तुझे कॉलेज में पढ़ाना ही नहीं चाहता था। परन्तु सामाजिक परिस्थिति से मजबूरन मुझे पढ़ाना पड़ता है। आवारा लड़कियों की संगति से तू भी वैसी मार्गभ्रष्ट लड़की बन गई....। मेरे दुःख की सीमा नहीं है। फिर भी, मेरे और तेरे किस्मत अच्छे, कि यहाँ.... तू मेरे मित्र के पास चली आयी....। मेरा दोस्त भी कितना अच्छा कि उसने तेरी जिंदगी बचा ली....।

अब तू मुझे कह दे कि तुझे कैसा जीवन जीना है? सोच-विचार कर प्रत्युत्तर देना। तेरे भविष्य का विचार करना।

बहन ने भाई से कहा : 'भैया, मुझ पर विश्वास करोगे न? मैं अब कभी भी गलत रास्ते पर नहीं जाऊँगी और तुम्हारा उपकार कभी नहीं भूलूँगी। मेरी एक बात मानना....अब मैं कॉलेज नहीं जाऊँगी....। यदि कॉलेज जाऊँगी तो वापस गलती कर दूँगी। मेरी सहेलियाँ अच्छी नहीं हैं। उनके संग में मैं बिगड़ूँगी ही....। मेरे जैसी तो अनेक लड़कियाँ मार्गभ्रष्ट बन गई हैं। हजारों लड़कियों ने अपना शील खो दिया है। 'बोय फ्रेन्ड' के बिना लड़कियों को चल ही नहीं सकता....। ऐसे वातावरण में अब मैं रहना नहीं चाहती। मैं ग्रेज्युएट नहीं बनूँगी....यदि मुझसे कोई शादी नहीं करेगा तो मैं प्रसन्नता से कौमार्यव्रत का पालन करूँगी।'

बाद में उस लड़की ने कॉलेज छोड़ दी। उसका जीवन निर्मल बन गया।

बुराइयों के कारण जीवन में बैचेनी :

सभा में से : कॉलेज में जाने वाले लड़के-लड़कियों में ऐसी निंदनीय प्रवृत्तियाँ ज्यादा ही चल रही हैं।

महाराजश्री : फिर भी आप लोग अपने लड़के-लड़कियों को कॉलेज में भेजते हो न? आप कहेंगे : 'यदि हम कॉलेज में नहीं भेजें तो लड़की की शादी करने में दिक्कत आती है और लड़के को सर्विस मिलने में दिक्कत आती है।' यही बात है ना? परन्तु आप याद रखना कि एक समय ऐसा आयेगा कि

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कॉलेज में पढ़ी हुई लड़की के साथ कोई शादी करने को तैयार नहीं होगा और कॉलेज की डिग्रीवाले को कोई नौकरी में नहीं रखेगा! जीवन में चरित्रहीनता और व्यवहार में भ्रष्टाचार....इन दो बुराइयों में आज मनुष्य पूरा फँस गया है। इन बुराइयों से मनुष्य अशान्त, संतप्त और परेशान होता जा रहा है। धर्म से, गुरुजनों से और परमात्मा से वह दूर-दूर जा रहा है।

कम से कम दिल में इतना तो कसकना ही चाहिए :

जब तक आप लोग निन्दनीय प्रवृत्तियों का त्याग नहीं करेंगे तब तक मोक्षमार्ग की आराधना करने का अधिकार प्राप्त नहीं होगा। अधिकार प्राप्त किये बिना आप कितनी भी धर्मक्रियाएँ करें, उससे आत्मविशुद्धि नहीं होगी। हाँ, आत्मविशुद्धि का, जीवनविशुद्धि का लक्ष्य बनाकर धर्माराधना करोगे, तब तो काम बन जायेगा! कम से कम, इतना तो हृदय में होना चाहिए कि 'मैं जो निन्दनीय कार्य करता हूँ, वे कार्य नहीं करने चाहिए, इन कार्यों से मैं पापकर्मों से बँधता हूँ, मेरी आत्मा मलिन होती है, मेरा मन दुर्बल बनता जाता है.... कब ऐसा आत्मबल जगे कि मैं इन बुराइयों को त्याग दूँ।'

भूलना मत कि अपन मार्गानुसारिता की बातें कर रहे हैं। यानी गृहस्थजीवन के सामान्य धर्मों की बातें कर रहे हैं। और सामान्य धर्मों के पालन के बिना विशेष धर्मों का पालन हो नहीं सकता। शोभा नहीं देता, विशेष फल नहीं देता। इसलिए कहता हूँ कि इन सामान्य धर्मों के पालन के लिए मन को तत्पर करें! कुछ जीवन-परिवर्तन करें। जीवन-व्यवस्था में, जीवन-पद्धति में कुछ परिवर्तन करें इससे विशिष्ट धर्माराधना करने की योग्यता-पात्रता बन जायेगी।

मोक्षमार्ग की आराधना करने की पात्रता प्राप्त करके आत्म-कल्याण के मार्ग पर चलते रहें, यही मंगल कामना।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***अवर्णवाद के पीछे होती है द्वेषबुद्धि। अवर्णवाद होता है किसी के चरित्र की हत्या करने के बदइरादे से, किसी को नीचा दिखाने की अधमवृत्ति से या फिर अपने दोषों को ढँकने के इरादे से।***
- ***दूसरों के साथ वैर बाँधना बिलकुल उचित नहीं है। दुश्मनी बाँधने से तुम्हारा मन अशांत बनेगा, व्याकुल और व्यग्र बनेगा। तुम्हारी धर्मआराधना खंडित होगी।***
- ***सत्ताधीश का अवर्णवाद (बुराई) इसी जन्म में दुःख देता है। साधु-संतों का अवर्णवाद इस लोक-परलोक में दुःख देता है...इसलिए कहता हूँ कि अवर्णवाद की गन्दी आदत से दूर रहो।***
- ***सामान्य धर्मों की उपेक्षा कर के, विशेष धर्मों की क्रिया करनेवाले लोग धर्मतत्त्व से अपरिचित रहते हैं। उनकी धर्मक्रियाएँ उन्हें अहंकारी और अभिमानी बनानेवाली हो जाती हैं।***
- ***गुरुजनों का अवर्णवाद करनेवाले और सुननेवाले पापकर्म बाँधते हैं।***
- ***परदोषदर्शन के बिना अवर्णवाद संभव नहीं है। परदोषदर्शन मोक्षमार्ग की आराधना में बाधक तो है ही....जीवनयात्रा में भी अवरोधक बनता है। मनुष्य अन्तर्मुखी नहीं हो सकता, आत्मचिंतन नहीं कर सकता!***

प्रवचन : ६०

महान् श्रुतधर, पूजनीय आचार्यदेव श्री हरिभद्रसूरिजी, स्वरचित 'धर्मबिंदु' ग्रन्थ के प्रारंभ में गृहस्थजीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हैं। ये सामान्य धर्म सामान्य यानी साधारण धर्म नहीं हैं, असाधारण धर्म हैं, महत्त्वपूर्ण धर्म हैं। जिनको सफल मानवजीवन जीना है उनको इन धर्मों का पालन अवश्य करना होगा। ये धर्म, धर्म नहीं परन्तु जीवन के मूल्यवान अलंकार हैं।

शारीरिक स्वस्थता, पारिवारिक शान्ति, सामाजिक प्रतिष्ठा, राजकीय सुरक्षा एवं निर्भयता-निश्चिंतता प्राप्त कर प्रसन्न जीवन जीना है तो इन ३५ सामान्य धर्मों का पालन करना ही होगा। यदि आप कुछ गहराई में जाकर सोचेंगे तो पता लगेगा कि शारीरिक बीमारियाँ, पारिवारिक अशान्ति, सामाजिक बेइज्जती,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजकीय भय इत्यादि जो आज काफी बढ़ गये हैं, उसका मूलभूत कारण क्या है? इन सामान्य धर्मों की घोर उपेक्षा! इन सामान्य धर्मों का घोर उपहास!

सामान्य धर्मों का इसीलिए विस्तार से विवेचन कर रहा हूँ। आप लोग इन सामान्य धर्मों का महत्त्व समझें और आपके जीवन में इन धर्मों का पालन करने के लिए तत्पर बनें। आज एक महत्त्वपूर्ण सामान्य धर्म पर विवेचन करूँगा, वह धर्म है 'अवर्णवाद का त्याग'। यह चौदहवाँ सामान्य धर्म है।

अवर्णवाद की पैदाइश है द्वेषबुद्धि में से :

ग्रन्थकार आचार्यदेव अवर्णवाद का सर्वथा निषेध करते हैं। किसी भी मनुष्य का अवर्णवाद नहीं करना है। अवर्णवाद का अर्थ है दूसरे का अप्रसिद्ध दोष प्रसिद्ध करना, प्रगट करना। 'अप्रसिद्ध-प्रख्यापनरूपः अवर्णवादः'। अवर्णवाद की आदत का त्याग करना है। यह आदत बहुत बुरी है, नुकसान करनेवाली है। सभी दृष्टि से नुकसान करनेवाली है। किसी भी दृष्टि से अवर्णवाद करने योग्य नहीं है।

अवर्णवाद होता है द्वेषबुद्धि से। किसी का चरित्रहनन करने के इरादे से, किसी को नीचा गिराने की अधमवृत्ति से या अपने दोषों को ढाँपने की इच्छा से अवर्णवाद होता है।

सभा में से : जिसमें जो दोष नहीं हो वह दोष बताना और जो दोष हो वह दोष बताना - दोनों अवर्णवाद होता है क्या?

महाराजश्री : हाँ, दोनों अवर्णवाद है। जो दोष नहीं है, वह दोष दूसरे पर थोपना-आरोप लगाना तो भयानक अवर्णवाद है। दोष है, परन्तु कोई जानता नहीं है, आप ही जानते हो, वह दोष प्रकाशित करना भी अवर्णवाद है। प्रसिद्ध दोष का प्रचार करना भी एक प्रकार का अवर्णवाद है।

क्या मिलता है अवर्णवाद करने से? क्या अवर्णवाद करके आपने किसी को नीचा गिराया? मिथ्या कल्पना है आपकी कि 'उसका दोष जाहिर कर के उसके व्यक्तित्व को नष्ट कर दूँ।' आप किसी दूसरे के व्यक्तित्व को नष्ट नहीं कर सकते, जब तक उस व्यक्ति के पापकर्म उदय में नहीं आये! उस व्यक्ति के पापकर्म उदय में आयेंगे तब स्वतः उसका व्यक्तित्व नष्ट होगा! अवर्णवाद करने से तो आपका व्यक्तित्व बिगड़ता है। मित्रता के नाते अवर्णवाद सुनने वाले लोग ही बाद में कहते फिरते हैं कि 'उस भाई को निन्दा करने की आदत पड़ गई है....जब सुनो तब किसी की निन्दा ही सुन लो!' इसलिए, पहली बात तो यह

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मान लो कि अवर्णवाद से आप किसी को गिरा नहीं सकोगे। किसी को नुकसान नहीं पहुँचा सकोगे। नुकसान होगा आपको! व्यक्तित्व गिरेगा आपका!

एक बहुत बड़ा नुकसान आपको होगा! जिसका आप अवर्णवाद करोगे उसको आपके प्रति द्वेष होगा। आपके प्रति शत्रुता होगी। वह व्यक्ति आपको दुश्मन मानेगा। यह नुकसान आप समझ सकते हो क्या? दुनिया में जितने शत्रु ज्यादा इतना नुकसान ज्यादा। शत्रु बढ़ाने में बुद्धिमत्ता नहीं है, मित्र बढ़ाने में बुद्धिमत्ता है। शत्रु बढ़ने से भय बढ़ता है, असुरक्षा बढ़ती है, अशान्ति बढ़ती है। तो फिर, अवर्णवाद क्यों करना? लाभ कुछ नहीं, नुकसान ही नुकसान!

पारिवारिक क्लेश की जड़ अवर्णवाद :

पारिवारिक जीवन में कटुता और परस्पर विद्वेष क्यों पैदा होता है? अनेक कारणों में से एक कारण होता है अवर्णवाद। जब पिता ही पुत्र का अवर्णवाद करता है तब पुत्र के हृदय में पिता के प्रति प्रेम रहेगा क्या? द्वेष ही रहेगा? पुत्र के साथ जब पिता को कोई बात में अनबन हो गई, मनमुटाव हो गया कि पिता अपने ही पुत्र के गुप्त दोषों को प्रगट करने पर उतारू हो जायं, प्रच्छन्न भूलों को प्रगट करने लगे....तब पुत्र को पिता के प्रति कितना घोर द्वेष होगा? द्वेष में मनुष्य पागल सा बन जाता है। पुत्र यदि पिता के दोषों को जो कि गुप्त हों, प्रगट करेगा या नहीं? और एक-दूसरे के दोष प्रगट करने से लाभ क्या होता है? कुछ नहीं, नुकसान ही होता है।

वर्तमान काल में तो अवर्णवाद को ज्यादा उत्तेजना मिले, वैसी परिस्थितियाँ पैदा हो गई हैं। पति-पत्नी के सम्बन्धों में जब तनाव पैदा होते हैं तब एक-दूसरे का अवर्णवाद, वाचिक और लेखित, शुरू हो जाता है। न्यायालय में, अपने पक्ष को दृढ़ करने के लिए एक-दूसरे पर सही या गलत आरोप किये जाते हैं। एक पति ने अपनी पत्नी से तलाक लेने के लिए न्यायालय में कहा कि 'हमारा यह लड़का मुझसे नहीं हुआ है, हमारे नौकर से हुआ है!'

सोचो कि उसकी पत्नी को यह बात सुनकर कितना गुस्सा आया होगा? और उसने अपने पति की गुप्त बातें, जो वह जानती होगी, कही होंगी या नहीं?

सभा में से : अवश्य कही होंगी! कहनी ही चाहिए!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

द्वेष की आग भड़क उठे वैसा मत बोलो :

महाराजश्री : आप लोग तो कहेंगे ही कि 'कहनी ही चाहिए,' परन्तु मैं नहीं कहूँगा। जो कहने से प्रेम नष्ट होता हो और द्वेष उत्पन्न होता हो, वैसी बातें नहीं कहनी चाहिए। दूसरों से वैर बाँधना कभी भी उचित नहीं है। दूसरों से शत्रुता बाँधने से आपका मन अशान्त बनेगा, चिन्ता और भय से व्याकुल बनेगा और आपकी धर्म-आराधना खंडित हो जायेगी। आप किसी न किसी आपत्ति में फँस जायेंगे। आपके निमित्त से आपके परिवार को भी सहन करना पड़ेगा। राजनीति में रस लेने वाले लोगों के परिवारों का अध्ययन करना। राजनीति में अवर्णवाद कर्तव्य माना जाता है न?

लोकशाही के इस युग में, परनिन्दा और स्वप्रशंसा करना सामान्य हो गया है। शासक पक्ष और विरोध पक्ष, एक-दूसरे की भूलें खोजते रहते हैं, एक-दूसरे के रहस्य खोजते रहते हैं....और यदि कोई रहस्य हाथ लग जाय तो जोर-शोर से अवर्णवाद शुरू कर देते हैं! प्रेस और प्लेटफार्म के माध्यम से अवर्णवाद होता है! वाणी-स्वातंत्र्य का कितना घोर दुरुपयोग होता है? जिसको जिसका भी अवर्णवाद, निन्दा करनी हो-करता रहता है! देश का राष्ट्रपति हो, प्रधानमंत्री हो, मुख्यमंत्री हो...कोई भी हो-सामान्य नागरिक भी उनके विरुद्ध बातें करता है! सही हो या गलत....वह बातें करता रहता है! जिस व्यक्ति के साथ कुछ लेना-देना नहीं हो, उस व्यक्ति की बातें भी करता रहता है! उनके दोषों को, व्यक्तिगत दोषों को भी गाता रहता है!

पूज्य पुरुषों की निंदा से घोर पाप :

सभा में से : हम धार्मिक कहलाने वाले लोग भी अवर्णवाद करते हैं....

महाराजश्री : क्योंकि आप लोगों को अवर्णवाद करने का लायसन्स मिल गया होगा? साधुओं का और साधर्मिकों का अवर्णवाद करने में पुण्य बँधता होगा? आप लोग विशेष रूप से साधुपुरुषों का और साधर्मिकों का ही अवर्णवाद करते हो न? किसी साधुपुरुषों का कोई दोष जान लिया या देख लिया, क्या आप अपने मन में रख सकेंगे? नहीं, जब तक दो-चार व्यक्ति के सामने बोलेंगे नहीं तब तक आप शान्ति से सो नहीं सकेंगे! इसमें भी जिन साधुओं के प्रति आपकी श्रद्धा नहीं होगी, जो दूसरे गच्छ के या दूसरे संप्रदाय के साधु होंगे, उनका अवर्णवाद तो आप लोग मजे से करते हो न? जानते हो, इस प्रकार के अवर्णवाद से कितने घोर पापकर्म आप बाँधते हो? सुनी-सुनायी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बातों पर विश्वास कर आप कभी पूज्य एवं पवित्र पुरुषों की निन्दा करके, अपना भयानक अहित करते हो।

सत्ताधीशों का अवर्णवाद इसी जन्म में दुःख देता हैं, साधुजनों का अवर्णवाद इहलोक-परलोक में दुःख देता हैं। इसलिए कहता हूँ कि अवर्णवाद की आदत से बचते रहो। किसी का भी अवर्णवाद मत करो।

यदि आपको इस मानवजीवन में धर्मपुरूषार्थ से आत्मा का कल्याण करना है और शान्त, निर्भय और निश्चिंत जीवन जीना है तो आपको अवर्णवाद का व्यसन त्यागना ही होगा। परमात्मभक्ति में लीन होना है, सम्यग्ज्ञान का आनंद पाना है और विशिष्ट व्रत-नियमों से जीवन को संयममय बनाना है तो आप अवर्णवाद के पाप से दूर रहें।

आज राजा तो रहे नहीं, हरिभद्रसूरिजी का समय राजाओं का समय था, इसलिए उन्होंने विशेष रूप से राजा वगैरह के अवर्णवाद का निषेध किया है। राजा-मंत्री-सेनापति वगैरह सत्ताधीशों का अवर्णवाद करने से अवश्य आफत के बादल घिर जाते थे और घोर दुःखों की वर्षा होती थी। आज के युग में अपने देश में राजा लोग नहीं रहे परन्तु सत्ताधीश तो रहे ही हैं। केन्द्रीय मंत्री और राज्य के मंत्री राजा जैसे ही है न?

अवर्णवाद करने से तो दुश्मन ही बढ़ेंगे :

सभा में से : लोकसभा के सभ्य और विधानसभा के सभ्य भी राजा जैसे बन गये हैं। मंत्री वर्ग तो 'महाराजा' बन गये हैं।

महाराजश्री : यदि इन आधुनिक राजा-महाराजाओं का आप अवर्णवाद करें और उनको मालूम हो जाय कि 'यह व्यक्ति मेरा अवर्णवाद करता है,' तो खुश हो कर बक्षिस देगा न?

सभा में से : यदि उनका चले तो कत्ल ही करवा दें!

महाराजश्री : जिनका अवर्णवाद करते हो 'वे नहीं जानते हैं' ऐसा मानकर करते रहते हो, परन्तु इससे जो पापकर्म बँधते हैं, वे कर्म जब उदय में आयेंगे तब क्या होगा, यह सोचा है कभी? ऐसे परिवार में जन्म होगा कि जहाँ निरन्तर तुम्हारा पराभव ही होता रहे, तिरस्कार ही होता रहे। मात्र एक जन्म में ही नहीं, असंख्य जन्म तक! फिर क्यों करना चाहिए अवर्णवाद?

'मुझे मेरे शत्रु बनाने नहीं हैं, शत्रु बढ़ाने नहीं हैं' - ऐसा दृढ़ संकल्प कर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

लेना चाहिए। अवर्णवाद करने से शत्रु बढ़ते हैं, शत्रु बढ़ने से भय बढ़ता है, भय बढ़ने से तन-मन अस्वस्थ बनते हैं, इससे धर्मआराधना में विघ्न आते हैं।' इतना सोचकर, शत्रु नहीं बढ़ाने का आत्मसाक्षी से निर्णय कर लो।

जहाँ अवर्णवाद होता हो वह स्थान छोड़ दो :

अवर्णवाद की आदत से मुक्त होने का संकल्प कर, पहले तो आप उन लोगों का अवर्णवाद करना छोड़ दें कि जिनसे आपका कोई संबंध नहीं है। जिनके साथ आपको कुछ भी लेना-देना नहीं है। जिस जगह दो-पाँच व्यक्ति मिलकर अवर्णवाद करते हों, वहाँ जाकर बैठो ही मत। आपके घर आकर यदि कोई ऐसी बातें करें तो आप अपना विरोध प्रकट कर दें : 'मेरे घर में मैं ऐसी बातें पसंद नहीं करता हूँ।' घर पर आने वाले स्नेही-स्वजन नाराज हो जाय तो हो जाने दो। वे लोग एक दिन आपकी सच्ची बात को अवश्य समझेंगे।

बाद में आप स्नेही-सम्बन्धी और मित्रों के अवर्णवाद करना छोड़ दो। किसी की भी गुप्त बात-गुप्त दोष, जो आप जानते हो, किसी के भी सामने मत कहो।

अवर्णवाद का जवाब अवर्णवाद नहीं :

प्रश्न : क्या कोई हमारा अवर्णवाद करता हो तो उनका अवर्णवाद हम नहीं कर सकते? कोई हमारे दोष प्रकट करता हो तो क्या हम उसके दोष प्रकट नहीं कर सकते?

समाधान : ऐसा करने से यदि मित्रता होती हो, शत्रुता मिट जाती हो तो अवश्य करें। परन्तु यह बात संभव है क्या? एक-दूसरे के अवर्णवाद फैलाने से परस्पर द्वेष ही दृढ़ होता जायेगा। मित्रता नष्ट हो जायेगी। तो आप कहेंगे : हमारे अवर्णवाद करनेवालों को हम करने दें क्या? यदि हम प्रतिकार नहीं करते हैं तो दुनिया में बदनाम होते हैं....संसार में ऐसी बदनामी कैसे सहन करें?

मेरा कहने का तात्पर्य यह है कि अवर्णवाद करनेवाले को आप दूसरे उपायों से रोकने का प्रयत्न कर सकते हैं, परन्तु अवर्णवाद का जवाब अवर्णवाद नहीं होना चाहिए। इसमें भी बहुजनमान्य व्यक्ति का अवर्णवाद तो कभी भी नहीं करना।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अवर्णवाद में तो, व्यक्ति के अप्रसिद्ध दोष का प्रकाशन होता है, परन्तु इस आदत से, आगे बढ़कर मिथ्या-कल्पित दोषों का भी आरोपण किया जाता है। अवर्णवाद के मूल में यही वृत्ति काम करती है : दूसरे को गिराने की। इस वृत्ति से प्रेरित व्यक्ति क्या नहीं करता? वह निन्दा करेगा, अवर्णवाद करेगा....मिथ्या दोषारोपण भी करेगा। षड्यंत्र भी रच सकता है।

सभा में से : लोग तो उपकारी गुरुजनों का अवर्णवाद भी करते हैं।

महाराजश्री : लोग मत कहो, 'भगत' कहो। गुरुजनों के दोष दूसरे लोग नहीं देखते हैं, 'भक्त' कहलाने वाले ही देखते हैं। जब तक गुरुजन उन भक्तों को खुश करते रहेंगे तब तक वे भक्त गुरु की प्रशंसा करते रहेंगे, परन्तु ज्यों ही गुरु ने भक्त को नाराज किया, कि वही भक्त गुरु का अवर्णवाद करना शुरू कर देगा। उपाश्रय या धर्मस्थानक में आनेवाले कुछ अज्ञानी और क्रियाजड़ लोग साधुपुरुषों के छिद्र....दोष देखने में ही रुचि रखते हैं।

ऐसे भक्तों से क्या कहना? :

एक साधु-मुनिराज ने मुझे बताया था कि वे एक छोटे शहर में गये थे। मध्याह्न दो-तीन बजे का समय था। दो भक्त सामायिक करने उपाश्रय में आये और सामायिक लेकर माला फेरने लगे। हाथ में माला थी और आँखें साधुओं के प्रति थी, उनके सामान के प्रति थी। इतने में बाहर से एक महिला की आवाज आयी : 'महाराज साब, हम उपाश्रय में आ सकती हैं?' उपाश्रय में दो पुरुष बैठे हुए ही थे इसलिए मुनिराज ने भीतर आने की अनुमति दे दी। दो महिलाएँ भीतर आयी, मुनिराज को वंदना कर बैठी। मुनिराज उनसे बातें करते रहे। वे दो भक्त सामायिक पूर्ण कर चले गये और ये दो महिला भी चली गई।

वे दो भक्त उपाश्रय से बाहर निकले और निन्दा शुरू कर दी उन मुनिराजों की। शाम को प्रतिक्रमण के समय जब उपाश्रय में १५-२० भक्त इकट्ठे हो गये तब बस, चर्चा मुनिराज की ही। मुनिराज विचक्षण थे, वे समझ गये थे बात को। प्रतिक्रमण के बाद जब दो भक्त आकर मुनिराज के पास बैठे और पूछा :

'आज दोपहर को कोई मेहमान आये थे यहाँ?'

'हाँ, एक मेरी जननी थी और दूसरी मेरी भगिनी थी।'

तब वे दोनों चकरा गये और एक-दूसरे का मुँह ताकने लगे। ऐसे होते हैं भक्त लोग! छिद्रान्वेषण करना भक्त का लक्षण बन गया है आज। मातापिता का अवर्णवाद करनेवाला गुरुजनों का अवर्णवाद भी करेगा ही।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सभा में से : नियमित प्रभुपूजा, सामायिक जैसी पवित्र धर्मक्रिया करनेवालों को तो अवर्णवाद जैसा पाप नहीं करना चाहिए न?

महाराजश्री : यदि जिनपूजा वगैरह धर्मक्रिया करनेवाले अवर्णवाद जैसे पाप करते हैं तो समझना चाहिए कि उन्होंने धर्मतत्त्व पाया ही नहीं है। सामान्य धर्मों की उपेक्षा कर, विशेष धर्म की आराधना करनेवाले लोग धर्मतत्त्व से अनभिज्ञ होते हैं। उनकी धर्मक्रियाएँ उनको अभिमानी-अहंकारी बनानेवाली बन जाती हैं। गुरुजनों का अवर्णवाद करनेवाले और सुननेवाले और सुनानेवाले - दोनों पापकर्म से बँधते हैं। अवर्णवाद रसपूर्वक सुनने से करनेवाले को प्रोत्साहन मिलता है। उसके मन में होता है कि 'मैं जो बोल रहा हूँ वह ठीक बोल रहा हूँ, मुझे ऐसे व्यक्ति के पाप प्रकट करने ही चाहिए ताकि दूसरे लोग उसकी मायाजाल में फँसे नहीं!' यह विचारधारा मात्र भ्रमणा है। आत्मवंचना है। दूसरों को बचाने की बात मात्र बात ही है। वास्तविक बात है दूसरे को गिराने की वृत्ति! दूसरे से बदला लेने की हीन भावना।

परदोषदर्शन साधना में बाधक :

मैंने तो ऐसे साधु भी देखे हैं कि जो अपने गुरु के, अपने उपकारी के अवर्णवाद करते थे। आप लोगों को आश्चर्य होगा - साधु और अवर्णवाद? हाँ, साधु का वेश पहनकर जो अपने आपको साधु कहलाते हैं, वे अवर्णवाद जैसे पाप क्यों नहीं करेंगे? अपने आपको ऊँचा दिखाने के लिए दूसरों को नीचा दिखाना-एक उपाय है ना? अवर्णवाद करनेवाला अपने आपको ऊँचा दिखाता है। अवर्णवाद करनेवाले को दुनिया के मूर्ख लोग अच्छा व्यक्ति मानते हैं। इसलिए तो अवर्णवाद करनेवालों को प्रोत्साहन मिलता है।

एक बात समझ लो कि परदोषदर्शन के बिना अवर्णवाद संभव नहीं होता। परदोषदर्शन मोक्षमार्ग की आराधना में तो बाधक है ही, जीवनयात्रा में भी बाधक बनता है। दूसरों के दोष देखने की आदत बहुत खराब आदत है। इससे मनुष्य अन्तर्मुख नहीं बन सकता और स्वात्मचिंतन नहीं कर सकता। दूसरों के दोष देखने में, बोलने में और सुनने में ही जीवन समाप्त हो जाता है।

देखना है तो गुण देखो :

दूसरों की ओर देखना है तो दूसरों के गुण देखो। प्रत्येक जीव में गुण होता ही है। गुण देखो, गुणानुवाद करो। गुण देखने से और गुणानुवाद करने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

से आप में वह गुण आ जायेगा। दोष देखने से व दोषानुवाद करने से तो आप दोषों के कीचड़ में फँस जाओगे।

एक सच बात मान लो कि दोषानुवाद-अवर्णवाद करने से दूसरों को जितना नुकसान नहीं होगा उतना आपको नुकसान होगा। सबसे बड़े दो नुकसान होंगे : चित्त का संक्लेश और शत्रुओं की वृद्धि होने से भय बढ़ेगा।

गृहस्थजीवन का चौदहवाँ सामान्य धर्म बताया गया है अवर्णवाद का त्याग। आज इस धर्म का संक्षेप में विवेचन किया है। अवर्णवाद का पाप घर-घर में व्यापक बन गया है। आप स्वयं इस पाप से छूटने का संकल्प करेंगे, तो ही छूट पायेंगे। आप इस दिशा में पुरुषार्थशील बने, यही मेरी शुभकामना है।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***पन्द्रहवाँ सामान्य धर्म है : असदाचारी आदमी की संगसोहबत नहीं करना और सदाचारियों की सोहबत करना। दोषक्षय और गुणवृद्धि - ये दो आदर्श तुम्हारे जीवन में होंगे तो ही तुम इस पन्द्रहवें सामान्य धर्म के महत्त्व को समझ पाओगे!***
- ***आत्मविशुद्धि तभी संभव हो सकती है जब कि दोषों का नाश हो और गुणों की वृद्धि हो।***
- ***जो अभक्ष्य खाते हों उनका संसर्ग-संपर्क नहीं रखना। सद्‌गुरु के पास अभक्ष्यत्याग की प्रतिज्ञा ले लेनी चाहिए। अभक्ष्य भोजन की प्रशंसा या दलीलें नहीं सुनना। अभक्ष्य भोजन जहाँ होता हो वहाँ गलती से भी जाना नहीं!***
- ***आज तो दुराचारी लोग सदाचारियों का मज़ाक उड़ाते हैं! सदाचारों की निंदा करते हैं। दुराचारों की प्रशंसा होने लगती है!***
- ***दुराचारों का सेवन करना आज 'फैशन' हो चुका है। क्या जमाना आया है?***
- ***'धर्मी पाये दुःख-दुविधा, सुख-सुविधा मिले शैतान को, कहना क्या भगवान को?'***

प्रवचन : ६१

महान् श्रुतधर आचार्यदेव श्री हरिभद्रसूरीश्वरजी स्वरचित 'धर्मबिंदु' ग्रन्थ के प्रारम्भ में गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्म बताते हैं। ये सामान्य धर्म व्यक्ति को, समाज को, परिवार को और राष्ट्र को स्पर्श करते हैं। स्वस्थ, शान्त और सुखी जीवन के लिए इन सामान्य धर्मों का पालन करना नितान्त आवश्यक है। पापविचार और पापाचारों से बचने के लिए इन सामान्य धर्मों का पालन अवश्य कर्तव्य है। पारलौकिक जीवन को सुखी और समृद्ध बनाने के लिए इन धर्मों का पालन करना अनिवार्य है। मोक्षमार्ग की आराधना करने के लिए इन धर्मों का पालन करना अनिवार्य है। इन सामान्य धर्मों की कभी भी उपेक्षा मत करना। ऐसा कुतर्क भी मत करना कि - 'आजकल तो देशकाल ही बदल गया है, इन सामान्य धर्मों का पालन करना संभव ही नहीं है!'

यदि इन धर्मों के पालन की संभावना ही नहीं मानी, तब तो कभी भी इन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

धर्मों को जीवन में स्थान नहीं मिलेगा। और, जब तक ये धर्म जीवन में नहीं आते तब तक मोक्षमार्ग की आराधना करने की पात्रता नहीं आती! पात्रता-योग्यता प्राप्त नहीं हो तब तक धर्मपुरुषार्थ कैसे होगा? पात्रता प्राप्त किये बिना, किया हुआ धर्मपुरुषार्थ कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता।

गुणवान बनने के लिए सदाचारी का संग करो :

पन्द्रहवाँ सामान्य धर्म है : असदाचारी व्यक्ति का संसर्ग नहीं करना और सदाचारी जनों का संसर्ग करना। जीवन-व्यवहार में कितना उपयोगी है यह धर्म! ज्ञानी पुरूष कहते हैं कि संसर्ग से मनुष्य में गुण-दोष आते हैं। स्वेच्छाचारी लोगों के संसर्ग से दोष आते हैं, सदाचारी लोगों के संसर्ग से गुण आते हैं। दोषभरपूर होना है तो स्वेच्छाचारी लोगों से संपर्क करें, गुणवान् बनना है तो सदाचारी लोगों के संपर्क बनाये रखें। आपको आपका व्यक्तित्व कैसा बनाना है - पहले इस बात का निर्णय करें।

सभा में से : हमें तो धनवान् बनना है, गुण-दोषों से हमें कुछ लेना देना नहीं है!

महाराजश्री : यही बात मुझे कहनी है। मनुष्य कैसा भी हो, यदि उसके संपर्क से धनलाभ होता हो तो आप संपर्क करते हैं! व्यक्ति कैसा भी हो, आपको उसके संपर्क से सुख-भोग प्राप्त होता हो तो आप संपर्क करते हैं! गुण-दोष के विचार आप करते ही नहीं न? 'मुझे मेरे गुणों को खो देने नहीं हैं, मुझे नये गुण प्राप्त करने हैं,' यह विचार आता है क्या? 'मुझे मेरे दोष दूर करने हैं, नये दोषों को जीवन में प्रवेश नहीं देना है,' यह विचार आता है क्या?

दोषों का निरीक्षण करो और उनका त्याग भी करो :

दोषक्षय और गुणवृद्धि - ये दो आदर्श यदि आपके पास होंगे तो ही आप को इस पन्द्रहवें सामान्य धर्म का महत्त्व समझ में आएगा। मानवजीवन की सफलता इन दो आदर्शों पर निर्भर है। आत्मविशुद्धि तभी हो सकती है जब दोषों का नाश हो और गुणों की वृद्धि हो। जीवन की प्रसन्नता और पवित्रता भी तभी संभव है जब दोषों का क्षय हो और गुणों की वृद्धि हो। इसलिए मैं प्रतिदिन आपको यह बात कहता रहूँगा कि आप अपने दोषों का निरीक्षण करते रहें और एक-एक दोष को दूर करने का प्रयत्न करते रहें। धर्मक्रियाएँ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भी इस लक्ष्य से करें। पूजा-पाठ, ज्ञान-ध्यान, तप-त्याग....इसी लक्ष्य से करते रहें। 'मुझे मेरे दोष मिटाने हैं!' ऐसा दृढ़ संकल्प करें।

हालाँकि अनादिकालीन दोष सरलता से दूर नहीं होते, उन्हें दूर करने के लिए सतत और सख्त प्रयत्न करना होगा। दीर्घकालीन प्रयत्न करना होगा। सामान्य और अल्पकालीन प्रयत्न से दृढ़ीभूत दोष दूर नहीं होते हैं। अनादिकालीन न हों, मात्र इस जीवन के दोष हों, तो भी दीर्घकालीन प्रयत्न से वे दोष दूर हो सकते हैं। जैसे, किसी को अभक्ष्य खाने की आदत पड़ गई है। उसको खयाल भी आ गया हो कि 'यह दोष बहुत खराब है, मुझे अभक्ष्य नहीं खाना चाहिए,' परन्तु वह कुछ दिनों के लिए या कुछ महीनों के लिए अभक्ष्य नहीं खाने की प्रतिज्ञा करता है, संभव है कि प्रतिज्ञा की मर्यादा पूर्ण होने पर पुनः अभक्ष्य खाने लग जायेगा! मात्र अभक्ष्य नहीं खाने की प्रतिज्ञा से वह दोष दूर नहीं होता! कुछ समय के लिए अभक्ष्य भक्षण की प्रवृत्ति बंद होगी परन्तु वृत्ति में परिवर्तन आएगा क्या? अभक्ष्य भक्षण की मनोवृत्ति बदलेगी क्या? अशुभ प्रवृत्ति का त्याग, अशुभ वृत्ति के नाश के लिए होना चाहिए। अभक्ष्य भक्षण का आकर्षण नष्ट हो जाना चाहिए, इसलिए :

१. जो व्यक्ति अभक्ष्य खाता हो, उनका संसर्ग नहीं रखना चाहिए।

२. अभक्ष्य भक्षण नहीं करने की प्रतिज्ञा सद्‌गुरु से लेनी चाहिए।

३. जहाँ अभक्ष्य भोजन बनता हो वहाँ जाना भी नहीं चाहिए।

४. अभक्ष्य भोजन की तारीफ नहीं सुननी चाहिए।

५. जहाँ अभक्ष्य भोजन होता है, वहाँ उपस्थित नहीं रहना चाहिए।

जब तक अभक्ष्य भोजन के प्रति मन में नफरत पैदा न हो तब तक इन नियमों का सख्त पालन करना चाहिए। इन नियमों का पालन नहीं करनेवाले, जो पहले अभक्ष्य भोजन नहीं करते थे, वे अभक्ष्य खाने लग गये हैं। अभक्ष्य खानेवालों से मित्रता हो गई, कुछ समय तो अभक्ष्य नहीं खाया, परन्तु मित्रों के आग्रह से, अनुनय से....अभक्ष्य खाना शुरू कर दिया! कई सदाचारी परिवारों के लड़के-लड़कियाँ कॉलेज में जाने के बाद, होस्टलों में रहने के बाद क्यों अभक्ष्य खाने लग गये? चूँकि कॉलेजों में और होस्टलों में वैसे दुराचारी लड़के-लड़कियों के संसर्ग होते हैं, संपर्क होते हैं, मित्रता होती है....बस, सदाचारी को दुराचारी का संसर्ग दुराचारी बना देता है।

दुराचारी लोग सदाचारों का उपहास करने लगे हैं। सदाचारों की निन्दा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करने लगे हैं। दुराचारों की प्रशंसा होने लगी हैं। दुराचारों का सेवन 'फैशन' बन गई हैं। 'जिनके साथ हम रहते हैं, जिनके साथ हमें घूमना-फिरना होता है, उनको 'कम्पनी' देनी पड़ती है....यदि 'कम्पनी' नहीं देते हैं तो हमारा घोर उपहास होता है, हम अकेले पड़ जाते हैं....।' गलत ढंग की दलील 'आरग्यूमेंट' किये जाते हैं। बात भी ठीक है। घोर उपहास सहन करना सरल बात तो नहीं है।

प्रश्न : संतानों को कॉलेज में भेजते हैं तो संस्कार बिगड़ते हैं और कॉलेज में नहीं भेजते हैं तो लड़के के लिए आर्थिक समस्या और लड़की के लिए 'लड़के' की समस्या पैदा होती है।

उत्तर : हर व्यक्ति का अपना भाग्य होता है, यह बात क्यों भूल जाते हो? हर व्यक्ति अपने शुभाशुभ कर्म लेकर जन्म लेता है। कॉलेज की शिक्षा नहीं पाई हो परन्तु किस्मत अच्छी होती है तो लखपति बन जाता है और किस्मत अच्छी नहीं होती तो 'डबल ग्रेज्युएट भी फुटपाथ पर सोता है। हालाँकि, पढ़ाई तो होनी चाहिए परन्तु ऐसी जगह पढ़ाई होनी चाहिए कि जहाँ संस्कार बिगड़े नहीं। लड़कियों को S.S.C. के बाद घर पर प्राइवेट ट्यूशन से भी पढ़ाया जा सकता है, यदि आर्थिक तकलीफ नहीं हो तो। आर्थिक संकट हो तो S.S.C. पढ़ ले तो भी बहुत है! पति की प्राप्ति तो भाग्यानुसार होती है। भाग्य के सिद्धान्त पर विश्वास होना चाहिए।

मैं जानता हूँ कि यह बात मात्र माता-पिता के वश की नहीं रही है। लड़के और लड़कियाँ जब तक अपने संस्कारों को सुरक्षित रखने की बात नहीं समझेंगे तब तक सुधार होना मुमकिन नहीं है। दोषों को दोष तो मानने चाहिए न? गुणों का महत्त्व तो समझना चाहिए न? ऐसी बातों को समझाने वाली शिक्षापद्धति भी नहीं रही है। शिक्षा का अभिगम अर्थ और काम का बन गया है। बड़ी विकट समस्या पैदा हो गई है।

गुणसमृद्ध व्यक्तित्व का मूल्यांकन आज के समाज में कितना और कैसा?

सामाजिक विचारधारा भी बिगड़ी हुई है। व्यावहारिक शिक्षा अल्प हो परन्तु गुणसमृद्ध व्यक्तित्व हो, ऐसे व्यक्तियों का मूल्यांकन समाज में कितना और कैसा? गुणसमृद्धि नहीं है परन्तु व्यावहारिक शिक्षा ज्यादा हो और धनसमृद्धि भी ज्यादा हो....ऐसे व्यक्ति का समाज में मूल्यांकन कैसा और कितना? समाज में और गाँव में गुणवानों का मूल्यांकन नहीं होगा तो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जनसमूह गुणप्राप्ति के प्रति उदासीन बनेगा। गुणसमृद्धि के प्रति आज कैसी घोर उदासीनता फैली हुई है समाज में? सर्वत्र धनसमृद्धि का ही तीव्र आकर्षण दिखाई देता है। दोषक्षय का विचार भी कौन करता है? लोकसम्पर्क में गुणदोष का विचार ही नहीं होता है।

जीवन में यदि सुख-शान्ति पाना है तो गुणसमृद्ध बनने का संकल्प कर लो। दोषमुक्त होने का दृढ़ निश्चय कर लो। दूसरा कोई मार्ग नहीं है सुख-शान्ति पाने का। भौतिक वैभव से जो सुख मिलता है वह वास्तविक सुख नहीं है। मनुष्य के पास कितना भी वैभव हों, परन्तु वह दोष व दुर्गुणों से भरा हुआ होगा तो शान्ति प्राप्त नहीं कर सकेगा, चित्तप्रसन्नता प्राप्त नहीं कर सकेगा। वह दुःख और त्रास ही पाएगा।

एक प्राचीन कथा :

प्राचीनकाल की एक घटना है। एक राज्यमंत्री था। मंत्री बुद्धिमान तो था ही, गुणवान भी था। दीर्घदर्शी था और प्रशान्तात्मा था। उसकी पत्नी रूपवती थी, परन्तु अत्यन्त क्रोधी थी। अपने पति का भी अनादर करती थी। जिद्दी भी ऐसी थी कि पकड़ी हुई बात को छोड़ती ही नहीं! महामंत्री पत्नी की सारी हरकतें शान्ति से सहन करता था। प्रारंभ में पत्नी को समझाने का प्रयत्न किया, परन्तु जब निष्फलता मिली तब समझाने का प्रयत्न भी छोड़ दिया।

सभी लोग समझाने से नहीं समझते। बहुत थोड़े लोग ऐसे होते हैं कि जो समझाने से समझते हैं और सन्मार्ग पर आ जाते हैं जबकि कुछ लोग तो ठोकर खाने के बाद भी नहीं सुधरते!

उपदेश सुनते हो पर मनन-आचरण करते हो? :

आप लोगों ने कितने धार्मिक प्रवचन सुने हैं? दोषों से मुक्त होने के कितने उपदेश सुने हैं? कितना सुधार हुआ जीवन में? जीवन में ठोकरें भी क्या कम खायी हैं? फिर भी बोधपाठ लिया? उपदेश सुनते हैं परन्तु उस पर चिन्तन-मनन नहीं करते। ठोकरें खाते हैं परन्तु आत्मनिरीक्षण नहीं करते! अपनी भूल नहीं देखते। फिर सुधार कैसे हो सकता है?

उस महामंत्री ने पत्नी को समझाने का प्रयत्न छोड़ दिया। पत्नी के रोष-रीस वगैरह दोष बढ़ते गये। एक दिन, रात्रि के समय पति के साथ झगड़ा कर दिया और घर छोड़कर अपने मायके जाने के लिए निकल पड़ी। रास्ते

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में चोरों ने पकड़ लिया। वे चोर खून के व्यापारी थे। मंत्रीपत्नी को जंगल में अपने अड्डे पर ले गये। उसके शरीर से खून निकालने के लिए घोर यातना देने लगे।

उस समय उसको अपना पति, अपना घर वगैरह याद आया होगा या नहीं? अपनी भूलों का अहसास हुआ होगा या नहीं? उसके मन में हुआ होगा कि 'अब यदि इस यातना से छुटकारा हो जाय तो मैं कभी भी मेरे पति से झगड़ा नहीं करूँगी, गुस्सा नहीं करूँगी, जिद नहीं करूँगी....मेरे किये हुए पापों का फल मुझे इसी जन्म में मिल गया।'

आये होंगे न ऐसे विचार? पति के गुण भी उस समय याद आये होंगे न? 'मैंने देव जैसे मेरे पति को कितना परेशान किया? ये पाप ही उदय में आये हैं....अब कभी भी उनको परेशान नहीं करूँगी। वे जैसे कहेंगे वैसे ही करूँगी....उनको मैं मेरे देवता मानूँगी....।' ऐसा-ऐसा सोचती होगी न? डाकुओं ने उसको दुःख देने में कमी नहीं रखी थी।

दोषमुक्त होने के पश्चात ही जीवन में शांति :

महामंत्री गुणवान् थे। उन्होंने पत्नी के दोषों को, भूलों को भूलकर उनकी खोज करवाई। भरसक प्रयत्न करके पत्नी को खोज निकाला और डाकुओं को मारकर उसको मुक्त किया। मंत्री ने पत्नी को घर लाकर एक शब्द का भी उपालंभ नहीं दिया। न रोष किया न भूतकाल याद कराया। पत्नी मंत्री के चरणों में गिर पड़ी, फूट-फूटकर रोने लगी। अपनी भूलों की क्षमा माँगने लगी और भविष्य में कभी भी अनादर नहीं करने की प्रतिज्ञा करने लगी। मंत्री ने भी सरल हृदय से क्षमा दे दी। मंत्रीपत्नी के जीवन में अच्छा परिवर्तन आया। गुस्सा करना ही भूल गई! शास्त्र में उसको 'अचंकारी भट्टा' कहा गया है। जब वह दोषमुक्त हुई तब उसने जीवन में सुख-शान्ति पायी। जब क्षमा, नम्रता वगैरह गुणों की समृद्धि पायी तब जीवन में प्रसन्नता का अनुभव हुआ।

गुणवान् बनने के लिए सदाचारी का संग करो :

सभा में से : उसको तो गुणवान् पति मिला था न?

महाराजश्री : आप भी गुणवान् पति बन सकते हो न? गुणवान् पिता बन सकते हो न? गुणवान् मित्र बन सकते हो। गुणवान् भक्त बन सकते हो।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आपका संसर्ग दूसरों के लिए पारसमणी का संपर्क बन जाय! गुणवान् बनो। इस युग में गुणवानों का अकाल पड़ गया है।

गुणवान् बनने के लिए सदाचारी और सद्विचार वाले मनुष्यों का संपर्क बनाये रखें। विचार अच्छे हों परन्तु आचार अच्छे न हों वैसे लोगों का संपर्क नहीं करना है। वैसे आचार अच्छे हों, परन्तु विचार अच्छे न हों वैसे लोगों का भी संपर्क नहीं करना है। वैसे आचार अच्छे हों, परन्तु विचार अच्छे न हों वैसे लोगों का भी संपर्क नहीं करना है। आचार और विचार दोनों अच्छे हों वैसे सत्पुरुषों का संपर्क बनाना है।

जो लोग जुआ नहीं खेलते हों, शराब नहीं पीते हों, मांसभक्षण नहीं करते हों, परस्त्रीगमन नहीं करते हों, चोरी नहीं करते हों - ऐसे लोगों का संपर्क करने का आचार्यश्री कहते हैं। इस ग्रन्थ के टीकाकार आचार्यदेव कहते हैं :

यदि सत्संगनिरतो भविष्यसि भविष्यसि।
अथासज्जनगोष्ठीषु पतिष्यसि पतिष्यसि ।।

'यदि तू सत्संग में तत्पर होगा तो आबाद होगा, और यदि तू दुर्जनों का संग करेगा तो तेरा पतन होगा।'

सत्संग-सत्समागम का तो अद्‌भुत प्रभाव है। इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं कि सत्पुरुषों के संपर्क से मनुष्य का कैसा उत्थान होता है। पतन की गहरी खाई में गिरते मनुष्य को सत्पुरूष बचा लेते हैं।

श्री हेमचन्द्रसूरिजी के संपर्क से, संसर्ग से राजा कुमारपाल ने अपने जीवन को उन्नत बनाया था, प्रजा में भी अहिंसादि धर्म का प्रसार किया था। प्रजा के दुःख दूर किये थे। परन्तु कुमारपाल के स्वर्गवास के बाद राजा अजयपाल ने सत्पुरुषों का संपर्क नहीं रखा था। दुर्जनों का, चापलूसी करनेवालों का संपर्क रखा था तो उसकी स्वयं की तो हत्या हो गई थी परन्तु कुमारपाल के द्वारा निर्मित जिनमंदिरों का भी उसने नाश करवाया था। प्रजा को दुःख और संत्रास दिया था।

दुर्जनों की दोस्ती से अधःपतन :

श्री बप्पभट्टीसूरिजी के संपर्क से आम राजा पतन के खड्डे में गिरते बच गया था। न? एक नाचनेवाली हीनकुल की लड़की के मोह में फँस गया था आम राजा! बप्पभट्टीसूरिजी को खयाल आ गया था। तरकीब से आचार्यदेव ने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजा को बचा लिया था। पढ़ा है न आम राजा और बप्पभट्टीसूरिजी का जीवनचरित्र? न पढ़ा तो हो तो अवश्य पढ़ लेना चाहिए। सत्पुरुषों का समागम कितना लाभदायी और कल्याणकारी है, वह बात आप लोगों के दिमाग में जँच जायेगी। दुर्जनों के समागम से मनुष्य का कितना अधःपतन होता है, यह बात भी इसी चरित्र ग्रंथ में पढ़ने को मिलेगी। दुष्ट आशयवाली पत्नी के समागम से पति का अधःपतन होता है। दुष्ट आचारवाले पति के समागम से पत्नी का सर्वनाश होता है। अधम आचार-विचारवाले मंत्री से राजा का पतन होता है। सदाचारी और सदाशयी मंत्री से राजा का और प्रजा का हित होता है।

संबंध बाँधने से पहले सावधान :

किसी भी व्यक्ति से संबंध बाँधते समय सावधान रहो। जाग्रत रहो। मात्र मीठे शब्दों से या फैशनपरस्ती से अथवा संपत्ति से आकर्षित होकर संबंध मत बाँधना। रूप के आकर्षण से भी संबंध नहीं बाँधना। जिस किसी से संबंध बाँधना हो, पहले उसके आचार और विचार परख लेने चाहिए।

सभा में से : विचारों का परिचय तो संबंध होने के बाद होता है न?

महाराजश्री : पहले भी हो सकता है! बातचीत में विचारों के प्रतिबिंब पड़ते हैं। हाँ, कोई व्यक्ति मायावी हो और किसी स्वार्थ से आपके साथ संबंध बाँधना चाहता हो, तो वह व्यक्ति अपने पाप-विचारों को छिपा सकता है! संबंध होने के बाद ही वास्तविकता का खयाल आ सकता है। परन्तु साधारणतया प्रारंभिक काल में ही व्यक्ति के आचार-विचारों का परिचय मिल जाता है। मान लो कि प्रारंभ में खयाल नहीं आया, बाद में खयाल आया, तो संबंध तोड़ने में देरी नहीं करनी चाहिए। वैसी नैतिक हिम्मत आप में होनी चाहिए। ऐसा मत सोचना कि 'उसको जो करना हो वह भले करें, हमें वैसे पापाचार नहीं करने चाहिए, परन्तु संबंध तोड़ने की क्या आवश्यकता!' यदि ऐसा सोचकर संबंध बनाये रखोगे तो एक दिन आप और आपका परिवार उन पापाचारों में फँस ही जाएगा। आप नहीं फँसोगे तो आपके परिवार के लोग फँस जायेंगे!

एक सच्ची दास्तान :

एक शहर में एक अच्छा परिवार रहता है। अभी है वह परिवार। अच्छा संस्कार समृद्ध परिवार था। उस परिवार के पास वाले ब्लॉक में एक नया किरायेदार रहने आया। उस परिवार में तीन भाई थे और माता-पिता थे। तीनों

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भाई सामान्य स्थिति के थे। नौकरी करते थे। परन्तु बोलने में चतुर थे। थोड़े ही दिनों में दोनों परिवारों में संबंध हो गया। तीन भाइयों का इस परिवार में आना-जाना शुरू हो गया। खाना-पीना और बैठना-उठना भी शुरू हुआ। उस संस्कारी परिवार में दो लड़कियाँ थीं। कॉलेज में पढ़ती थीं, इन तीनों भाइयों ने धीरे-धीरे दो लड़कियों का प्रेम जीतने का प्रयत्न शुरू किया। लड़कियाँ भी उन तीनों भाइयों के घर में जाने-आने लगी थीं।

मामा की हिम्मत से भानजी बची :

दो-तीन महीने के बाद, तीनों भाइयों के माता-पिता कार्यवश अपने वतन के गाँव में गये। इधर तीनों भाइयों ने अपना जाल अच्छी तरह बिछा दिया था। जाल में दो बहने फँस गई थीं। शारीरिक संबंध भी होने लगा था। दो बहनें बदनामी के भय से यह बात अपने माता-पिता से कह नहीं सकती थीं। तीनों भाई शैतान बन गये थे। लड़कियों का प्रतिदिन शील लूटने लगे थे। दो बहनों ने परस्पर कुछ विचार किया और प्रसंग उपस्थित कर वे दोनों बहनें दूर शहर में अपने मामा के घर चली गईं। मामा के पास एक दिन दोनों बहनों ने अपना दिल खोल दिया....फूट-फूटकर रोने लगीं। मामा बुद्धिमान् थे। दोनों को आश्वासन दिया और भविष्य में चिन्ता नहीं करने का विश्वास बंधाया। मामा अपनी बहन के घर पहुँचे। पड़ोसवाले तीनों भाइयों को देखा। उनकी शक्ति, बुद्धि....वगैरह माप लिया। अपनी बहन के परिवार के साथ के संबंध को भी जान लिया। मामा ने उन तीनों के साथ भी थोड़ा परिचय कर लिया। एक दिन मामा अपनी जेब में छोटी-सी रिवॉल्वर लेकर उन भाइयों के घर में गये। तीनों भाइयों के साथ गंभीरता से बात शुरू की। ज्यों ही दो बहनों की बात आई, तीनों भाई शंका से मामा को घूरने लगे। मामा ने स्पष्ट चेतावनी दे दी : 'तुम तीनों भाई यह जगह खाली कर दूसरी जगह चले जाओ। इस शहर को ही छोड़ दें।' तीनों भाई में से एक बोला : 'यदि हम नहीं जायेंगे तो आप क्या कर लेंगे?' मामा ने धीरे से जेब में से रिवॉल्वर निकाली और कहा : 'मैं क्या कर सकता हूँ यह अभी देखना है या बाद में?'

रिवॉल्वर देखते ही तीनों काँपने लगे और कह दिया : 'हम आज रात को ही यहाँ से चले जायेंगे....।' और रात में वे तीनों चुपचाप वहाँ से चले गये। बाद में मामा ने अपनी बहन को सावधान करते हुए कहा : 'तेरे घर में दो जवान लड़कियाँ हैं और तू तेरे घर में हर किसी को आने देती है....इसका

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

परिणाम अच्छा नहीं आयेगा। ये तीनों भाई बड़े शैतान थे, मैंने भगा दिया है। अब कभी भी उनके साथ किसी प्रकार का संबंध मत रखना। बोलने का संबंध भी मत रखना।'

हालाँकि आज के समय में ऐसी घटनाएँ बनती ही रहती हैं। चूँकि सदाचारी और भ्रष्टाचारी का भेद ही नहीं किया जाता है। 'सदाचारी के साथ ही संबंध रखना है,' ऐसा निर्णय भी नहीं रहा है।

सभा में से : हम लोग जहाँ रहते हैं, वहाँ आसपास में जो लोग रहते होते हैं उनके साथ थोड़ा-सा संबंध तो रखना ही पड़ता है....बड़े शहरों में तो आसपास दूसरी 'कम्युनिटी' के लोग भी होते हैं, मांसाहारी भी होते हैं। शराब और जुआ तो श्रीमंतों के घर में सामान्य बन गये हैं। अब हम सदाचारी पुरुषों को कहाँ खोजने जायँ? कैसे उनका संपर्क करें?

महाराजश्री : आपकी समस्या तो है ही। समस्या का समाधान ढूँढ़ना चाहिए। मैंने प्रारंभ में ही आपको कहा है कि जब तक अर्थ-काम का अभिगम नहीं बदलेगा तब तक समस्या सुलझने की नहीं है। आप क्यों ऐसी 'लोकालिटी' में रहते हो? क्यों अच्छे-समान धर्मवाले लोगों के पास नहीं रहते? क्यों अपने वतन में नहीं रहते? चूँकि वहाँ ज्यादा धन नहीं कमा सकते! गुणसमृद्धि पाने का लक्ष्य नहीं रहा। दुराचार और कु-विचारों का परहेज नहीं रहा। आपको सदाचारी बनने की तमन्ना होगी तो सदाचारी पुरुष मिल ही जायेंगे।

दूध नहीं मिलेगा तो क्या जहर पिओगे? :

दूसरी बात : सदाचारी पुरुष नहीं मिलें तो दुराचारी पुरूषों का संपर्क करना क्या आवश्यक है? दूध नहीं मिले तो जहर पीना क्या उचित है? दुराचारी-भ्रष्टाचारी लोगों का संपर्क किसी भी स्थिति में करना उचित नहीं है। मैं जानता हूँ कि कुछ वर्षों से - जब से महिलाएँ व्यापार में एवं नौकरी में प्रवृत्त होने लगी हैं तब से - कुछ महिलाएँ तो पैसे के लिए अपने शरीर भी बेच रही हैं। शराब भी पीने लगी हैं न? क्लबों में जाकर नाचने भी लगी हैं न? उनको चाहिए अमन-चमन!

वैसे पुरुषों को भी मनमाने सुखभोग पाने हैं! उनको भी दुराचारी ही ज्यादा पसंद है! सदाचारी लोग उनको पसंद भी नहीं! आज तो कई परिवारों में लड़के-लड़कियों को सदाचारी माता-पिता भी पसंद नहीं हैं! सदाचारों की मर्यादाओं का पालन उनको जरा भी पसंद नहीं है। क्या किया जाय?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दुराचारों का फैलाव बढ़ता ही जा रहा है। सदाचारों की घोर उपेक्षा हो रही है।

ऐसी निराशापूर्ण परिस्थिति में भी, यदि आपका दृढ़ निर्णय होगा कि 'मुझे इन सामान्य धर्मों का पालन कर, मोक्षमार्ग के आराधक की योग्यता-पात्रता पाना है,' तो आप इन सामान्य धर्मों का पालन अवश्य कर सकेंगे। सदाचारी सत्पुरुषों के संपर्क में आप रह सकेंगे। दुर्जनों से दूर रह सकेंगे।

स्वास्थ्य के लिए-शारीरिक स्वास्थ्य के लिए मनुष्य क्या नहीं करता है? क्या नहीं छोड़ता है? कौन से डॉक्टर के पास नहीं जाता है? तो आत्मकल्याण के लिए क्या आप दुर्जनों का संग नहीं छोड़ सकते? सज्जनों का संग नहीं कर सकते? चाहिए आत्मकल्याण की तीव्र इच्छा! चाहिए आत्मविशुद्धि की प्रबल भावना। चाहिए पारलौकिक दुखों का भय!

जीवनयात्रा में यह पंद्रहवाँ सामान्य धर्म अत्यंत आवश्यक धर्म है। मोक्षमार्ग की आराधना में तो यह धर्म अनिवार्य रूप से आवश्यक है। इस धर्म का आज संक्षिप्त विवेचन किया है।

आज बस, इतना ही

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***मनुष्यजन्म महान् है, तो फिर मनुष्य को जन्म देनेवाले महान् क्यों नहीं? इस महानता की अनुभूति संतान तभी कर पाते हैं जब माँ-बाप प्यार से उनका पालन-पोषण करते हैं और उन्हें संस्कारों का दान देते हैं।***
- ***माता-पिता में ज्यादा नहीं तो चार गुण तो चाहिए ही। पहला गुण है सहनशीलता, दूसरा गुण है स्नेहशीलता, तीसरा गुण है उदारता और चौथा गुण है गंभीरता।***
- ***जिस बच्चे को माँ का दूध नहीं मिलता, पिता का प्यार नहीं मिलता, संस्कारों की परंपरा नहीं मिलती...वह बच्चा बड़ा होकर क्या खाक् माता-पिता को पूजनीय समझेगा? नहीं...वह मान ही नहीं सकता!***
- ***जो माता-पिता सच्चे अर्थों में गुणवान् होते हैं, बुद्धिमान् होते हैं....वे अपने संतानों के जीवनवन को किस कदर धर्म का सुहावना उपवन बना सकते हैं....यह जानने के लिए रूद्रसोमा और सोमदेव की ऐतिहासिक कहानी सुनिए....मैं आपको वह सुना रहा हूँ!***

प्रवचन : ६२

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्य श्री हरिभद्रसूरिजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ के प्रारंभ में गृहस्थजीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हैं। मनुष्य को प्रसन्न और पवित्र जीवन जीने का सुन्दर मार्गदर्शन देते हैं। यदि इस मार्गदर्शन के अनुसार जीवन जीया जायँ तो अवश्य मनुष्य के जीवन में प्रसन्नता और पवित्रता आये बिना नहीं रहे। परन्तु इस प्रकार का जीवन तभी जीया जा सकता है जब आपका निर्णय हो कि 'मुझे प्रसन्नतापूर्ण और पवित्रतापूर्ण जीवन जीना है।' ऐसा दृढ़ निर्धार होना चाहिए।

धर्मक्रिया कर लेना एक बात है, जीवनपद्धति में परिवर्तन करना दूसरी बात है। आप छोटी-बड़ी धर्मक्रियाएँ तो करते होंगे, परन्तु जीवनपद्धति में परिवर्तन किया है? जीवन के कार्यकलापों में इन सामान्य धर्मों को स्थान दिया है? नहीं दिया है न? क्यों? क्योंकि आप सुनते तो हैं परन्तु सोचते नहीं हो, कुछ सोचते होंगे, परन्तु परिवर्तन करने का साहस नहीं होगा। दुनिया के लोगों को देखते हो और उसी अनुसार जीते हो! इसलिए शान्ति, समता, प्रसन्नता और पवित्रता नहीं आती है जीवन में!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'दूसरे लोग कैसे जीते हैं'-यह देखने के बजाय 'मुझे किस प्रकार जीना है'-यह सोचो। ज्ञानीपुरुषों के मार्गदर्शन के अनुसार अपनी जीवनपद्धति निश्चित करो। जीवनपद्धति के निर्णय में इन सामान्य धर्मों को स्थान दो। देश और काल के अनुसार थोड़ा-सा परिवर्तन करके भी इन सामान्य धर्मों को जीवन में स्थान दो। आप विश्वास रखो कि इससे आप दुःखी नहीं होंगे। इससे आपका सुख चला नहीं जायेगा, सुख बढ़ेगा, शान्ति बढ़ेगी और प्रसन्नता बढ़ेगी। अनेक दूषणों से आप बच जायेंगे। पारलौकिक जीवन भी सुधर जायेगा। विशिष्ट धर्मपुरुषार्थ करने की पात्रता भी बन जायेगी। गुणों का विकास होगा। दोषों का नाश होता जायेगा।

मनुष्यजन्म महान् तो जन्म देनेवाले महान् क्यों नहीं?

सोलहवाँ सामान्य धर्म है माता-पिता की पूजा। माता-पिता की पूजा करनी चाहिए! जो जन्म देते हैं वे माता-पिता कहलाते हैं। दुनिया में यह संबंध बड़ा पवित्र माना गया है। मनुष्यजन्म महान् है तो मनुष्य को जन्म देनेवाले भी महान् क्यों नहीं? परंतु यह महानता संतानों को तब दिखती है जब माता-पिता उनका वात्सल्य से पालन करते हैं और सुसंस्कारों का प्रदान करते हैं।

माता-पिता पूजनीय तभी बनते हैं जब वे संतानों के प्रति अपने कर्तव्यों का समुचित पालन करते हैं। कर्तव्यों का पालन तभी संभव है जब माता-पिता में विशिष्ट गुणों का आविर्भाव हो। ज्यादा नहीं तो चार गुण तो अवश्य चाहिए। पहला गुण है सहनशीलता, दूसरा गुण है स्नेहशीलता, तीसरा गुण है उदारता और चौथा गुण है गंभीरता। गुणमय व्यक्तित्व माता-पिता को महान् बनाता है। गुणमय व्यक्तित्व माता-पिता को पूजनीय बनाता है। गुणमय व्यक्तित्व वाले माता-पिता की ही पूजा करने की है। जो माता-पिता संतान को जन्म देकर ही निर्जन प्रदेश में छोड़ देते हैं अथवा अनाथाश्रम में भेज देते हैं, ऐसे माता-पिता पूजनीय नहीं बनते। जो माता-पिता क्रूर बनकर गर्भस्थ बच्चे को मार डालते हैं, वैसे कसाई जैसे माता-पिता पूजनीय नहीं बनते। जब से 'गर्भपात' को अपराध नहीं मानने की घोषणा सरकार की ओर से हुई है तब से तो लाखों की संख्या में भारत में गर्भपात का घोर पाप होने लगा है। पेट में रहे अपने बच्चे की हत्या करवाने वाली स्त्री 'माँ' कहला सकती है क्या? वह तो जिंदी डायन है!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गर्भपात में निष्ठुरता और क्रूरता की मिलीभगत :

अभी अभी मैंने एक प्रामाणिक रिपोर्ट पढ़ी। भारत के आरोग्यमंत्री ने थोड़े महीने पहले लोकसभा में सगर्व घोषित किया कि 'सन् १९७८-७९ में सरकारी स्तर पर दो लाख तेरह हजार गर्भपात हुए हैं!' उन्होंने कहा कि 'अब भारत में गर्भपात लोकप्रिय बनता जा रहा है।' आगे चलकर उन्होंने कहा : 'तमिलनाडु और महाराष्ट्र - ये दो राज्य गर्भपात में सबसे आगे हैं!' आरोग्यमंत्री ने इन दो राज्यों को अभिनन्दन दिया। दूसरे राज्यों से अनुरोध किया कि 'वे इन दो राज्यों के चरणचिह्न पर चलें!'

लोकसभा में बैठे हुए प्रजा के प्रतिनिधियों ने ये बातें ठंडे दिमाग से सुन ली होगी और केंटीन में जाकर भरपेट नाश्ता भी किया होगा।

गर्भपात कितनी क्रूरता से होता है, यह प्रक्रिया आप जानते हो? बात-बात में 'एबोर्शन' की बातें करनेवाले, शिक्षित कहलानेवाले (वास्तव में कसाई) लोग 'एबोर्शन' की प्रक्रिया जानते हैं क्या? कितनी घोर क्रूरता से गर्भ को मारा जाता है, कभी आप अपनी नजरों से देखें....तो बेहोश हो जायँ। गर्भपात करने वाले डॉक्टर भी कितने क्रूर हृदय के होंगे? वे नर्स भी कितनी पत्थरदिल की होगी? गर्भपात करानेवाली महिलाओं की तो किन शब्दों में भर्त्सना करूँ?

जन्मदाता माता-पिता ही क्रूर बनेंगे क्या?

सरकार ने गर्भपात को कानून से इजाजत दे दी है! सरकार भी कैसी आई है? क्या कोई वीरपुरुष इस घोर पाप को बंद करवा नहीं सकेगा? लाखों अजन्मे बच्चों को बचाने के लिए कोई महापुरुष आगे नहीं आयेगा? जन्म देनेवाले माता-पिता ही क्रूर बनेंगे तो वे 'पूजनीय' कैसे बनेंगे? माता-पिता धिक्कारपात्र बनेंगे।

स्त्री क्यों गर्भपात करवाती है? इसके अनेक कारण हैं। जिसने शादी नहीं की है और व्यभिचार से गर्भवती बनी हुई स्त्री समाज से बचने के लिए, अपने अपराध को छुपाने के लिए गर्भपात करवाती है। जिसने शादी की है, परन्तु जो माता बनना नहीं चाहती है, और भूल से गर्भवती बन जाती है तो गर्भपात करवा देती है। कभी ऐसा भी बनता है कि स्त्री गर्भपात करवाना नहीं चाहती है, परन्तु पति के आग्रह से-दबाव से उसको गर्भपात करवाना पड़ता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गर्भपात का प्रमुख कारण : अत्यधिक भोगेच्छा :

जो स्त्री शादी के बाद भी नौकरी करना चाहती है वह संतान नहीं चाहती। शादी के बाद ५-१० वर्ष तक वह माता बनना नहीं चाहती। आज ऐसी बात बन गई है। परन्तु, वह ब्रह्मचर्य का पालन करना भी नहीं चाहती। उसको भोगसुख तो चाहिए ही। वह माता नहीं बन जाय इसलिए सतर्क भी रहती है, परन्तु यदि भूल हो जाती है तो 'एबोर्शन' करवा लेती है। अपने सुख के लिए गर्भस्थ शिशु की हत्या। ऐसी स्त्री माता बनने के लायक ही नहीं। इससे तो पशुमाता अच्छी कि जो कभी भी ऐसा पाप नहीं करती है।

संतान क्यों माता-पिता को पूज्य नहीं मानते हैं?

कुछ माता-पिता बच्चों को जन्म तो देते है परन्तु पालन करना नहीं चाहते! दोनों को नौकरी होती है, अथवा व्यवसाय होता है, अथवा मौज करना होता है। बच्चे को वे विघ्न समझते हैं....इसलिए 'शिशुपालन केन्द्र' में भेज देते हैं। शिशुपालन केन्द्र की किरायेदार औरतें बच्चों का पालन करती हैं।

ऐसे बच्चों को अपने माता-पिता के दर्शन भी नहीं होते हैं तो माता-पिता का वात्सल्य-प्रेम मिले ही कैसे? जिन बच्चों को माता का दूध नहीं मिलता है, पिता का प्रेम नहीं मिलता है, सुसंस्कार नहीं मिलते हैं, वे बच्चे माता-पिता को पूजनीय कभी नहीं मानेंगे। ऐसे बच्चे जब बड़े होते हैं तब उनके मन में जन्म देनेवाले माता-पिता के प्रति घोर घृणा पैदा हो जाती है। व्यक्ति के लिए, समाज के लिए और राष्ट्र के लिए यह कितना बड़ा नुकसान है? स्वस्थ चित्त से सोचोगे तो ही ये बातें समझ में आयेंगी।

माता-पिता को अपना व्यक्तित्व गुणमय बनाना चाहिए :

माता-पिता बच्चों के प्रति अपने कर्तव्य समझते हैं क्या? समझेंगे क्या? माता-पिता को सम्माननीय बनना है, पूजनीय बनना है तो अपने कर्तव्यों का पालन करना ही होगा। कर्तव्यों का पालन करने के लिए सहनशीलता, स्नेहशीलता, उदारता और गंभीरता - ये गुण होने ही चाहिए। जो सहनशील नहीं होता है वह कर्तव्यपालन नहीं कर सकता है। जो सहनशील नहीं होता वह कर्तव्यपालन का फल नहीं पाता है। जो उदार नहीं होता है वह कर्तव्यपालन करते हुए भी सुख नहीं पाता है। जो गंभीर नहीं होता है वह कर्तव्यपालन सही रूप से नहीं कर सकता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन चार गुणों से माता-पिता का उच्च व्यक्तित्व विकसित होता है। इन चार गुणों से विभूषित माता-पिता अपनी संतानों का सुन्दर जीवननिर्माण कर सकते हैं। स्व-पर का हित कर सकते हैं। श्रमण भगवान महावीरस्वामी के शासन में ऐसे अनेक गुणवान् माता-पिता हुए हैं कि जिन्होंने अपनी संतानों का परमहित किया और अपना भी आत्महित किया। आज मैं आपको ऐसे एक पुण्यशाली परिवार का परिचय दूँगा।

एक ऐतिहासिक कहानी :

मालव देश में दशपुर नगर था। राजा का नाम था उदायन। राजमान्य पुरोहित थे सोमदेव। पुरोहित पत्नी का नाम था रुद्रसोमा। मैं सोमदेव और रुद्रसोमा के परिवार की कहानी सुनाऊँगा। यह कोई कल्पित कहानी नहीं है, ऐतिहासिक सत्यकथा है। चौथे आरे की नहीं, पाँचवे आरे की कहानी है। बड़ी दिलचश्प कहानी है। यदि माता-पिता गुणवान् होते हैं, बुद्धिमान होते हैं तो संतानों के जीवन-विकास में, आत्म-विकास में कैसा भव्य योगदान देते हैं, यह बात यह कहानी बतायेगी।

सोमदेव वैदिक-परंपरा को मान्य करनेवाले ब्राह्मण थे, परन्तु वे परधर्मसहिष्णु थे। रुद्रसोमा जैन-परंपरा को मान्य करनेवाली परम श्राविका थी। दोनों पति-पत्नी अपनी अपनी मान्यतानुसार धर्मानुष्ठान करते थे। अपने-अपने मंदिर जाते और अपने-अपने मंत्र का जाप करते। न कभी एक-दूसरे का खंडन, न कभी एक-दूसरे की आलोचना-प्रत्यालोचना। कितनी गंभीरता होगी? कितनी उदारता होगी?

प्यार के बादल बनकर बरसते रहो :

सोमदेव राजमान्य पुरोहित थे। विद्वान थे। चार वेदों के ज्ञाता थे। फिर भी निराभिमानी और सरलपरिणामी थे। रुद्रसोमा जैन-दर्शन के नवतत्त्व और नयवाद की ज्ञाता थी परन्तु साथ-साथ वह प्रियवचना थी! उसकी वाणी में मृदुता थी। वाणी में कभी आक्रोश नहीं, कठोरता नहीं! जीवन-सफलता की यह मास्टर की है। वाणी में से स्नेह की वर्षा होने दो! कोई कितना भी रोष उगले, उगलने दो, आप तो स्नेह की ही वर्षा करते रहो! विजय आपकी ही होगी। रुद्रसोमा ने अपनी प्रिय वाणी से पति का हृदय जीत लिया था। पति के स्वभाव को जानकर वह पारिवारिक जीवन जी रही थी। हालाँकि सोमदेव रुद्रसोमा को 'नास्तिक', 'अज्ञानी' मानता था, परन्तु उसमें उग्रता नहीं थी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और जानता था कि 'रुद्रसोमा की जैन-दर्शन में अविचल श्रद्धा है,' इसलिए कभी भी ऐसी तत्त्वचर्चा नहीं करता था कि जिससे संघर्ष पैदा हो या मनमुटाव पैदा हो। यही तो थी सोमदेव की गंभीरता! पत्नी पर अपना अधिकार होते हुए भी उस पर वैदिक धर्म के पालन का दबाव नहीं डाला। जैन धर्म के पालन में हस्तक्षेप नहीं किया! रुद्रसोमा भी उतनी ही गंभीर थी, उसने कभी भी पति के दिल को दुःख हो वैसा व्यवहार नहीं किया।

सभा में से : पति को सम्यक्मार्ग पर ले आना पत्नी का धर्म नहीं है?

महाराजश्री : दूसरे को सम्यक्धर्म प्रदान करने के लिए मनुष्य में दक्षता और दीर्घदृष्टि चाहिए। इसमें भी जहाँ निकट के संबंध हो वहाँ तो ज्यादा सावधानी चाहिए। जल्दबाजी करने में नुकसान होना संभव है। रुद्रसोमा ने सोमदेव की मानसिक स्थिति का अध्ययन किया होगा। उसके संयोगों का अध्ययन किया होगा....और कोई विशेष संयोग का इन्तजार करती होगी? उसके हृदय में यह भावना तो थी ही कि 'मेरे पति और मेरा परिवार जैन धर्म के प्रति श्रद्धावान बनें,' परंतु हर भावना फलवती नहीं होती है न? होती भी है, विलंब हो सकता है! गंभीर बीमारी हो तो आरोग्य प्राप्त करने में विलंब होता है!

पारिवारिक जीवन ऐसा चाहिए :

रुद्रसोमा ने सोचा होगा कि सोमदेव विद्वान और राजमान्य पंडित है, उनके साथ वाद-विवाद नहीं किया जा सकता। प्रियजनों को वाद-विवाद से जीते नहीं जा सकते। झगड़ा करके कभी धर्म-परिवर्तन नहीं कराया जा सकता है। इसलिए इस विषय में मौन धारण करना ही उसने अच्छा समझा होगा। हाँ, परिवार में गृहस्थोचित सामान्य धर्मों का पालन होता ही था। न्याय-नीति-सदाचार-विनय-नम्रता-गुणानुराग.... वगैरह धर्मों के पालन में चुस्तता थी।

रुद्रसोमा ने दो पुत्रों को जन्म दिया था। एक का नाम था आर्यरक्षित और दूसरे का नाम था फल्गुरक्षित। दोनों पुत्रों को माता-पिता ने अच्छे संस्कार दिये थे। सोमदेव और रूद्रसोमा ने आपस में सहमति लेकर, दोनों पुत्रों को वैदिक परंपरानुसार संस्कार दिये थे। सोमदेव के आग्रह को रूद्रसोमा ने स्वीकार कर लिया था। वह किसी भी प्रसंग में पति के साथ संघर्ष पसन्द नहीं करती थी। जबकि पति ने उसको अपनी मान्यतानुसार धर्माराधना करने की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अनुमति प्रदान कर दी थी। संतानों पर पति का अधिकार मान्य कर लिया था। रूद्रसोमा ने। परिवार का वातावरण उसने प्रसन्नतापूर्ण बना रखा था।

एक बात मत भूलना कि, इस परिवार में गृहस्थोचित सामान्य धर्मों के पालन में पति-पत्नी दोनों सामान्य रूप से सहमत थे। सदाचारों के पालन में दोनों समान रूप से आग्रही थे। दोनों लड़कों को सदाचारों की शिक्षा सहज रूप से मिलती थी। माता और पिता-दोनों, बच्चों के प्रति अपने कर्तव्यपालन में सजग थे। वे दोनों मानते थे कि 'बच्चों को जन्म देने के बाद यदि हम उनके तन-मन की और आत्मा की चिंता नहीं करते हैं, खयाल नहीं रखते हैं तो हम कसाई से भी ज्यादा क्रूर हैं।' बच्चों के, संतानों के पहले 'गुरु' तो माता-पिता होते हैं। जिस बच्चे को माता गुरु मिले, पिता गुरु मिले, उस बच्चे का सुन्दर चरित्रनिर्माण होता है।

माँ-बाप स्वयं सदाचारी हैं सही? :

आप लोग आपकी संतानों के गुरु बने हो न? संतानों को सदाचारों की शिक्षा देते हो न? आप स्वयं सदाचारों का पालन करते हो न?

सभा में से : हमारी तो बात ही मत करें, दुराचारों से भरे हुए हम, संतानों को कैसे सदाचारों की बात भी कर सकते हैं?

महाराजश्री : तो आप संतानों के लिए पूजनीय नहीं बन सकते। सम्माननीय नहीं बन सकते। आपके लड़के-लड़कियाँ आपके प्रति मान-सम्मान की दृष्टि से नहीं देखेंगे। आपकी आज्ञाओं का पालन नहीं करेंगे। आप उनको उन्मार्ग पर जाते नहीं रोक सकेंगे। इसका क्या परिणाम आता है, यह कभी सोचा है? आप संतानों के प्रति अपने कर्तव्यों को नहीं निभायेंगे तो संतानें आपके प्रति अपने कर्तव्य कैसे निभायेंगे? माता-पिता की पूजा, यह सामान्य धर्म सन्तानों के लिए बताया गया है, परन्तु माता-पिता में पूज्यता ही न हों तो वे माता-पिता की सेवा कैसे करेंगे? जन्म देने मात्र से माता-पिता पूज्य नहीं बन जाते। पूज्य वे बनते हैं कि जो गुणवान् होते हैं और उपकारी होते हैं।

अपनी आर्य संस्कृति में पूज्य-पूजक का पवित्र संबंध बताया गया है, वह इसी दृष्टि से बताया गया है। परमात्मा तीर्थंकरदेव इसलिए पूजनीय हैं चूँकि वे अनन्त गुणों के निधान हैं और उन्होंने इस जीवसृष्टि पर अनन्त उपकार किये हैं! साधुपुरुष भी इसी हेतु से पूजनीय हैं, क्योंकि वे अनेक विशिष्ट गुणों से अलंकृत होते हैं और जीवसृष्टि पर उपकार करते हुए जीवन जीते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

माता-पिता भी गुणवान् होने चाहिए, सदाचारों के पालक होने चाहिए और परिवार के ऊपर उपकार करनेवाले चाहिए। तो ही वे पूजनीय बन सकते हैं।

सोमदेव और रुद्रसोमा वास्तव में पूजनीय माता-पिता थे। सोमदेव राजपुरोहित होते हुए भी, उन्होंने स्वयं दोनों पुत्रों को अध्ययन कराया। वे यदि चाहते तो दूसरे पंडित से भी अध्ययन करवा सकते थे। उनके पास अपार संपत्ति थी और सत्ता भी थी! परंतु उन्होंने स्वयं अध्ययन करवाया। जितना ज्ञान उनके पास था वह सारा ज्ञान उन्होंने दोनों पुत्रों को दे दिया।

अध्ययन के माध्यम से उन्होंने दोनों पुत्रों में सुसंस्कारों का सिंचन किया। ज्ञानदृष्टि दी। मुक्ति का आदर्श दिया। आत्मा का स्वरूपज्ञान करवाया। वेदों का तलस्पर्शी बोध करवाया। व्यावहारिक शिक्षा के साथ साथ धार्मिक और आध्यात्मिक शिक्षा भी दे दी।

ज्यों-ज्यों आर्यरक्षित और फल्गुरक्षित शिक्षा पाते गये त्यों-त्यों उनके हृदय में माता-पिता के प्रति प्रेम व सद्भाव बढ़ता गया। करुणामयी, वात्सल्यमयी माता के प्रति तो विशेषरूप से भक्तिभाव उल्लसित होता गया। सदाचारों का पालन भी सहजता से करने लगे। कोई भय या दबाव से सदाचारों का पालन नहीं करते थे, सदाचार उनको पसन्द आ गये थे और वे उनका पालन करते थे।

भय से या दबाव से जो लोग सदाचारों का पालन करते हैं; वे लोग जब भयरहित हो जाते हैं, स्वतंत्र हो जाते हैं तब सदाचार छोड़कर दुराचारों का सेवन करने लगते हैं। इसलिए किसी को भी भय से या दबाव से सदाचारों का पालन मत करवायें। सदाचारों का महत्त्व समझायें। दुराचारों के नुकसान समझायें। उनके हृदय में सदाचारों के प्रति प्रेम पैदा करें। स्वयं सदाचारों का पालन कर, महान् आदर्श प्रस्तुत करे।

स्नेह से समझाकर सन्तानों को सदाचार का शिक्षण और संस्कार दो :

सन्तानों को किसी भी अच्छी बात की प्रेरणा मधुर शब्दों में दिया करें। कटु शब्दों में यदि अच्छी बात कहोगे तो वह बात स्वीकार्य नहीं बनेगी। माता-पिता को अपनी जबान पर तो संयम रखना ही होगा। परन्तु, दुर्भाग्य है कि माता-पिता ज्यादातर, अपनी जबान पर संयम नहीं रखते हैं। गालियाँ भी बकते हैं और घोर कटुता भी उगलते हैं। हम लोग जब प्रेरणा देते हैं कि 'ऐसा असभ्य व्यवहार नहीं करना चाहिए,' तब हमको क्या कहते हैं, जानते हो? 'हमारी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बात जब लड़का नहीं मानता है तब हम से सहा नहीं जाता है.... गुस्सा आ ही जाता है और कटु शब्द निकल ही जाते हैं....।' तो फिर लड़का भी यही बात करेगा न? 'मेरे माता-पिता मेरे साथ घोर दुर्व्यवहार करते हैं, मैं उनकी एक भी बात मानने को तैयार नहीं हूँ।' बस हो गया काम पूरा?

मैंने पहले ही कहा था न कि माता-पिता में सहनशीलता होनी चाहिए? संतानों की कुछ निर्दोष हरकतें सहन करनी ही होगी। मौन रहना होगा! और जब कहना ही पड़े तब वाणी में मधुरता ही चाहिए।

सभा में से : मधुरता न हो तो चलेगा, कटुता तो नहीं होनी चाहिए। जब हमारे माता-पिता गालियाँ बोलते हैं तब हम क्या सीखेंगे?

महाराजश्री : माता-पिता का अनादर करना सीखेंगे! माता-पिता का तिरस्कार करना सीखेंगे....और क्या सीखेंगे? ऐसे माता-पिता के वहाँ जन्म मिला, यह भी कर्मों का दोष है ना? क्यों सुसंस्कारी और गुणसंपन्न माता-पिता के वहाँ जन्म नहीं हुआ? दोष माता-पिता का नहीं देखना, अपने पापकर्मों के उदय का विचार करना। जिनको सुसंस्कारी और गुणसंपन्न माता-पिता नही मिले हों, कुसंस्कारी और दोषभरपूर माता-पिता मिले हों, वैसी सन्तानों को 'प्रह्लाद' बनना पड़ेगा। हो सकता है कि अयोग्य माता-पिता के घर में सुयोग्य संतान हो और सुयोग्य माता-पिता के घर में अयोग्य संतान हो। यह तो संसार है। संसार में विचित्रताओं की सीमा नहीं है। प्रज्ञावंत आत्मा अपनी आत्मा को बचा लिया करती है। अपने जीवन को दोषों से, पापों से बचा लेना ही बुद्धिमत्ता है। अपनी बुराइयों की जिम्मेदारी दूसरों पर थोपना, उचित नहीं है। यदि ऐसा करोगे तो बुराइयों से बच नहीं सकोगे। यदि संतान सुशील, प्रज्ञावंत और धीर-वीर होती है तो माता-पिता को भी सन्मार्ग पर ले आती है! परन्तु यह बात मैं आज नहीं करना चाहता। आज तो मुझे माता-पिता के कर्तव्यों का भान करवाना है....चूँकि उनको पूजनीय बनाना है। उन्होंने अपनी पूजनीयता खो दी है, वह वापस प्राप्त करवानी है।

माता-पिता होने मात्र से पूजनीय नहीं बन सकते। पूजनीय बनने के लिए गुणवान् बनना ही पड़ेगा, उपकारी बनना पड़ेगा! आप जानते हो न कि अपने देश में उपकारी तत्त्वों की पूजा कितने व्यापक रूप में होती है? सूर्य की पूजा होती है। चूँकि वह विश्व को प्रकाश देता है। चन्द्र की पूजा होती है, चूँकि वह औषधियाँ प्रदान करता है। वृक्षों की पूजा होती है....चूँकि वे फल देते हैं, छाया देते हैं। नदियों की पूजा होती है, समुद्रपूजन भी होता है। उपकारी की पूजा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होनी चाहिए, चूँकि 'उपकार' इस विश्व का परम श्रेष्ठ तत्त्व है। जो जो हमारे उपकारी हों, उनकी यथोचित पूजा करनी चाहिए। पूजा की पद्धति में तारतम्य हो सकता है, परन्तु भाव तो कृतज्ञता का होना ही चाहिए। माता-पिता संतानो पर उपकार करते हैं, इसलिए वे पूजनीय बनते हैं।

माता-पिता के सन्तानों के प्रति अनेकविध कर्तव्य :

मैं आज माता-पिताओं को इस दृष्टि से सावधान करता हूँ कि वे संतानों की दृष्टि में सदैव आदरपात्र बने रहें। संतानों का उनके प्रति प्रेम बना रहे....। संतानों के प्रति उनके जो जो नैतिक, पारिवारिक और आध्यात्मिक कर्तव्य हैं; उन कर्तव्यों का समुचित पालन करते रहें। संतानों को बाल्यकाल से समुचित शिक्षा देना, महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है। शिक्षा देने का अर्थ इतना ही नहीं है कि किसी भी स्कूल में 'एडमिट' कर दिया लड़के को और किताबें लाकर दे दो....बाद में....? लड़का जाने और उसकी माँ जाने! ऐसा नहीं चलेगा। बच्चे को स्कूल में 'एडमिट' करते समय स्कूल का वातावरण जानना चाहिए। पाठ्यक्रम देखना चाहिए। स्कूल का अनुशासन देखना चाहिए।

बाल्यकाल में बच्चों में जो संस्कार पड़ेंगें उसका असर जीवनपर्यंत रहेगा। इसलिए बच्चों के प्रति माता-पिता को विशेष रूप से जाग्रत रहना चाहिए। इस देश में और इस काल में तो ज्यादा जागृति अपेक्षित है। स्कूलों में, विद्यालयों में....महाविद्यालयों में कि जहाँ सुसंस्कार मिलने चाहिए, वहाँ कुसंस्कार ही मिल रहे हैं। अनेक दूषण बढ़ रहे हैं। अनेक व्यसन बढ़ रहे हैं। इस बात को लेकर बहुत से प्रबुद्ध लोग चिंतित हो गये हैं। परन्तु इनको 'अब क्या करें?' 'सुधार कैसे करें?' कुछ समझ में नहीं आ रहा है। देश का तरुणधन और यौवन धन विनष्ट हो रहा है, इस बात की चिन्ता होना स्वाभाविक ही है। शिक्षापद्धति में आमूल परिवर्तन नहीं होगा तब तक कुछ भी सुधार होना संभव नहीं है। ऐसी परिस्थिति में बच्चों को संस्कारी बनाने होंगे तो माता-पिता ही कुछ कर सकते हैं। कुसंस्कारों से बच्चों को वे बचाना चाहें तो बचा सकते हैं। परन्तु माता-पिता को बच्चों के आत्महित की चिन्ता है कहाँ?

विनय और एकाग्रता विद्यार्थी के लिए अनिवार्य गुण :

पुरोहित सोमदेव स्वयं अपने दो पुत्रों को अध्ययन करवाते हैं। जब उन्होंने अपना ज्ञान पूरा दे दिया तब आर्यरक्षित को पाटलीपुत्र नगर में पढ़ने के लिए भेजना चाहा। उस काल में पाटलीपुत्र महान् विद्याधाम था। भारत के अनेक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

गाँव-नगरों से हजारों तरूण वहाँ पढ़ने के लिए जाते थे। फल्गुरक्षित को अपने पास रखा और आर्यरक्षित को पाटलीपुत्र भेज दिया।

पाटलीपुत्र जाकर आर्यरक्षित ने विनयपूर्वक एकाग्रता से अध्ययन करना शुरू कर दिया। जिनके पास अध्ययन करना हो उनका विनय करना अनिवार्य होता है और अध्ययन में एकाग्रता होना आवश्यक होता है। जिस विद्यार्थी में ये दो गुण होते हैं वह त्वरित गति से ज्ञानार्जन कर सकता है। आज कितने विद्यार्थियों में ये दो गुण होंगे? किस में है विनय? किस में है एकाग्रता? अध्यापकों का उपहास करना सामान्य बात बन गई है। मन की चंचलता-अस्थिरता सामान्य रोग हो गया है। शिक्षा का स्तर गिर रहा है।

आर्यरक्षित का तो व्यक्तित्व ही निराला था। वे शान्त-प्रशान्त थे और तीव्र मेधावी भी थे। वे विनम्र-विनयी थे, साथ-साथ ओजस्वी भी थे। वे जैसे अल्पभाषी थे वैसे अच्छे प्रवक्ता भी थे। उन्होंने थोड़े ही वर्षों में अपना अध्ययन पूरा कर लिया। विद्यागुरु का प्रेम संपादन कर लिया था, सहवर्ती छात्रों का स्नेह भी प्राप्त कर लिया था। वे वापस अपनी जन्मभूमि की ओर लौटे। उन्होंने अपने पिता को समाचार भेज दिये। सोमदेव ने राजा उदायन से विनती की : 'महाराजा, मेरा पुत्र आर्यरक्षित पाटलीपुत्र से अध्ययन कर वापस आ रहा है। पाटलीपुत्र में उसने मेरी और आपकी शान बढ़ाई है। मैं चाहता हूँ कि उसका भव्य नगरप्रवेश करवाया जाय।'

राजा उदायन पुरोहित की बात सुनकर प्रसन्न हुआ। राजा ने कहा : 'पुरोहितजी, आर्यरक्षित का स्वागत मैं करूँगा। वह मेरी राजसभा को शोभा प्रदान करेगा। उससे मेरी राजसभा की कीर्ति सारे भारत में फैलेगी....मुझे गर्व है कि मेरे पुरोहित का पुत्र बड़ा विद्वान पंडित बनकर आ रहा है।'

राजा भी कैसा गुणानुरागी था? कैसे प्रजावत्सल था! उनकी राजसभा में पंडितों का सम्मान होता था। उनकी राजसभा में प्रजा को न्याय मिलता था। ऐसे राजाओं के राज्य में प्रजा सुख-शान्ति पाती थी।

आज तो समय हो गया है, कल देखेंगे कि आर्यरक्षित का स्वागत राजा कैसा करता है और आर्यरक्षित माता-पिता का पूजन कैसा करता है!

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***माता-पिता को सबसे पहले अपनी और अपने परिवार की तंदुरुस्ती की चिंता करना है। दूसरा खयाल करना है अपना और अपने परिवार के मन का। मन आर्तध्यान और रौद्रध्यान में न भटक जाये इसके लिए सतत सतर्क रहना है। तीसरी चिंता करनी है आत्मा की।***
- ***क्रोधादि कषायों का नाश होता रहें और क्षमादि गुण विकसित होते रहें।***
- ***जो लोग प्रेम, करुणा, वात्सल्य जैसे तत्त्व समझते नहीं हैं वे क्या विद्वान होते हैं? ऐसी कोरी विद्वत्ता क्या काम की?***
- ***रुद्रसोमा को सम्यक्ज्ञान प्राप्त था। संसार की वास्तविकता का उसे ज्ञान था। इसीलिए वह संसार के सुखों में अनासक्त-अलिप्त रह सकी थी।***
- ***मातृदेवो भव' इस देश की संस्कृति का मूल मंत्र था। आज तो यह आदर्श नजर ही नहीं आता! रुद्रसोमा जितनी माताएँ कितनीं? आर्यरक्षित जैसे पुत्र कितने?***
- ***संस्कृति सर्वनाश के कगार पर आ पहुँची है। फिर भी अपने पास आशा की एक किरण है और वह है वीतराग का शासन! उस शासन को भलीभाँति समझ लो!***

प्रवचन : ६३

परम करूणानिधान, महान् श्रुतधर, आचार्यश्री हरिभद्रसूरिजी, स्वरचित 'धर्मबिंदु' ग्रन्थ के प्रारंभ में गृहस्थ के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हैं, गृहस्थ जीवन की सुचारु आचारसंहिता ही बता दी है उन्होंने! यदि आप लोग इस आचारसंहितानुसार अपनी जीवन-व्यवस्था बना लें तो कितना सुन्दर और पवित्र जीवननिर्माण हो जाय! विशिष्ट धर्मपुरुषार्थ करने की पात्रता आ जाय आप लोगों के जीवन में।

सोलहवाँ सामान्य धर्म है माता-पिता की पूजा। यह सामान्य धर्म सापेक्ष है। यदि माता-पिता गुणवान् हैं, संतानों के प्रति अपने कर्तव्यों को निभाते हैं तो वे पूजनीय बनते हैं। ऐसे पूजनीय माता-पिता का उचित आदर करना, सेवा करना संतानों का पवित्र कर्तव्य बनता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

माता-पिता के हृदय में मात्र वर्तमान जीवन की सुख-सुविधाओं का ही खयाल नहीं होना चाहिए, वर्तमान जीवन के साथ-साथ पारलौकिक हित की भी कामना होनी चाहिए। परलोक-दृष्टि से वर्तमान जीवन जीने की व्यवस्था जमानी चाहिए। ऐसी व्यवस्था तभी संभव हो सकती है जब एक-एक प्रवृत्ति के पारलौकिक फल का ज्ञान हो! 'मैं ऐसी प्रवृत्ति करूँगा तो परलोक में मुझे ऐसा फल मिल सकता है।' मानसिक विचारों के पारलौकिक फल होते हैं, वाचिक प्रवृत्ति के पारलौकिक फल होते हैं और कायिक प्रवृत्ति के भी पारलौकिक फल होते हैं। फल दो प्रकार के होते हैं : अच्छे और बुरे। दोनों प्रकार के फलों का ज्ञान होना चाहिए। प्रवृत्ति करते समय वह ज्ञान का प्रकाश बुझना नहीं चाहिए। इहलौकिक और पारलौकिक हित की प्रवृत्ति तभी सुचारु रूप से हो सकती है।

माता-पिता सर्व प्रथम स्वयं के और परिवार के आरोग्य की चिन्ता करते हैं। खाना-पीना और रहन-सहन उस प्रकार का होना चाहिए कि आरोग्य को क्षति न पहुँचे। ऋतुओं के अनुसार भोजन करना चाहिए। साथ-साथ अपनी प्रकृति को जानकर प्रकृति के अनुकूल भोजन करना चाहिए। परिवार को माता-पिता की ओर से ऐसा मार्गदर्शन मिलते रहना चाहिए।

मन मलिन न हो इसके लिए सावधान रहें :

दूसरा खयाल करना है अपने और परिवार के मन का। मन बार-बार आर्तध्यान और रौद्रध्यान में चला न जाय, इसलिए जाग्रत रहना चाहिए। मन खेद, उद्वेग और दीनता से भर न जाय, इसलिए सतर्क रहना चाहिए। सब के मन प्रसन्न और प्रफुल्लित रहें, इसलिए भी जाग्रत रहना चाहिए। स्वयं के और परिवार के लोगों के मन पाप-वासनाओं से भर न जायँ, मलिन न हो जायँ, इसलिए सुयोग्य उपाय करने चाहिए।

तीसरी चिंता करनी होती है आत्मा की। क्रोधादि दोषों का नाश होता जाय और क्षमादि गुणों का विकास होता जाय, इसलिए तन को धर्मप्रवृत्ति में और मन को धर्मध्यान में जोड़ने का प्रयत्न करते रहना चाहिए। इन्द्रियों के उन्मादों को एवं विकारों को शान्त रखने के लिए व्रत-नियम-तपश्चर्या वगैरह करते रहना चाहिए। मन के विचारों को शान्त व पवित्र बनाये रखने के लिए स्वाध्याय-ध्यान एवं परमात्म-भक्ति करते रहना चाहिए।

तो सन्तान अपराधी माने जायेंगे :

संसार के कर्तव्यों को निभाते हुए माता-पिता यदि इस प्रकार इहलौकिक-

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पारलौकिक हितदृष्टि से स्वयं जिये और परिवार को मार्गदर्शन देते रहें तो वे पूजनीय बनेंगे ही। ऐसा जीवन जीने पर भी यदि संतानें माता-पिता का आदर नहीं करती हैं और उनकी हितकारी बातों को भी नहीं सुनती है, तो माता-पिता का कोई अपराध नहीं है, अपराधी बनेगी संतानें।

घर में छोटे-बड़े लड़के-लड़कियाँ हैं, लड़कों की बहुएँ हैं तो माता-पिता को एक विशेष खयाल करना होता है। घर में कोई भी नई वस्तु आये तो पहले संतानों को-बहुओं को देनी चाहिए। यह बहुत ही महत्त्व की बात बता रहा हूँ। वस्तु छोटी हो या बड़ी, अल्प मूल्य की हो या बहुमूल्य की हो, पहले वह वस्तु परिवार के सभ्यों को देनी चाहिए। माता-पिता को स्वयं उस वस्तु का उपभोग नहीं करना चाहिए। वस्त्र हो, अलंकार हो, भोजन हो....कोई भी वस्तु हो....पहले संतानों को दिया करो।

माता भद्रादेवी का रोमहर्षक देशप्रेम :

श्रमण भगवान महावीरस्वामी के समय की एक बहुत ही रोचक घटना है। नेपाल का एक रत्नकंबलों का व्यापारी व्यापार हेतु राजगृही नगरी में आया। मगध साम्राज्य की राजधानी राजगृही थी। राजा था श्रेणिक। रत्नकंबलें लेकर वह महाराजा श्रेणिक के पास गया। श्रेणिक ने रत्नकंबलें देखीं, व्यापारी ने रत्नकंबल के विशेष गुण बताये। रत्नकंबल सर्दियों में गर्मी देती है और गर्मियों में शीतलता देती है। 'हीटर' और 'कूलर' दोनों का काम करती है रत्नकंबल! राजा को रत्नकंबल पसन्द तो आ गई परन्तु मूल्य सुनकर लेने का विचार स्थगित कर दिया। एक रत्नकंबल का मूल्य था एक लाख रूपये। राजा ने खरीदने से इनकार कर दिया तो व्यापारी निराश होकर राजमहल से बाहर निकल गया। राजमार्ग से गुजर रहा था.... तब राजगृही की धनाढ्य सार्थवाही और शालिभद्र की माता भद्रा ने उस व्यापारी को अपनी हवेली के झरोखे से देखा।

'परदेशी व्यापारी क्यों निराश होकर जा रहा है?' भद्रा माता ने कुछ सोचा और परिचारिका को भेजा उस व्यापारी को बुलाने के लिए। व्यापारी आया। भद्रामाता ने पूछा : 'आप परदेशी व्यापारी दिखते हैं, कौन-सा माल है आपके पास? और क्यों निराश होकर जा रहे हो?'

व्यापारी ने सारी बात भद्रामाता को कह सुनाई। भद्रामाता ने पूछा : 'आपके पास कितनी रत्नकंबलें हैं?' व्यापारी ने कहा : 'सोलह!' भद्रामाता ने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहा : 'मुझे बत्तीस चाहिए! चूँकि मेरी ३२ पुत्रवधुएँ हैं! फिर भी तुम १६ रत्नकंबल दे दो, अभी ही आपको १६ लाख रूपये दे देती हूँ!'

व्यापारी भद्रामाता की बात सुनकर स्तब्ध-सा रह गया! जिस देश का राजा एक रत्नकंबल भी नहीं खरीद सका, उस देश की एक औरत एक साथ १६ रत्नकंबल खरीद रही है....रोकड़ रुपयों से! आश्चर्य....बहुत बड़ा आश्चर्य! भद्रामाता ने १६ लाख तुरंत दिलवा दिये, व्यापारी को बिदा किया और अपनी ३२ पुत्रवधुओं को बुला लिया अपने पास। १६ रत्नकंबलों के ३२ टुकड़े किये और सबको एक-एक टुकड़ा दे दिया।

मैं आपसे एक प्रश्न पूछता हूँ : भद्रामाता ने शालिभद्र को रत्नकंबल क्यों नहीं दी? स्वयं के लिए भद्रामाता ने एक भी रत्नकंबल क्यों नहीं रख ली? एक टुकड़ा भी क्यों नहीं लिया? आपने यह कहानी तो सुनी होगी न पहले? कभी इस प्रसंग पर शान्त चित्त से विचार किया है?

आज के माता-पिता की सबसे बड़ी गलती :

सभा में से : हम लोग तो सिर्फ सुनते ही हैं, चिंतन करते ही नहीं!

महाराजश्री : बहुत बड़ी भूल है आपकी। इस भूल को शीघ्र सुधार लेनी चाहिए। धर्मोपदेश सुनो और सोचो। सोचोगे तो मूल्यवान विचार-रत्न मिलेंगे। जीवन में अति उपयोगी बातें मिलेंगी।

जब ३२ पुत्रवधुओं ने जाना होगा कि 'हमारी सास ने अपने लिए पूरी रत्नकंबल तो नहीं, आधी भी नहीं ली है और १६ कंबलों के ३२ टुकड़े कर हम ३२ बहुओं को ही दे दिये हैं....' तब उन ३२ बहुओं के हृदय में भद्रामाता के प्रति कितना स्नेह उमड़ा होगा? मनुष्य का यह स्वभाव है.... निःस्वार्थ उदार व्यक्ति के प्रति स्नेह हो ही जाता है। सास के प्रति पुत्रवधुओं का स्नेह होना नितान्त आवश्यक होता है। पुत्रवधू यदि संतुष्ट और प्रसन्नचित्त रहेगी तो पति को सुख-शान्ति देगी ही। माता-पिता भी यही चाहते हैं कि पुत्र सुखी हो। पुत्र की शादी करते हो तो पुत्र को सुखी करने के लिए ही करते हो न? पुत्रवधू प्रसन्नचित्त होगी तभी आपके पुत्र को सुखी कर सकती है न? इस दृष्टि से पुत्रवधू को प्रसन्नचित्त रखने का प्रयास करते हो न? दूसरी बात : आपकी पुत्रवधू आपके पुत्र को सुख देने ले लिए सदैव जाग्रत रहे....तो आप खुश होंगे न?

सभा में से : नाराज होते हैं! पुत्र और पुत्रवधू का आपस में घनिष्ट स्नेह होता है तो माता-पिता नाराज होते हैं!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महाराजश्री : नाराज होंगे तो वे आदरणीय-पूजनीय नहीं बनेंगे। संतानों का सुख देखकर माता-पिता को नाराज नहीं होना चाहिए! हाँ, एक बात है! माता-पिता यदि आत्मदृष्टिवाले हों तो चिन्ता हो सकती है कि - 'यदि ये संतान सुख-भोग में लीन बनेगी और आत्मा को भूल जायेंगी तो परलोक में इनका क्या होगा? सुखों में डूबना नहीं चाहिए!' आप लोगों को ऐसी चिन्ता होती है न?

सभा में से : नहीं, नहीं! ऐसी चिन्ता हो तब तो फिर भी अच्छा है! उनको तो चिन्ता इस बात की होती है कि 'यह लड़का अब अपना नहीं रहा, बहू का हो गया....अब वह अपने माता-पिता को भूल गया, बहू भी घर का काम कम करती है....वगैरह चिन्ता होती है।

महाराजश्री : इसलिए तो माता-पिता ने अपनी पूजनीयता खो दी है। परिवार में वे प्रिय नहीं रहे। आपस की विश्वसनीयता भी नहीं रही है। सास पुत्रवधू से अपने वस्त्र, अपने अलंकारों को छुपाती है, पुत्रवधू अपनी सास से अपने रुपये, वस्त्र, अलंकार वगैरह छुपाती है। पिता पुत्र से अपने रुपये छुपाता है तो पुत्र अपना 'प्राइवेट बैंक-एकाउन्ट' खुलवाता है।

भद्रामाता ने शालिभद्र को रत्नकंबल क्यों नहीं दी? इस प्रश्न का उत्तर भी सुन लो : अपना जिस व्यक्ति के प्रति प्रेम होता है, उस व्यक्ति को कोई उत्तम वस्तु मिल जाती है तो अपन को खुशी होती है, वह वस्तु अपन को नहीं मिली हो, तो भी दुःख नहीं होता है! शालिभद्र की बात यह थी! भद्रामाता ने ऐसा ही सोचा होगा कि 'मेरी पुत्रवधुओं को रत्नकंबल देने से शालिभद्र को खुशी होगी....उसको नहीं दूँगी तो भी वह प्रसन्नचित्त ही रहेगा। मेरा पुत्र उदार और विशाल हृदय का है।'

प्रेम प्राप्त करने के लिए चाहिए निःस्पृहता एवं उदारता :

भद्रामाता ने स्वयं के लिए रत्नकंबल का एक टुकड़ा भी नहीं लिया....सब टुकड़े पुत्रवधुओं को दे दिये! यह थी उनकी निःस्पृहता और उदारता! निःस्पृह और उदार भद्रामाता ने पुत्र और पुत्रवधुओं का कैसा प्यार संपादन किया होगा? आप लोगों को भी पुत्रों का एवं पुत्रवधुओं का प्यार चाहिए न? कैसे मिलेगा?

निःस्पृहता और उदारता के साथ-साथ चाहिए संतानों के आत्महित की चिन्ता। हाँ, संतानों के आत्महित की चिन्ता करनी ही चाहिए। आर्यरक्षित की माता रुद्रसोमा जैसे गंभीर, उदार और ज्ञानदृष्टिवाली थी वैसे संतानों का

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आत्महित सोचनेवाली थी। उसके तो संयोग भी प्रतिकूल थे। पुरोहित सोमदेव वेदान्ती थे और रुद्रसोमा जैनधर्मी थी। पति को नाराज किये बिना संतानों का आत्महित करना वह चाहती थी। काफी संयम और धैर्य से काम करना पड़ता है ऐसे संयोगों में।

आर्यरक्षित वेदों का पारगामी बनकर दशपुर वापस लौट रहा है, यह समाचार सोमदेव ने राजा उदायन को दिया। राजा ने आर्यरक्षित का भव्य स्वागत करने का निर्णय किया। आर्यरक्षित को दशपुर के बाह्य प्रदेश में ठहराया गया। प्रभात में राजा हाथी पर बैठकर हजारों नगरजनों के साथ, आर्यरक्षित का स्वागत करने चला। आर्यरक्षित ने प्रथम पिता के चरणों में प्रणाम किया, बाद में राजा के चरणों में प्रणाम किया। राजा ने आर्यरक्षित को पुत्रवत् गले लगाया। हाथी पर बिठाया और नगरप्रवेश करवाया बड़ी धूमधाम से।

पंडित बने हुए पुत्र को माँ ने आशीर्वाद क्यों नहीं दिया?

आर्यरक्षित ने पिता के दर्शन किये, भाई और बहन को भी देखा, परन्तु माता को नहीं देखा। नगर के हर चौराहे पर....जहाँ ५०/१०० महिलाओं को देखता....अपनी माता को खोजता रहा। 'मेरी माँ क्यों नहीं दिखती है? वह क्यों नहीं आई?' उसके मन में अनेक प्रश्न उभरते रहे। राजसभा में से सीधा वह अपने घर पहुँचा। घर के द्वार पर भी माँ का दर्शन नहीं हुआ। 'माँ....माँ....माँ....' करता आर्यरक्षित घर में दौड़ा....माँ के कमरे में पहुँचा। माता रुद्रसोमा 'सामायिक' में लीन थी। आर्यरक्षित ने माता के चरणों में भावविह्वलता से प्रणाम किया....परन्तु रुद्रसोमा ने आशीर्वाद नहीं दिये। चूँकि वह सामायिक व्रत में थी। सामायिक व्रत में संसार की कोई भी प्रवृत्ति नहीं हो सकती है। पुत्र को आशीर्वाद देना-यह भी एक सांसारिक प्रवृत्ति ही है। रुद्रसोमा ने आशीर्वाद नहीं दिये। आर्यरक्षित उदास हो गया। वह अपने मन में सोचता है :

'धिग् ममाधितशास्त्रौधं बह्वप्यवकरप्रभम्।
येन मे जननी नैव परितोषमवापिता ।।'

'मैंने पढ़े हुए हजारों शास्त्रों को धिक्कार हो....क्या करना है मुझे उन शास्त्रों को कि जिससे मेरी माँ को संतोष न हो....? मुझे तो मेरी माँ को संतोष देना है, उसके मन को प्रसन्न करना है। मुझे ऐसा लगता है कि मैं पाटलीपुत्र में जो शास्त्राध्ययन करके आया हूँ, इससे मेरी माँ को संतोष नहीं हुआ है....।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रुद्रसोमा ने ज्यों ही सामायिक व्रत पूर्ण किया, आर्यरक्षित ने प्रश्न किया।

सभा में से : रुद्रसोमा ने आशीर्वाद नहीं दिये, इससे आर्यरक्षित को उसके प्रति गुस्सा नहीं हुआ क्या?

महाराजश्री : माँ के प्रति क्रोध करने की विकृति उस परिवार में थी ही नहीं। माँ के प्रति किस बात का गुस्सा? सुशील-गुणवती माँ के प्रति गुस्सा करनेवाला लड़का कभी भी, किसी भी क्षेत्र में विकास नहीं कर सकता है। विकास तो नहीं, विनाश अवश्य होता है। आजकल तो आप लोगों के परिवारों में बात-बात में लड़के-लड़कियाँ माता-पिता पर गुस्सा करने लगे हैं न? माता-पिता भी संतानों के प्रति बात-बात में गुस्सा करने लगे हैं। आप लोगों का पारिवारिक जीवन सुधरेगा क्या? आप सुधारना चाहते हो क्या?

माँ की इच्छा पूरी करने को आर्यरक्षित तैयार :

आर्यरक्षित ने प्रश्न किया माँ से : 'माँ, क्या तुझे प्रसन्नता नहीं हुई मेरे शास्त्राध्ययन से?' माँ की आँखों में अपनी आँखें जोड़कर अति विह्वल चित्त से उसने पूछा। रुद्रसोमा ने भी एक क्षण बेटे की आँखों में देखा....और बोली : 'वत्स, मुझे....ऐसे शास्त्राध्ययन से कैसे संतोष हो? अर्थोपार्जन की दृष्टि से किया हुआ अध्ययन सद्‌गति नहीं देता है, दुर्गति देता है....।

'बेटा, तू मुझे प्यारा है, बहुत दिनों के बाद तू आया, तेरा मुँह देखकर मुझे बड़ा आनन्द हुआ है, परन्तु जिन शास्त्रों को पढ़कर आया है, उन शास्त्रों से तेरा आत्महित नहीं होनेवाला है। तू राजसभा में महापंडित बनकर बैठेगा, अनेक दूसरे पंडितों को वाद-विवाद में पराजित करेगा.... परन्तु तेरे आन्तरिक शत्रुओं को तू पराजित नहीं कर सकेगा। आन्तरिक शत्रु - काम, क्रोध, लोभ, मद, मान और हर्ष-इनको पराजित किये बिना सद्‌गति होगी कैसे? मैं चाहती हूँ कि मेरी संतान सद्‌गति प्राप्त करे। ऐसा अध्ययन करे कि जिस अध्ययन से उसकी आत्मा निर्मल बने, कर्मों के बंधन तोड़नेवाली बने!'

आर्यरक्षित माँ की शक्कर से भी ज्यादा मधुर वाणी सुनता रहा....उसने माँ के दोनों हाथ पकड़ लिए और कहा : 'मेरी माँ, तू मुझे कह दे कि मुझे अब कौन-से शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिए कि जिससे तुझे संतोष हो जाय। तू मुझे अविलम्ब आज्ञा कर.... मुझे दूसरा कोई काम नहीं करना है। मेरी तो एक ही तमन्ना है.... मेरी माँ को संतोष प्रदान करना।'

कौन बोलता है ये बातें? एक महान् विद्वान! यही हमारी पवित्र संस्कृति

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

का पुण्य प्रभाव है कि ज्यों-ज्यों शिक्षा बढ़ती जाय त्यों-त्यों विनय एवं नम्रता भी बढ़ती जाय शिक्षा के साथ-साथ यदि अविनय और औद्धत्य बढ़ता जाय तो समझ लेना कि वह शिक्षा शिक्षा नहीं है, परन्तु कु-शिक्षा है.... कुत्सित शिक्षा है।

आर्यरक्षित पाटलीपुत्र में पढ़कर आये थे। उस समय पाटलीपुत्र में विदेशों से छात्र पढ़ने आते थे। पाटलीपुत्र में पढ़ा हुआ विद्वान विश्व में माननीय माना जाता था। आर्यरक्षित वैसा अजोड़ विद्वान बनकर आया था। परन्तु जननी के चरणों में वह विद्वान नहीं था....। माता के चरणों में तो वह विनीत पुत्र ही था।

प्रेम-करुणा को न समझे वह विद्वान कैसा? :

'मैं पढ़ा-लिखा हूँ और मेरी माँ अनपढ़ है....' ऐसी मान्यतावाले लोग वास्तव में अनपढ़ होते हैं। जो लोग प्रेम....करुणा....वात्सल्य जैसे तत्त्वों को समझते नहीं, वे क्या विद्वान होते हैं?

रुद्रसोमा ने कहा : 'वत्स! तू 'दृष्टिवाद' पढ़े तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी।'

आर्यरक्षित बोला : 'दृष्टिवाद?' कौन पढ़ायेगा मुझे यह दृष्टिवाद! 'दृष्टिवाद' का नाम वह प्रथम बार ही सुन रहा था। 'दृष्टिवाद' नाम उसे पसन्द आ गया। उसकी आँखों में चमक आ गई, उसके मुँह पर प्रसन्नता छा गई। रुद्रसोमा पुत्र की मुखाकृति के भाव पढ़ रही थी। उसने कहा :

'बेटा, जैन-श्रमण जो कि महान् सत्त्वशील होते हैं, अब्रह्म और परिग्रह के त्यागी होते हैं, जिनके अन्तःकरण में परमार्थ-भावना भरी हुई होती है और जो ज्ञान के सागर होते हैं....वे तुझे 'दृष्टिवाद' का अध्ययन करायेंगे। अभी इक्षुवाटिका में 'तोसलीपुत्र' नाम के ऐसे महान् जैनाचार्य बिराजमान हैं, जो तेरे मामा लगते हैं। वे तुझे अध्ययन करायेंगे। तू उनके पास चला जा, 'दृष्टिवाद' का अध्ययन कर....मुझे बहुत खुशी होगी....मेरी कुक्षी रत्नकुक्षी बन जायेगी!'

आज कितनी माताओं को द्वादशांगी के नाम आते होंगे? बारह अंगों के नाम और विषयक्रम का ज्ञान कितनी माताओं को होगा? रुद्रसोमा ने आर्यरक्षित को आचारांग या सूत्रकृतांग, स्थानांग.... वगैरह अंगों के नाम न लेते हुए बारहवें अंग : 'दृष्टिवाद' का नाम लिया। क्यों? चूँकि आर्यरक्षित महान् पंडित बनकर आया था। उसके अनुरूप अति गंभीर ग्रन्थ का निर्देश करना चाहिए। रुद्रसोमा जानती थी कि 'दृष्टिवाद' का अध्ययन जैनाचार्य गृहस्थों को नहीं करवाते हैं। 'दृष्टिवाद' का अध्ययन प्रज्ञावंत श्रमण ही कर सकता है। आर्यरक्षित जैन दीक्षा लेकर श्रमण बनेगा तो ही वह दृष्टिवाद का अध्ययन कर पाएगा।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अब आप लोग समझ पाये क्या, कि रुद्रसोमा अपने विद्वान पुत्र को कहाँ और किसलिए भेज रही है? माता की क्या तमन्ना होगी पुत्र से? 'मेरा पुत्र जैन-श्रमण बनेगा और दृष्टिवाद का अध्ययन कर महान् ज्ञानी बनेगा। मोक्षमार्ग का ज्ञान पायेगा। विश्व के जीवों को ज्ञान का प्रकाश देनेवाला दीपक बनेगा।'

रुद्रसोमा यदि भौतिक सुखों की अभिलाषावाली होती तो? हालाँकि वह स्वयं संसार में थी....परन्तु उसका मन संसार में नहीं था। राजपुरोहित की वैभवसंपन्न पत्नी थी....फिर भी उसका मन वैषयिक सुखों से विरक्त था। हाँ, वैराग्य तो चाहिए ही। मन विरागी चाहिए।

अनासक्ति में ही सच्चा सुख :

सभा में से : हम लोग तो संसारी हैं, संसारी विरागी कैसे हो सकता है?

महाराजश्री : संसार में रहते हुए भी विरागी बनकर रहना है। संसार के सुखों का उपभोग करते हुए भी मन को अलिप्त रखा जा सकता है। आप लोगों के पास तो वैसा विशिष्ट वैभव भी नहीं है जो चक्रवर्तियों के पास और राजा-महाराजाओं के पास होता था। वैसे चक्रवर्ती अनेक राजा हो गये, वैसे धनाढ्य श्रेष्ठि हो गये, कि जो बाहर से भोगी थे, भीतर से योगी थे। भीतर से विरागी थे। यदि सम्यक्ज्ञान हो, तो ही ऐसी स्थिति का निर्माण हो सकता है। रुद्रसोमा के पास सम्यक्ज्ञान था....संसार की वास्तविकता का बोध था....इसलिए वह संसार के सुखों में अनासक्त रह सकी थी। संतानों को भी वह अनासक्त बनाना चाहती थी। 'अनासक्ति में ही सच्चा सुख है,' यह सत्य उसने पा लिया था। ज्ञान और अनुभव से उसने सत्य को पाया था।

युवान और विद्वान पुत्र को, अवसर पाकर रुद्रसोमा ने सच्चा मार्ग बता दिया। पुत्र के हृदय में माता ने प्रेम को अखंड रखा था....तभी वह सच्चा मार्ग बता सकी और पुत्र ने उसकी बात मान भी ली।

मैं आप लोगों को बार-बार कहता हूँ कि आप परिवार के साथ वैसा व्यवहार रखो कि उन लोगों का आपके प्रति प्रेम बना रहे। यदि उनका प्रेम बना रहेगा तो एक दिन वे लोग आपकी अच्छी बात मानेंगे और सही रास्ते पर चलने लगेंगे। आप अधीर न बनें, आप कटुभाषी न बनें। आप दूसरों को अप्रिय न बनें। आपकी इच्छानुसार परिवार नहीं चलता हो तो भी समता रखें। अवसर पाकर ही उनको मीठी जबान से जो कहना हो वह कहें।

दूसरी भी एक बात सुन लो।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आपको अपना व्यक्तित्व ऐसा बनाना पड़ेगा, उज्ज्वल व्यक्तित्व! गुणगंभीर व्यक्तित्व! दूसरों पर ऐसे व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ेगा ही। रुद्रसोमा ने अपना वैसा व्यक्तित्व बनाया था। विद्वान और प्रज्ञावंत पुत्र उस व्यक्तित्व से प्रभावित हुआ। वह सोचने लगा : 'माता ने कहा 'दृष्टिवाद' पढ़ना चाहिए! दृष्टिवाद! कितना प्यारा नाम है! दृष्टि का वाद। बस, माँ की इच्छा पूर्ण करूँगा ही। यदि मैं माँ की इच्छा पूर्ण नहीं करता हूँ तो मेरा जीवन व्यर्थ है....। कुछ भी करना पड़े....मैं करूँगा.... परन्तु दृष्टिवाद पढूँगा अवश्य!'

'मातृदेवो भव' आर्यसंस्कृति का मूल मंत्र :

आर्यरक्षित युवक था। यौवनसुलभ वृत्तियाँ क्या उसके मन में जगी नहीं होंगी? जगी होंगी, परन्तु वह युग इन्द्रियसंयम का था। अध्ययनकाल में संपूर्ण ब्रह्मचर्यपालन अनिवार्य था। ब्रह्मचर्यपालन के लिए सुयोग्य वातावरण दिया जाता था। रहन-सहन और समग्र दिनचर्या वैसी होती थी कि इन्द्रियाँ चंचल ही न बनें। शिक्षा भी वैसी दी जाती थी कि कलाओं के साथ-साथ युवक की आध्यात्मिक चेतना का भी विकास हो। इससे, युवक भी सहजता से इन्द्रियसंयम कर सकते थे। आदर्शों के पालन के लिए अपने सुखभोगों का त्याग कर सकते थे।

'मातृदेवो भव' यह इस देश की संस्कृति का मूल मंत्र था। इस देश में वैसी माताएँ हुई हैं और वैसी संतानें भी हुई हैं.... जिन्होंने इस आदर्श को चरितार्थ किया है। परन्तु कलियुग का प्रभाव कहें अथवा जीवों की अपात्रता कहें.... आज यह आदर्श नहीं रहा....। रुद्रसोमा जैसी माताएँ कितनी मिलेंगी? आर्यरक्षित जैसे पुत्र कितने मिलेंगे? नहीं रहा माताओं का गौरव, न रहा पिताओं का गौरव। संतानें स्वच्छंदता की ओर दौड़ रही हैं। राज्य और शिक्षा इस स्वच्छंदता को बढ़ावा दे रहे हैं....। संस्कृति सर्वनाश के कगार पर खड़ी है....फिर भी अपने पास आशा की एक किरण है....वह है वीतराग का शासन! शासन को समझें....विशाल अर्थ में समझें, अनेकान्त दृष्टि से समझें!

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***माताओं को रुद्रसोमा होना होगा। वह कितनी प्रियभाषिणी और मितभाषिणी थी? वह कितनी वात्सल्यमयी थी? आज की माताएँ क्या ऐसी नहीं हो सकतीं???***
- ***विरक्त माता वैषयिक भोगसुख में दुःख देखती है। त्याग में उसे सुख दिखता है। विरक्त माता स्वयं-खुद त्याग की भावना में जीती है और संतानों के लिए भी त्याग का राह पसंद करती है।***
- ***माता-पिता और धर्मगुरु यदि सौम्य होंगे, प्रियभाषी होंगे, तो संतानों के दिल में उनके लिए स्नेह और सद्भाव जरूर पैदा होगा....बढ़ेगा।***
- ***शुकन भविष्य का इशारा करते हैं, भविष्य को बदलते नहीं हैं, भविष्य में जो कुछ बनना है, होना है.... उसका संदेशा देते हैं।***
- ***जो स्नेही-स्वजन अबोध होते हैं, अज्ञानी होते हैं.... उनका ममत्व प्रगाढ़ होता है, उनकी ममता जल्दी दूर नहीं होती। कभी-कभी तो ममत्व द्वेष में तबदील हो जाता है!***

प्रवचन : ६४

महान् श्रुतधर, पूज्य आचार्यश्री हरिभद्रसूरिजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में, सर्वप्रथम गृहस्थ जीवन का सामान्य धर्म बता रहे हैं। सोलहवाँ सामान्य धर्म बताया है माता-पिता की पूजा। पूजा यानी प्रणाम करना, हार्दिक अहोभाव से प्रणाम करना! वह भी दिन में एक समय ही नहीं, तीन समय करने का है। प्रातः, मध्याह्न और संध्या के समय प्रणाम करने का है।

माता और पिता के साथ साथ कलाचार्य, वृद्धजन, धर्मोपदेश देनेवाले गुरुजन वगैरह को भी प्रणाम करने का होता है। माता-पिता के स्नेही-संबंधी भी पूज्य बताये गये हैं। ये सभी गुरुवर्ग में आते हैं। इन गुरुजनों का मुख्यतया पाँच प्रकार से बहुमान करने का होता है :

१. वे आयें तब खड़े होकर सामने जाना।

२. उनकी कुशलपृच्छा करना।

३. उनके पास स्थिरता से बैठना।

४. अयोग्य स्थान पर उनका नाम नहीं लेना।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

५. उनकी निन्दा नहीं सुनना।

पूज्य और पूजक की इस आचारमर्यादा का पालन जिस परिवार में होता हो, वह परिवार वास्तव में विशेष धर्मपुरुषार्थ करने का पात्र बन जाता है।

माता-पिता के जो आदरणीय हैं, वे भी पूज्य :

विनय का क्षेत्र कितना व्यापक बताया गया है? पूज्य पुरुषों की सूची कितनी विस्तृत बतायी गई है? माता-पिता तो पूजनीय हैं ही, माता-पिता के लिए जो आदरणीय हों, वे भी पूजनीय हैं! विद्यालयों के प्राध्यापक भी पूजनीय! संघ-समाज और नगर के शिष्ट वृद्धजन भी पूजनीय! इन सबके प्रति आदर करने का होता है, विनय और शिष्टाचार करने का होता है। परन्तु सर्वप्रथम तो माता और पिता के प्रति पूज्यता का भाव बनाये रखना अति आवश्यक है।

माता-पिता के प्रति स्नेह और सद्भाव तभी बना रहेगा, जब संतानें अपने ही कर्तव्यों का विचार करेंगी और माता-पिता के उपकारों का मूल्यांकन करेंगी। यदि संतानें माता-पिता के कर्तव्यों का विचार करेंगी और माता-पिता संतानों के कर्तव्यों का गीत गाते रहेंगे तो पूज्य-पूजक भाव टिकेगा नहीं। अपने-अपने कर्तव्यों का पालन करते रहोगे तो ही प्रेमभाव बना रहेगा।

आर्यरक्षित यदि माता को कहते कि : 'यदि तेरी इच्छा मुझे दृष्टिवाद का अध्यापन कराने की थी तो तूने पाटलीपुत्र जाने की अनुमति क्यों दी? पहले ही तू कह देती कि 'तुझे पाटलीपुत्र नहीं जाना है, जैनाचार्य के पास जाकर दृष्टिवाद का अध्ययन करना है,' तो मैं वैसा करता। अब तूँ दृष्टिवाद पढ़ने की बात करती है....जब मैं पंडित बनकर आया हूँ। मुझसे अब नहीं बनेगा....।' तो क्या जैन-शासन को आर्यरक्षितसूरि जैसे ज्योतिर्धर महापुरुष मिलते? वे क्या अपनी आत्मा की उन्नति कर पाते?

आजकल लड़के माँ-बाप का कहा क्यों नहीं मानते हैं?

माता रुद्रसोमा यदि पहले से ही लड़कों के कर्तव्यों को लेकर आग्रह करती रहती तो लड़के उसकी बातें सुनते क्या? नहीं सुनते न? आप लोगों की बातें आपके लड़के-लड़कियाँ क्यों नहीं सुनते हैं? कभी विचार किया है? विचार किया है तो मात्र इतना ही कि 'लड़के-लड़कियाँ बिगड़ गये हैं।' क्यों बिगड़ गये? आप अपनी गलती महसूस करते हैं क्या? लड़कों को सुसंस्कारी बनाना आता है क्या? बार-बार संतानों को टोकने से संतानें ऊब जाती हैं। प्रेरणा देने की भी कला होनी चाहिए। बोलने की कला होनी चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

माताओं को रुद्रसोमा बनना होगा। कैसी वह प्रियभाषिणी थी! कैसी वह मितभाषिणी होगी? कैसी वह वात्सल्य की सरिता होगी? क्या आज की माताएँ वैसी नहीं बन सकतीं? जो तपश्चर्या कर सकती हैं, जो दान दे सकती हैं, जो परमात्मा की पूजा-सेवा कर सकती हैं और जो धर्मोपदेश सुनती रहती हैं, क्या वह प्रियभाषिणी और मितभाषिणी नहीं बन सकतीं? क्या वह सहनशीला नहीं बन सकतीं? क्या वह गंभीर नहीं बन सकतीं?

रुद्रसोमा का कैसा निराला व्यक्तित्व होगा? घर जाकर सोचा है न? फुरसत के क्षणों में सोचते हो न? जो बात पसन्द आ जाती है उसके विचार आते ही हैं! मुझे तो रुद्रसोमा के विषय में बहुत विचार आते हैं। रुद्रसोमा एक आदर्श श्राविका थी-गृहिणी थी इतना ही नहीं, वह अनासक्त योगिनी भी थी। रहती थी संसार में परन्तु उसका हृदय अनासक्त था, विरक्त था। यदि उसका हृदय विरक्त-अनासक्त नहीं होता तो वह अपने पंडित-विनीत पुत्र को 'दृष्टिवाद' पढ़ने कि लिए नहीं भेजती! वह जानती थी कि संयमी बने बिना, साधु बने बिना दृष्टिवाद का अध्ययन नहीं हो सकता है। दृष्टिवाद के अध्ययन के लिए भेजना यानी साधु बनने के लिए भेजना! अपने सुविनीत प्रज्ञावंत पुत्र को साधु बनाने की भावना कैसी माता में हो सकती है? वह माता विरक्त-अनासक्त ही होती है।

विरक्त माता त्याग में सुख देखती है :

विरक्त माता वैषयिक भोगों में दुःखदर्शन करती है, त्याग में सुखदर्शन करती है। विरक्त माता स्वयं त्याग की कामना करती है, संतानों के लिए भी त्याग का मार्ग पसन्द करती है। बच्चों को बाल्यकाल से ही वैसे त्याग-वैराग्य के संस्कारों से सुसंस्कृत करती रहती है। चूँकि विरक्त माता का हृदय मैत्रीभाव से भरापूरा होता है। वह माता जिस प्रकार संतानों की सुख-सुविधा का ख्याल करती है वैसे आत्महित की भी चिन्ता करती है। परिवार के वर्तमान जीवन को सुख-शान्तिपूर्ण बनाने का प्रयत्न करती है वैसे पारलौकिक जीवन को भी सुखमय बनाने का यथाशक्य प्रयत्न करती है। परन्तु यह प्रयत्न दुराग्रहरूप नहीं होना चाहिए। यह प्रयत्न कठोर नहीं होना चाहिए।

यह भूल आज कई माताएँ कर रही हैं। हालाँकि ये माताएँ परिवार का पारलौकिक हित करना चाहती हैं, आत्मकल्याण करना चाहती हैं और इसलिए प्रेरणा देती रहती हैं। परन्तु उस प्रेरणा में आक्रोश होता है। भाषा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कर्कश होती है....शब्द तीर जैसे नुकीले होते हैं। शब्दों के कुछ नमूने देखें -

- तुम नास्तिक हो....
- तुम बिगड़ गये हो....
- तुम नर्क में जाओगे....
- तुम बुद्धिहीन हो....
- तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हुई है....
- मेरे घर में ऐसा नहीं चलेगा....

सभा में से : इससे भी ज्यादा उग्र शब्दप्रयोग होते हैं।

महाराजश्री : होते हैं, मैं जानता हूँ.... परन्तु बोल नहीं सकता। ऐसे दुर्व्यवहार से क्या कोई सुधरता है? धर्मप्राप्ति करता है? सदाचारों का पालन करता है? नहीं, ज्यादा बिगड़ता है, अधर्म की ओर अग्रसर होता है, दुराचारों में ज्यादा फँसता है। इसलिए कहता हूँ कि माताएँ रुद्रसोमा जैसी प्रियभाषिणी बनें। प्रियभाषिणी माता संतानों के हृदय में अपना स्थान....गौरवपूर्ण स्थान बनाये रखती हैं। इन्द्रियों के प्रचंड आवेग और कषायों की तीव्र परवशता प्रायः माता-पिता एवं धर्मगुरु की हितकारी बातों का पालन नहीं करने देती है, परन्तु यदि माता-पिता और धर्मगुरु सौम्य होंगे और प्रियभाषी होंगे तो संतानों के हृदय में उनके प्रति स्नेह और श्रद्धा तो अवश्य बनी रहेगी। मैंने ऐसे तरुण एवं युवा लड़कों को देखे हैं, मैं पहचानता हूँ उनको, उनके हृदय में माता-पिता के प्रति प्रेम है, धर्मगुरू के प्रति श्रद्धा है....। आज भले उनके जीवन में सदाचारों का पालन कम हो, परन्तु पूज्यों के प्रति जो प्रेम है उनके हृदय में, वह प्रेम एक दिन उनको पूर्ण सदाचारी बना देगा!

रुद्रसोमा पूजनीय माता बनी क्योंकि....

आर्यरक्षित बड़े पंडित हो गये....राजमान्य पंडित हो गये....तब तक माता रुद्रसोमा ने उनको जैनाचार्य के पास जाने की और उनसे ज्ञान प्राप्त करने की बात नहीं की थी। जबकि वह परम श्रमणोपासिका थी। कितना धैर्य रखा है रुद्रसोमा ने? कभी भी अप्रिय-कठोर शब्दों का प्रयोग नहीं किया है रुद्रसोमा ने! तभी तो वह पूजनीया माता बनी थी। परम श्रद्धेया माता बनी थी। आर्यरक्षित को कहा : 'तू जैनाचार्य तोसलीपुत्र के पास जा और उनके पास 'दृष्टिवाद' का अध्ययन कर.... इससे मेरी कुक्षी शीतल बनेगी।' आर्यरक्षित ने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कोई तर्क-कुतर्क नहीं किया। निश्चित जवाब दे दिया : 'मेरी माँ, मैं कल प्रातः ही चला जाऊँगा जैनाचार्य के पास।'

सारी रात आर्यरक्षित को नींद नहीं आयी....वे रातभर सोचते रहे 'दृष्टिवाद' के विषय में, जैनाचार्य के विषय में और अपनी माता के विषय में। जैनाचार्य तोसलीपुत्र के विषय में माता के कहे हुए शब्द उनकी स्मृति में उभर आये....

जैनर्षयो महासत्त्वाः त्यक्ताब्रह्मपरिग्रहाः।
परमार्थस्थितस्वान्ताः सज्ज्ञानकुलभूमयः ।।

अस्य ग्रन्थस्य वेत्तारःतेऽधुना स्वेक्षुवाटके।
सन्ति तोसलीपुत्राख्याः सूरयो ज्ञानभूमयः ।।

आर्यरक्षित की मनोभूमि पर तोसलीपुत्र आचार्य की भव्य मूर्ति उपस्थित हुई। सत्त्वसभर देहाकृति, ब्रह्मचर्य का दिव्य तेज। आँखों में परमार्थ की भावना....। वाणी में ज्ञान-श्रद्धा का अमृत....। ऐसे महर्षि मुझे 'दृष्टिवाद' का अध्ययन करायेंगे। धन्य बन जाऊँगा।

आर्यरक्षित मात्र गुणवान् नहीं थे, किंतु गुणानुरागी भी थे। गुणपक्षपाती थे। माता ने जैनाचार्य के गुणों की प्रशंसा की, आर्यरक्षित सुनकर प्रसन्न हो गये। सारी रात शुभ विचारों में व्यतीत हो गई। प्रातः अरूणोदय होते ही, माता के चरणों में प्रणाम कर, माता के आशीर्वाद लेकर आर्यरक्षित इक्षुवाटिका की ओर चल पड़े। रास्ते में आर्यरक्षित के पिता के मित्र-ब्राह्मण मिल गये। उनके हाथ में इक्षु के साढ़े नव सांठे थे। उन्होंने आर्यरक्षित को देखा, स्नेहालिंगन किया और कहा : 'वत्स, शीघ्र घर पर लौटना।' आर्यरक्षित ने कहा : 'माता के आदेश से जाता हूँ, कार्य पूर्ण होते ही वापस लौट जाऊँगा।'

रास्ते में आर्यरक्षित सोचते हैं :

अध्याया वा परिच्छेदा नव सार्द्धा मया ध्रुवम्।
अस्य ग्रन्थस्य लप्स्यन्ते नालिकं निश्चितं हृदः ।।

मुझे बहुत अच्छे शुकन हुए हैं। माता ने जिस 'दृष्टिवाद' का अध्ययन करने को कहा है उस दृष्टिवाद के जो अध्याय अथवा परिच्छेद होंगे, मैं साढ़े नौ ही पढ़ पाऊँगा, ज्यादा नहीं।

शुकन भविष्य के प्रति निर्देश करते हैं। भविष्य में जो होने का होता है

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

उसके प्रति शुकन निर्देश करते हैं। शुकन भविष्य को बदलते नहीं हैं, भविष्य की सूचना देते हैं। शुकनों को समझने का ज्ञान होना चाहिए। शुकन का तो शास्त्र है। धार्मिक व्यवहारों में भी शुकन को महत्त्व दिया गया है।

आर्यरक्षित इक्षुवाटिका में कि जहाँ आचार्यश्री तोसलीपुत्र विराजमान थे, वहाँ पहुँचे। उपाश्रय के द्वार पर वे रुक गये। उन्होंने सोचा : 'मुझे जैनाचार्य के पास जाना है....मैं जैन-शिष्टाचार नहीं जानता हूँ। बिना शिष्टाचार-पालन किये मुझे उपाश्रय में प्रवेश नहीं करना चाहिए।' वे द्वार पर ही खड़े रहे। उपाश्रय में मुनिवृन्द शास्त्रस्वाध्याय में निमग्न था! ऐसी शब्दध्वनि हो रही थी कि सारा वातावरण शब्दाद्वैतमय हो गया था। स्वाध्याय का प्रघोष आर्यरक्षित को बहुत ही कर्णप्रिय लगा। आर्यरक्षित खड़े-खड़े स्वाध्याय-ध्वनि सुनते ही थे, कि वहाँ एक श्रावक आया। उसका नाम था 'ढढ्ढर'। ढढ्ढर ने विधिपूर्वक उपाश्रय में प्रवेश किया, विधिपूर्वक आचार्यदेव को वंदन किया और दूसरे मुनिवरों को भी वंदन करके वह आचार्यदेव के पास बैठ गया। आर्यरक्षित ने सारी विधि जान ली। वंदन के सूत्र भी सुनकर याद कर लिये। अब उन्होंने उपाश्रय में प्रवेश किया विधिपूर्वक, वंदन किया विधिपूर्वक, परन्तु एक भूल कर दी उन्होंने और आचार्यदेव समझ गये कि 'यह आगन्तुक नया श्रावक है।' कहिये आर्यरक्षित ने कौन-सी भूल की होगी?

सभा में से : हम लोगों को भी विधिपूर्वक गुरुवंदना करना कहाँ आता है?

महाराजश्री : विधिपूर्वक गुरुवंदना करना नहीं आता, विधिपूर्वक परमात्मपूजन करना नहीं आता, विधिपूर्वक पच्चक्खाण करना नहीं आता.... तो आता क्या है? जो धर्मक्रिया करनी हो, विधिपूर्वक करनी चाहिए। अविधि से की हुई धर्मक्रिया फलवती नहीं होती है। इतना ही नहीं, कभी उसकी विपरीत प्रतिक्रिया भी आ सकती है। इसलिए हर धर्मक्रिया का विधि जान लेना चाहिए।

- गुरुवंदना की क्रिया की विधि 'गुरुवंदनभाष्य' में है।
- परमात्मपूजन की क्रिया की विधि 'चैत्यवंदनभाष्य' में है।
- पच्चक्खाण की क्रिया की विधि 'पच्चक्खाणभाष्य' में है।

इन तीन भाष्यों का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। अध्ययन करके विधिपूर्वक धर्मक्रियाएँ करनी चाहिए। विधिपूर्वक धर्मक्रिया करने से धर्मक्रिया में आनन्द मिलेगा। धर्म के प्रति अहोभाव बढ़ेगा। मन की स्थिरता बढ़ेगी।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आर्यरक्षित ने जितनी विधि ढढ्ढर श्रावक को देखकर सीखी थी उतनी तो की, परन्तु जो विधि ढढ्ढर ने नहीं की थी यानी करने की आवश्यकता नहीं थी, वह विधि आर्यरक्षित ने नहीं की....कि जो उनके लिए करनी आवश्यक थी।

उपाश्रय में उपस्थित श्रावकों को भी वंदन करना चाहिए :

सभी साधुओं को वंदन करने के बाद यदि वहाँ श्रावक उपस्थित हों तो श्रावकों को भी प्रणाम करना चाहिए। जिस समय ढढ्ढर उपाश्रय में गया था उस समय उपाश्रय में कोई श्रावक नहीं था, इसलिए वह किसको प्रणाम करे? परन्तु आर्यरक्षित उपाश्रय में गये जब वहाँ ढढ्ढर श्रावक उपस्थित था। परन्तु आर्यरक्षित तो अनजान थे, उन्होंने ढढ्ढर को प्रणाम नहीं किया। इसलिए आचार्यदेव ने सोचा कि 'यह श्रावक नया है।' उन्होंने मधुर वाणी में पूछा : 'वत्स, तुमने किससे धर्म पाया है?'

आर्यरक्षित ने ढढ्ढर की ओर अंगुलीनिर्देश करते हुए कहा : 'इस धार्मिक पुरुष से।'

एक मुनि ने वहाँ आकर आचार्यदेव से कहा : 'हे पूज्य, कल नगर में राजा ने बड़ी धूमधाम से जिसका नगरप्रवेश करवाया वही पुरोहितपुत्र आर्यरक्षित है यह। सुश्राविका रुद्रसोमा का यह सुपुत्र श्रेष्ठ गुणों का निधि है, चार वेदों का ज्ञाता है....। यहाँ किस प्रयोजन से आया है, यह तो मैं नहीं जानता....पर इन्हें जरूर जानता हूँ।'

तुरंत ही आर्यरक्षित ने कहा : 'गुरुदेव, मेरी माता ने मुझे आपके पास भेजा है। माता ने कहा है कि 'तू जैनाचार्य श्री तोसलीपुत्र के पास जा, वे महाज्ञानी महात्मा हैं, वे तुझे 'दृष्टिवाद' पढ़ायेंगे।' मैं आपके चरणों में 'दृष्टिवाद' का अध्ययन करने उपस्थित हुआ हूँ।'

आचार्यदेव आर्यरक्षित के विषय में सोचते हैं : 'यह कुलीन है, आस्तिक ब्राह्मण है, सदाचारी है, इसकी वाणी में मृदुता है.... इसको देखते ही मुझे स्नेह होता है।'

तोसलीपुत्र आचार्य श्रुतधर महापुरुष थे। वे आत्मध्यान में लीन बने। उन्होंने आर्यरक्षित का भव्य व्यक्तित्व देखा। जिनशासन के महान् प्रभावक का रूप देखा। आर्य वज्रस्वामी के बाद यह जिनशासन का युगप्रधान आचार्य बनेगा....।' वे जाग्रत हुए। आर्यरक्षित के सामने देखा और बोले :

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'वत्स, दृष्टिवाद पढ़ने के लिए तेरी भद्रमूर्ति माता ने तुझे यहाँ भेजा, इससे मुझे खुशी हुई, परन्तु 'दृष्टिवाद' जैनदीक्षा ग्रहण करनेवालों को ही पढ़ाया जा सकता है। इस विधि का पालन करना चाहिए न? 'विधिः सर्वत्र सुन्दरः।'

आर्यरिक्षत ने तुरंत ही कहा : 'गुरूदेव, जैनेन्द्र संस्कारों से आप मुझे अलंकृत करें, मैं जैनदीक्षा स्वीकार करूँगा। मुझे दृष्टिवाद पढ़कर, मेरी माता को प्रसन्न करना है। परन्तु मेरी एक प्रार्थना है :

'इस नगर के लोगों का मेरे प्रति बड़ा राग है, राजा को भी मेरे प्रति राग है.... उनको जब ज्ञात होगा कि आर्यरक्षित ने जैनदीक्षा ले ली है, तो संभव है कि वे दीक्षा का त्याग करवा दें, आपको भी उपद्रव कर सकते हैं....अबुध-अज्ञानी जीवों का ममत्व दुष्परिहार्य होता है। इसलिए, मुझे दीक्षा देकर दूसरे राज्य में विहार कर देना उचित लगता है। जिनशासन की लघुता नहीं होनी चाहिए।'

आचार्यदेव ने आर्यरक्षित को भागवती-दीक्षा प्रदान की और तुरंत ही वहाँ से विहार कर दिया।

आचार्यदेव ने दीक्षा देने से पूर्व आर्यरक्षित के विषय में जो सोचा, आज के संदर्भ में वह सब अत्यंत विचार करने योग्य है और, आर्यरक्षित ने जो आचार्यदेव को प्रार्थना की, वह भी काफी महत्त्वपूर्ण है। अपने संक्षेप में थोड़ा परामर्श आज कर लें।

❍ कुलीनता :

आचार्यदेव ने आर्यरक्षित में कुलीनता देखी। जिसको जैन-परंपरा की दीक्षा लेनी है, वह कुलीन होना चाहिए। कुलीन व्यक्ति पापाचरण करते डरता है। उसको शर्म आती है। दुःख आने पर भी वह स्वीकृत व्रतों का त्याग नहीं करता है। कुलीन व्यक्ति जैसे संसार में मातृभक्त और पितृभक्त होता है वैसे साधुजीवन में वह गुरुभक्त और परमात्मभक्त होता है। साधु कुलीन व्यक्ति होना चाहिए।

❍ आस्तिकता :

आचार्यदेव ने आर्यरक्षित में आस्तिकता का दर्शन किया। धर्म के प्रति, परमात्मा के प्रति, गुरु के प्रति, मोक्ष के प्रति, मोक्षमार्ग के प्रति श्रद्धा, आस्तिकता कहलाती है। आत्मा के अस्तित्व की श्रद्धा तो मूलभूत आस्तिकता है। यदि आत्मा का अस्तित्व ही न मानें, तो धर्म, गुरु और परमात्मा की श्रद्धा

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

किस काम की? साधु बननेवाला आस्तिक होना ही चाहिए। श्रद्धा के बल से वह कठोर श्रमण जीवन की आराधना सहजता से कर सकता है।

❍ मृदुता :

आचार्यदेव ने आर्यरक्षित के हृदय को मृदु-कोमल देखा! सभी गुणों की आधारशिला है हृदय की मृदुता! स्वभाव की मृदुता! 'प्रशमरति' में भगवान उमास्वातीजी ने कहा :

'विनयायत्ताश्च गुणाः सर्वे, विनयश्च मार्दवायत्तः।'

सभी गुण विनय के अधीन हैं, विनय मृदुता के अधीन है।

मृदु-कोमल हृदय दूसरों का दुःख देखकर दुःखी होगा। मृदु हृदय की वाणी कोमल-विनम्र रहेगी। मृदु हृदयवाले शिष्य का गुरु अच्छा संस्करण कर सकते हैं। मृदु हृदय और मृदु स्वभाव व्यक्ति को सर्वजनप्रिय बनाते हैं।

❍ सदाचार :

साधुजीवन की आराधना करनेवाले व्यक्ति को सदाचारी तो होना ही चाहिए। हिंसा, चोरी, जुआ, व्यभिचार जैसे पाप उन व्यक्ति में नहीं होने चाहिए। उस व्यक्ति का मन सदाचार-प्रिय होना चाहिए। सदाचारी मनुष्य साधुजीवन की श्रेष्ठ आराधना कर सकता है। सदाचारी का मन निराकुल रहता है। आचार्यदेव ने आर्यरक्षित को सदाचारी देखा। विशिष्ट ज्ञानी महापुरुष थे वे। ज्ञानदृष्टि से व्यक्ति को परखने की उनमें क्षमता थी। उन्होंने आर्यरक्षित में जिनशासन की महान प्रभावकता देखी। 'दृष्टिवाद' का अध्ययन करने की योग्यता और क्षमता देखी आर्यरक्षित में। उन्होंने दे दी दीक्षा और आर्यरक्षित के कहे अनुसार वहाँ से विहार भी कर दिया।

आर्यरक्षित ने आचार्यदेव को कितनी अच्छी बातें कही थीं? दो बातें बड़ी ही सुन्दर कही :

१. अबुधस्वजनानां च ममकारो हि दुस्त्यजः।

२. मा भूच्छासनलाघवम्।

जो स्नेही-स्वजन अबुध होते हैं, अज्ञानी होते हैं, उनका ममत्व प्रगाढ़ होता है। उनकी ममता शीघ्र दूर नहीं होती। कभी तो ममता द्वेष में परिवर्तित हो जाती है। महामुनि सुकोशल की कहानी आप जानते हो न? सुकोशल की माता का सुकोशल पर अति ममत्व था। सुकोशल दीक्षा ले, यह वह नहीं

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चाहती थी। फिर भी सुकोशल ने दीक्षा ले ली, तो माता का ममत्व द्वेष में बदल गया। माँ मरकर शेरनी बनी....सुकोशल मुनि को शेरनी माँ ने ही मार डाला। हालाँकि सुकोशल मुनि तो समता-समाधि में लीन बने और सर्व कर्मों का क्षय कर, मुक्तिमहल में चले गये....परन्तु अज्ञानी स्त्री-पुरुषों का राग-ममत्व सरलता से दूर नहीं होता है। इसलिए अज्ञानी-अबुध लोगों से स्नेह नहीं बाँधना चाहिए। प्रेम नहीं करना चाहिए। अज्ञानी के साथ किया हुआ प्रेम खतरे से खाली नहीं होता। आर्यरक्षित समझते थे कि राजा और स्नेही-स्वजन वगैरह ज्ञानी नहीं हैं। वे सन्मार्ग और उन्मार्ग को नहीं समझते। वे परधर्मसहिष्णु भी नहीं हैं। जैनधर्म के प्रति सद्भाव नहीं है। कभी वे आचार्यदेव पर घातक हमला भी कर दें।'

जिनशासन की बदनामी का निमित्त मत होना :

दूसरी बात भी काफी महत्त्वपूर्ण कही गई है। 'जिनशासन की लघुता नहीं होनी चाहिए।' अज्ञानी जीव यदि दीक्षित आर्यरक्षित को वापस घर ले जायँ और जैनसाधुओं के साथ अभद्र व्यवहार करें तो जिनशासन की लघुता हो जाय, जो नहीं होनी चाहिए। जिनशासन का अभी आर्यरक्षित ने स्वीकार नहीं किया है, उस शासन के प्रति उनका अभिगम कितना अच्छा है। चूँकि उनको उसी जिनशासन में आना है। उसी जिनशासन के 'दृष्टिवाद' उनको पढ़ना है।

भले, स्वयं का नुकसान होता हो, कभी स्वयं के संयमधर्म को भी क्षति पहुँचती हो, परन्तु जिनशासन की निन्दा....लघुता हो वैसी प्रवृत्ति नहीं करनी चाहिए। प्राण चले जायँ तो जायँ, परन्तु शासन-विराधना में तो निमित्त बनना ही नहीं चाहिए।

जिस व्यक्ति में मौलिक गुणों की संपत्ति होती है, वही व्यक्ति वास्तव में महान् बनता है। वही व्यक्ति मोक्षमार्ग की आराधना करने में सक्षम बनता है। आर्यरक्षित में अनेक मौलिक गुण थे। माता-पिता की पूजा - यह असाधारण मौलिक गुण है। इस विषय में अभी बहुत कुछ कहना है।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***एक बार प्रेम और शांति से पिता को निवृत्त होने के लिए समझाना। माता-पिता की आंतरिक इच्छा यदि निवृत्त होने की होगी, आत्मकल्याण की प्रवृत्ति करने की होगी तो तुम्हारी बात वे जरूर मान लेंगे। तुम्हारा कर्तव्य पूरा होगा।***
- ***उम्र की भी एक मजबूरी होती है। बुढ़ापे या बीमारी से मजबूर माता-पिता के प्रति तिरस्कार करना कितना उचित है? संगत है? मानो कि दुर्भाग्य से तुम्हारा स्वयं का स्वभाव बिगड़ गया तो तुम क्या करोगे? माता-पिता और गुरु के क्रोधी-गुस्सैल स्वभाव को समता से सहन करना, यह एक सबसे बड़ी तपश्चर्या है!***
- ***पूज्यों के प्रति अपने कर्तव्यों को भुलाकर कौन सुखी हो पाया है? किस-को शांति मिली है? अपने-अपने कर्तव्यों के पालन किया जाये तो काफी दुःख दूर हो सकते हैं।***
- ***गुणों की दृढ़ भूमिका पर धर्म का पालन होता हो वहाँ पर वैर-विरोध या संघर्ष को तनिक भी अवकाश नहीं है!***
- ***जहाँ स्नेह न हो, जहाँ राग न हो.... वहाँ पर भी उपकार तो हो ही सकता है। भगवान मुनिसुव्रतस्वामी ने अश्व को प्रतिबोधित करने के लिए रात के समय भी विहार किया था न?***

प्रवचन : ६५

महान् श्रुतधर, परमोपकारी आचार्यश्री हरिभद्रसूरिजी ने स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में सर्वप्रथम गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों का विवेचन किया है। गृहस्थ के जीवन में यदि इन सामान्य धर्मों का यथोचित पालन हो तो ही वह विशिष्ट धर्मों की आराधना करने के लिए योग्य बनता है।

माता-पिता की पूजा सोलहवाँ सामान्य धर्म है। माता-पिता के जीवन में यदि पहले बताये वे १५ सामान्य धर्मों का पालन होगा तो इस धर्म का पालन सन्तानों के जीवन में संभवित है। पूजा पूज्य की होती है। पूज्य वे बनते हैं कि जो गुणसमृद्ध होते हैं। माता-पिता गुणसमृद्ध होंगे तो ही वे पूज्य बनेंगे। आर्यरक्षित के माता-पिता गुणसमृद्ध थे इसलिए वे सन्तानों के लिए पूज्य बने थे और आर्यरक्षित माता-पिता एवं गुरु के पूजक बने थे इसलिए वे परम पूज्य बने! पूज्यों की पूजा पूजक को पूज्य बनाती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

माता-पिता के प्रति समझदार सन्तानों के चार प्रमुख कर्तव्य यहाँ बताये गये हैं। इन कर्तव्यों का पालन भी माता-पिता की पूजा ही है। एक ओर माता-पिता के पैर दबायें, सेवा करें और दूसरी ओर माता-पिता के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन नहीं करें....तो यह माता-पिता की पूजा नहीं है। चार प्रमुख कर्तव्यों को समझ लें :

१. लड़का जब व्यवसाय करने योग्य बन जाय तब वह पिता को विनयपूर्वक कहे कि 'अब आप पारिवारिक चिन्ता छोड़ दें, मैं दुकान सम्हालूँगा, ठीक ढंग से व्यवसाय करूँगा, अब आप निरन्तर अपने मन-वचन-काया को धर्मआराधना में जोड़ दें। पारलौकिक हित की प्रवृत्ति करें। आपने आज दिन तक हमारा पालन किया है, आपका उपकार मैं कभी नहीं भूल सकता। आपने हमारे लिए बहुत कुछ किया....अब आप अपनी आत्मा का कल्याण करें!'

सभा में से : इतना कहने पर भी यदि पिता निवृत्त नहीं हो तो? व्यापार करना नहीं छोड़े तो क्या करना चाहिए?

महाराजश्री : तो बार-बार नहीं कहना। बार-बार कहोगे तो उनको गुस्सा आयेगा और तुम्हारे शुभ आशय में शंका करेंगे....कि 'यह लड़का मेरी दुकान पर कब्जा कर लेगा, लड़के की बहू घर पर कब्जा कर लेगी और हम दोनों को निकाल देंगे!'

संसार में कहीं-कहीं ऐसा बनता भी है न? इसलिए एक-दो बार बड़ी शान्ति से समझाकर निवृत्ति की बात करना। यदि माता-पिता की आन्तरिक भावना होगी निवृत्ति लेकर आत्मकल्याण की प्रवृत्ति करने की, तो तुम्हारी प्रार्थना को स्वीकार कर लेंगे। तुम्हारा कर्तव्य पूर्ण होगा। निवृत्त माता-पिता के प्रति सन्तानों का व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि उनका चित्त प्रसन्न बना रहे। इसलिए दूसरा प्रमुख कर्तव्य यह बताया है कि -

२. उनकी आज्ञा लेकर संसार-व्यवहार की हर प्रवृत्ति करना। माता से जो पूछना आवश्यक हो वह माता से पूछना, पिता से जो पूछना आवश्यक हो वह पिता से पूछना। कभी ऐसा मत सोचना कि 'हर बात में माता-पिता से क्या पूछना? जो अपने को जँचे वह करना....।' चूँकि, यदि नहीं पूछोगे तो कभी तुम्हें नुकसान हो सकता है। दुनिया में हर काम बुद्धि से ही नहीं होता, अनुभव भी चाहिए। माता-पिता के पास अनुभवज्ञान होता है न? दूसरी बात यह भी है कि जो बड़े होते हैं उनके मन में एक ऐसी इच्छा रहती है कि लड़के-लड़कियाँ उनसे पूछकर काम करें। यदि वैसा करती हैं सन्तानें, तो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

माता-पिता का मन प्रसन्न रहता है, सन्तानों के प्रति स्नेह बना रहता है। माता-पिता के मन को प्रसन्न रखना ही चाहिए।

उपकार के भाव से माता-पिता की सेवा नहीं होती :

सभा में से : कितना भी करें, परन्तु माता-पिता को संतोष ही नहीं होता हो तो क्या करें? जितना करते हैं उतना उनको कम ही नजर आता है।

महाराजश्री : यह शिकायत अर्धसत्य है! या तो आपको जितनी सेवा करनी चाहिए उतनी करते नहीं होंगे। अथवा सेवा करते होंगे परन्तु जिस प्रकार करनी चाहिए उस प्रकार नहीं करते होंगे। या तो उनसे बातें करते होंगे तिरस्कार की भाषा में! इस प्रकार उनकी सेवा करते होंगे कि जैसे तुम उन पर उपकार करते हो। सेवा वैसे नहीं करने की होती है। माता-पिता की सेवा जितनी भी करें, कम ही है।

कई बार वृद्धावस्था और रुग्णावस्था मनुष्य के स्वभाव पर असर करती है। स्वभाव कुछ क्रोधी और चिड़चिड़ा हो जाता है। हर बात में अपना अभिप्राय देने की आदत हो जाती है....यह बात सन्तानों को पसन्द नहीं आती है और सन्तानें भी क्रोध एवं अपमान करने लगती हैं।

सोचना तो यह चाहिए कि अवस्था की भी एक मजबूरी होती है। वृद्धावस्था से या रुग्णावस्था से मजबूर बने माता-पिता के प्रति तिरस्कार करना कहाँ तक उचित है? आप भी जब वृद्ध बनेंगे तब यदि दुर्भाग्य से स्वभाव बिगड़ गया तो क्या करेंगे? किसी के यानी माता-पिता एवं गुरु के क्रोधी स्वभाव को सहन करना समता से, यह एक बड़ी तपश्चर्या है।

माता-पिता के साथ प्रेम से, नम्रता से और मृदु शब्दों से बात करें। संसार के कार्य उनसे पूछकर करें और धर्मपुरुषार्थ भी उनसे पूछकर करें। हालाँकि माता-पिता को भी कुछ तो समझना होगा ही। कोई विशेष नुकसान नहीं लगता हो तो तुरन्त ही अनुमति दे देनी चाहिए। हाँ-ना नहीं करना चाहिए। कभी मौन भी रहना चाहिए। गंभीरता, उदारता, सहिष्णुता और प्रेमसभरता - ये चार गुण माता-पिता में होने ही चाहिए तो ही सन्तानों का कर्तव्यमार्ग सरल हो सकता है।

तीसरा प्रमुख कर्तव्य - जो कोई श्रेष्ठ वस्तु प्राप्त हो वह माता-पिता को देनी चाहिए। माता-पिता से कुछ छिपाना नहीं चाहिए। माता-पिता को वैसे उदार बनना चाहिए कि जो वस्तु लड़के-लड़कियाँ उनको भेंट करें, वह वस्तु

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वापस उसको दे दें। 'यह वस्तु तो तुम्हारे काम की है, हमें क्या करनी है? तुम इसका उपयोग करना....।'

माता-पिता के पास जब कोई अच्छी-श्रेष्ठ वस्तु आये, वे सन्तानों को देते हैं! घर में जो छोटे हों उनको देनी चाहिए। राजगृही में जब नेपाल का व्यापारी १६ रत्नकंबल लेकर आया था, मगधसम्राट श्रेणिक ने एक भी रत्नकंबल खरीदी नहीं और वह निराश होकर जा रहा था, तब शालिभद्र की माता भद्रा ने उसको बुलवाकर १६ रत्नकंबल खरीद लिये थे और १६ कंबलों के ३२ टुकड़े करके अपनी ३२ पुत्रवधुओं को दे दिया था न? अपने लिए एक टुकड़ा भी नहीं रखा था न? यह थी भद्रामाता की उदारता!

वैसे, जब लड़के बड़े हो जायें और माता-पिता निवृत्त हो जायें तब जो कोई अच्छी वस्तु प्राप्त हो, सर्वप्रथम माता-पिता को देनी चाहिए।

कर्तव्यपालन से अनेक दुःखों का अंत :

चौथा प्रमुख कर्तव्य - यह है कि हर वस्तु का उपभोग माता-पिता कर लें, बाद में दूसरे करें। हाँ, माता-पिता को व्रत-नियम हो और जिन वस्तुओं का वे भोगोपभोग करते ही न हों, उन वस्तुओं का उपभोग परिवारवाले पहले भी कर सकते हैं। ऐसा करने से माता-पिता का मन संतुष्ट रहता है। माता-पिता के मन को प्रसन्न और संतुष्ट रखना, सन्तानों का परम कर्तव्य है। आज इस कर्तव्य को सन्तानें भूल गई हैं। पूज्यों के प्रति अपने कर्तव्यों को भूलकर कौन सुखी होता है? कौन शान्ति पाता है? अपने-अपने कर्तव्यों का पालन यदि लोग करते रहें तो बहुत से दुःख दूर हो सकते हैं। क्लेश, सन्ताप और झगड़े दूर हो सकते हैं।

कितनी सुन्दर और निरापद जीवनपद्धति बताई है ज्ञानीपुरुषों ने? इस पारिवारिक जीवनपद्धति को स्वीकार कर लिया जाय तो क्या नुकसान है? यदि सुख-शान्ति और प्रसन्नता पानी है तो इस जीवनपद्धति को स्वीकार करना ही होगा। सेवा, त्याग, सहनशीलता, समर्पण इत्यादि गुणों का विकास ऐसी जीवनपद्धति में ही संभव है।

सभा में से : माता-पिता के प्रति आदरभाव कुछ समय तक तो रहता है।

महाराजश्री : कब तक रहता है? एक महर्षि ने कहा है -

आस्तन्यपानाज्जननी पशुनामादारलाभावधि चाधमानाम्।
आगेहकर्मावधि मध्यमानामाजीवितात्तीर्थमिवोत्तमानाम् ।।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'पशुसृष्टि में स्तनपान तक माता होती है, अधम पुरुष के लिए तब तक माता होती है जब तक पत्नी घर में नहीं आती है। मध्यम पुरुषों के लिए तब तक माता होती है जब तक माँ घर का काम करती है और उत्तम पुरुषों के लिए जीवनपर्यंत माता होती है.... और वे माता की तीर्थरूप में सेवा करते हैं।'

अब आप सोच लेना कि आप कौन-सी कक्षा में हैं। अधम, मध्यम या उत्तम? सोचकर उत्तम कक्षा में पहुँचने का प्रयत्न करोगे न? माता के उपकार कभी मत भूलना। कैसी भी हो माता....अनपढ़ हो, गुस्सा भी करती हो, कभी कोई भूल भी करती हो....फिर भी माता तो माता ही रहेगी। उसने नौ महीने तक अपने उदर में बच्चें का पालन किया है, यह उपकार भी इतना बड़ा है कि जिसका मूल्य हो ही नहीं सकता।

उपकारी के उपकारों को नहीं भूलना यह कृतज्ञता-गुण है। धर्मपथ पर चलनेवालों में यह गुण होना अति आवश्यक है। उत्तम आत्माओं में यह गुण होता ही है। सहजतया होता है। आर्यरक्षित में यह गुण स्वाभाविक रूप से था। माता-पिता के उपकारों को वे अपने जीवन में कभी नहीं भूले। माता-पिता के प्रति उनका सद्भाव आजीवन बना रहा। पिता ने पढ़ने के लिए पाटलीपुत्र भेजा तो वे पाटलीपुत्र चले गये और माता ने 'दृष्टिवाद' पढ़ने के लिए जैनाचार्य के पास भेजा तो वे जैनाचार्य तोसलीपुत्र के पास चले गये। कितनी नम्रता होगी? कितनी सरलता होगी? अपने वैषयिक सुखों का सहजता से त्याग कर दिया न? दीक्षा ले ली, माता की आज्ञा का पालन करने के लिए।

आर्यरक्षित मुनि अपने साध्वाचारों के पालन में निपुण बने। गुरु-बहुमान और गुरुभक्ति से उनमें ज्ञानावरण-कर्म का विशिष्ट क्षयोपशम हुआ। गुरुदेव ने आर्यरक्षित को क्रमशः शास्त्राध्ययन कराते हुए, अपने पास जितने पूर्वों का ज्ञान था, उनको दे दिया।

उस काल में दश पूर्वों का ज्ञान दो महापुरूषों के पास था। एक थे श्री भद्रगुप्ताचार्यजी और दूसरे थे श्री वज्रस्वामी। श्री वज्रस्वामी ने दश पूर्वों का ज्ञान श्री भद्रगुप्ताचार्यजी से ही प्राप्त किया था। आचार्यश्री तोसलीपुत्र ने आर्यरक्षित को श्री भद्रगुप्ताचार्यजी के पास भेजा। उस समय भद्रगुप्ताचार्यजी उज्जयिनी नगरी में बिराजमान थे। अति वृद्धावस्था में थे।

गीतार्थ साधुपुरुषों के साथ आर्यरक्षित मुनि उज्जयिनी पहुँचे। उपाश्रय में पहुँचे। श्री भद्रगुप्ताचार्यजी को वंदना की, भद्रगुप्ताचार्यजी ने खड़े होकर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आर्यरक्षित आदि मुनिवरों का अभिवादन किया। आर्यरक्षित को तो स्नेह से अपने बाहुपाश में जकड़ लिया।

आर्यरक्षित श्री भद्रगुप्ताचार्यजी की सेवा में तत्पर बने। एक दिन भद्रगुप्ताचार्यजी समाधि में लीन बने और आर्यरक्षित का भविष्य देखा....उज्ज्वल भविष्य देखा। उन्होंने आर्यरक्षित को प्रेम से अपने पास बुलाकर, उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा :

प्रभावको भवानर्हच्छासनाम्भोधिकौस्तुभः।
संघाधारश्च भावी, तदुपदेशं करोतु मे ।।

'हे वत्स, तू जिनशासन का प्रभावक बनेगा, संघ का आधारस्तंभ बनेगा.... इसलिए मेरे उपदेश का पालन करना। तुझे शेष पूर्वों का ज्ञान श्री वज्रस्वामी से प्राप्त करने का है।'

आर्यरक्षित मुनि ने श्री भद्रगुप्ताचार्यजी के उत्संग में अपना मस्तक रख दिया। आचार्यदेव ने हार्दिक अनुग्रह बरसाया उन पर। कुछ समय के पश्चात् भद्रगुप्ताचार्यजी का स्वर्गवास हो गया।

कैसे विशिष्ट ज्ञानी महापुरुष थे उस काल में! भद्रगुप्ताचार्यजी ने श्री आर्यरक्षित मुनि का भविष्य अपनी ज्ञानदृष्टि से जान लिया! अपना कैसा घोर दुर्भाग्य है कि वर्तमान काल में ऐसे विशिष्ट ज्ञानी महात्मा मिल नहीं रहे हैं। न रहा 'पूर्वों' का ज्ञान, न रहा योगबल और न रही ऐसी विशिष्ट आध्यात्मिक शक्ति....! जिनशासन के प्रमुख आचार्य ऐसे ज्ञान से, योगबल से और आध्यात्मिक शक्ति से तेजस्वी हो तो संसार के जीवों को मोक्षमार्ग की आराधना में विपुल संख्या में जोड़ सकें। विरोधियों को भी नतमस्तक कर सकें। स्व-पर जीवों का कल्याण कर सकें।

श्रमण भगवान महावीरदेव की शासन-परंपरा में ऐसे प्रतिभा-संपन्न अनेक आचार्य हुए हैं। श्री वज्रस्वामी ऐसे ही महान् जैनाचार्य थे। उनके पास १० पूर्वों का ज्ञान था, 'आकाशगामिनी' और 'क्षीरास्रव' नाम की दो अपूर्व लब्धियाँ थीं, अद्भुत पुण्यप्रभाव था।

आर्यरक्षित और वज्रस्वामी का हृदयंगम मिलन :

एक दिन वज्रस्वामी को स्वप्न आया : 'दूध से भरा हुआ पात्र कोई अतिथि आकर पी जाता है.....कुछ अंश में दूध पात्र में शेष रह जाता है।' वज्रस्वामी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ने सोचा : 'आज ही कोई प्राज्ञ अतिथि मेरे पास आना चाहिए। वह अतिथि मेरा संपूर्ण ज्ञान प्राप्त करेगा, परन्तु कुछ शेष रहेगा।'

वज्रस्वामी सोच ही रहे थे कि आर्यरक्षित मुनि उपाश्रय में प्रविष्ट हुए। 'नीसिही' बोलकर उन्होंने प्रवेश किया और वज्रस्वामी के पास आकर 'मत्थएण वंदामि' कह कर वंदना की। वज्रस्वामी इस अपूर्व अतिथि को देखकर खड़े हो गये और आर्यरक्षित का स्वागत किया। दोनों ने अपूर्व आनन्द की अनुभूति की, वंदना कर, श्री वज्रस्वामी के चरणों में बैठकर उन्होंने निवेदन किया : 'मेरे गुरुदेव श्री तोसलीपुत्र आचार्य हैं। उनकी आज्ञा से मैं पूज्य स्वर्गस्थ आचार्य श्री भद्रगुप्ताचार्यजी के चरणों में गया था। मुझे उस महापुरुष के आशीर्वाद मिले और उनकी आज्ञा के अनुसार मैं आपके पास शेष दसवें पूर्व का ज्ञान प्राप्त करने आया हूँ। आप इस काल के सर्वश्रेष्ठ ज्ञानी पुरुष हैं। युगप्रधान हैं। कृपा के सागर हैं। क्या आप मेरे पर कृपा करके दसवें पूर्व का अध्ययन करवायेंगे?'

आर्यरक्षित के मधुर एवं विनययुक्त वचन सुनकर श्री वज्रस्वामी प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा :

'हे वत्स, तुझे देखते ही मुझे अपूर्व आनन्द हुआ है। तू प्रज्ञावंत और विनयशील है। मैं तुझे अवश्य दसवें पूर्व का अध्ययन कराऊँगा। तू पूरी लगन से अध्ययन करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।'

आर्यरक्षित मुनि गद्‌गद् हो गये। उन्होंने अध्ययन शुरू कर दिया। श्री वज्रस्वामी ने पूर्ण वात्सल्य से अध्ययन कराना शुरू किया। अपना पूर्वों का अपूर्व ज्ञान लेनेवाला सुपात्र प्रज्ञावंत शिष्य हो, ज्ञानसंपत् प्राप्त करने की तमन्ना हो, उसको ज्ञान देने में ज्ञानदाता समर्थ गुरु को क्यों खुशी न हो?

अध्ययन में कई दिन, कई महीने और कुछ वर्ष बीतते हैं। ज्ञान-ध्यान में, लाखों वर्ष का जीवन व्यतीत हो जाय....तो भी पता नहीं लगता है।

इधर उज्जयिनी नगरी में श्री आर्यरक्षित दृष्टिवाद के अध्ययन में लीन बने हैं....उधर दशपुर में आर्यरक्षित की माता रुद्रसोमा पुत्रविरह से व्याकुल बनती जा रही है! रुद्रसोमा ने ही आर्यरक्षित को 'दृष्टिवाद' पढ़ने भेजा है! परन्तु है तो माता का हृदय न? गुणवान्, बुद्धिमान्, शीलवान् और विनयवान् पुत्र कौन-सी माता को याद न आये? फिर भी रुद्रसोमा पुत्रदर्शन हेतु उज्जयिनी नहीं गई हैं। 'मेरे जाने से उसकी ज्ञानोपासना में विक्षेप होगा....। दृष्टिवाद पढ़ने

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के बाद स्वयं मेरे पास आयेगा!' हृदय की भावना पर कर्तव्य-बुद्धि की विजय हुई थी। परन्तु फिर भी हृदय में विकल्प तो पैदा होते ही हैं! पुत्रस्नेह तो था ही! स्नेह विकल्प तो करवायेगा ही! कभी अच्छे....तो कभी बुरे! प्रिय पुत्र का विरह माता को बेचैन बना रहा है। वह सोचती है : 'कैसा वह मेरे हृदय को आनन्दित करनेवाला पुत्र है! कितना बुद्धिमान् है! कैसा उसका शान्त-शीतल स्वभाव है। उसको मैंने अपने से दूर भेज दिया? मैं कैसी अबोध माँ हूँ? प्रकाश की आशा थी....परन्तु पुत्रविरह की वेदना का अंधकार उतर आया। मुझसे अब उसके विरह का दुःख सहा नहीं जाता है....। मैं जानती हूँ कि वह श्रमण बन गया है। अच्छा है....वह भले श्रमण जीवन का पालन करे परन्तु मैं उसका मुँह देखना चाहती हूँ। उसको यहाँ बुलाना चाहिए। मैं बुलाऊँगी तो वह अवश्य आयेगा। उसने कभी भी मेरी आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया है। उसके हृदय में मातृभक्ति का सागर भरा पड़ा है। मैं बुलावा भेजूँ? किसको भेजूँ? फल्गुरक्षित को भेजूँ....चूँकि आर्यरक्षित के हृदय में अपने छोटे भाई के प्रति वात्सल्य है। ठीक है, उसके पिताजी की अनुमति ले लूँ....। परन्तु क्या वे अनुमति देंगे? चूँकि मैंने उनको पूछे बिना ही भेजा है आर्यरक्षित को। हाँ, फिर भी मुझे उन्होंने एक अक्षर का भी उपालंभ नहीं दिया है। वे गंभीर हैं, मेरे प्रति उनका प्रेम है, श्रद्धा है। वे यह बात तो मानते हैं कि मैंने आर्यरक्षित को गलत रास्ते पर तो नहीं भेजा है। उनकी अनुमति लेकर ही फल्गुरक्षित को भेजूँ....।'

रुद्रसोमा ने सोमदेव पुरोहित के पास जाकर विनय से पूछा : 'आपकी अनुमति हो तो मैं फल्गुरक्षित को आर्यरक्षित के पास भेजूँ। वह आर्यरक्षित को मेरा संदेश देगा....आर्यरक्षित को लेकर वह वापस लौटेगा।'

सोमदेव पुरोहित विद्वान थे परन्तु सरल थे। उन्होंने कहा : 'तू जो करेगी वह मुझे मंजूर है। तुझे जो अच्छा लगे वह कर।'

रुद्रसोमा ने कैसे अपना घरसंसार चलाया होगा? सोमदेव में विद्वत्ता और सरलता का कैसा सुभग संयोग होगा? गुणों की दृढ़ भूमिका पर किसी भी धर्म का पालन होता हो, वैर-विरोध या संघर्ष नहीं हो सकता। मौलिक गुणों की सुदृढ़ भूमिका होनी चाहिए। रुद्रसोमा के परिवार में यह भूमिका सुदृढ़ थी।

सभा में से : आर्यरक्षित का बुलाने की बजाय रुद्रसोमा स्वयं उनके पास चली जाती तो अच्छा नहीं था?

महाराजश्री : रुद्रसोमा के नहीं जाने के अनेक कारण हो सकते हैं। उस काल में महिलाएँ प्रायः बाहर नहीं जाती थीं। दूसरी बात, वह राजपुरोहित की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पत्नी थी। तीसरी बात, आर्यरक्षित के पास जाकर, विशाल मुनिवृन्द के बीच हृदय की बातें वह नहीं कर सकती। चौथी बात, उसके मन में तो सारे परिवार को मोक्षमार्ग का आराधक बनाने की भावना थी। मात्र मोहवशता नहीं थी रुद्रसोमा की। मात्र पुत्र का मुखदर्शन करके ही वह संतुष्ट होनेवाली श्राविका नहीं थी। यदि आर्यरक्षित दशपुर में आयेगा तो उसके पिताजी भी सद्धर्म की प्राप्ति कर सकते हैं। चूँकि पिता के मन में पुत्र के प्रति प्रेम है। वह प्रेम उनके जीवन-परिवर्तन में हेतु बन सकता है। ऐसा कुछ उसके मन में होना चाहिए। उसने फल्गुरक्षित के साथ जो संदेश भेजा है, उस संदेश की भाषा में से ऐसा कुछ फलित होता है। कितना ज्ञानगर्भित....सारभूत संदेश भेजा है उस श्राविका माता ने! अद्भुत है वह संदेश। आप भी सुनें वह संदेश।

श्राविका माँ का प्रेरक संदेश :

'हे वत्स, तूने जननी का मोह तोड़ दिया है, बन्धुजनों का स्नेह भी तोड़ दिया है.... परन्तु वात्सल्य और करुणा तो होनी चाहिए न? जिनेन्द्र परमात्मा ने वात्सल्य और करुणा को तो मान्यता प्रदान की है। श्री महावीर प्रभु जब माता के उदर में थे तब से माता के प्रति भक्तिवाले थे। इसलिए तुझे कहती हूँ कि तू शीघ्र यहाँ आ और मुझे तेरा मुखदर्शन देकर आनन्दित कर। तेरे विरह से मेरा मन कितना व्याकुल होगा, उसका विचार करना।

और एक बात कहती हूँ : तू यहाँ आयेगा तो जो मार्ग तूने ग्रहण किया है वह मार्ग.... वह चारित्र्यमार्ग मैं भी ग्रहण करूँगी! तेरे पिताजी और तेरे भाई-बहन भी वही मार्ग ग्रहण करेंगे।

यदि तेरे हृदय में मेरे प्रति स्नेह न हो, न रहा हो, तू पूर्ण विरक्त बन गया हो....तो भी उपकारबुद्धि से आना। इस संसार-सागर से मेरा उद्धार करने के लिए आना। एक बार तू आ जा यहाँ....तेरा दर्शन करके मैं कृतार्थ बन जाऊँगी।

रूद्रसोमा ने अपने छोटे पुत्र फल्गुरक्षित को गद्‌गद् स्वर से यह संदेश दिया। फल्गुरक्षित ने उज्जयिनी की ओर प्रयाण कर दिया।

रुद्रसोमा का भव्य सन्देश सुना न? हृदय को हिला दे.... वैसा था यह सन्देश। सन्देश में कुछ महत्त्वपूर्ण बातें कही हैं रुद्रसोमा ने। साधुजीवन का स्पर्श करनेवाली पहली बात है। संसार का त्याग कर, साधुजीवन को स्वीकार करनेवाला साधु विरक्त होता है। माता-पिता और भाई-बहन आदि स्वजनों के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रति स्नेह का बन्धन नहीं होता है। परन्तु फिर भी, साधु के हृदय में वात्सल्य और करुणा तो होनी ही चाहिए! वात्सल्य मोह नहीं है! करुणा मोह नहीं है!

साधु बनने के बाद भी उपकारी माता-पिता के उपकारों को भूलने का नहीं है। माता-पिता के उपकारों का बदला चुकाने की भावना पुत्र-साधु के हृदय में होनी ही चाहिए। इसलिए तो रुद्रसोमा ने भगवान महावीर का दृष्टान्त दिया! तीर्थंकर जैसे तीर्थंकर भी मातृभक्ति करते हैं तो दूसरों की बात ही क्या करने की? साधु-साध्वी के हृदय वात्सल्य से परिपूर्ण होने ही चाहिए। करुणा से भरपूर होने चाहिए।

दूसरी बात तो दिल और दिमाग को चकरा दे वैसी कह दी है रूद्रसोमा ने! जो मार्ग, जो चारित्रमार्ग पुत्र ने लिया.... वह मार्ग स्वयं लेने की भावना प्रदर्शित कर दी! कैसा अद्भुत पुत्रप्रेम! 'पुत्र को जो मार्ग प्रिय.... वह मार्ग मुझे भी प्रिय!' इतना ही नहीं, अपने पति को, पुत्री को और छोटे पुत्र को भी उसी मोक्षमार्ग पर ले चलने की बात कह दी रुद्रसोमा ने!

आर्यरक्षित के जाने के बाद, रुद्रसोमा ने अपने पति-पुरोहित के जीवन में कुछ परिवर्तन देखा होगा! पुत्र-पुत्री के जीवन में भी चारित्र-धर्म को पाने की योग्यता देखी होगी! सारे परिवार का आर्यरक्षित के प्रति उच्चतम भाव देखा होगा! तभी तो ऐसा सन्देश भेज सकी न? यह कोई झूठा आश्वासन नहीं था! पुत्र को बुलाने का कोई लालच नहीं था।

आजकल तो आप लोग ऐसी बात साधुओं को ललचाने के लिए भी करते हो न? महाराज साहब, आप हमारे गाँव में पधारें, चातुर्मास करें....तो हम दीक्षा लेने की सोचें। चातुर्मास पूर्ण होने के बाद दीक्षा के लिए तैयार हो जाये न?

रुद्रसोमा की पूर्ण तैयारी थी चारित्रधर्म ग्रहण करने की। 'कब, आर्यरक्षित यहाँ आये और मैं संसारवास का त्याग कर दूँ।' इस बात की जल्दी थी रुद्रसोमा को।

तीसरी बात कही उपकार की! साधु निःसंग....निःस्नेही हो जाय, आत्मभाव में रमणता करनेवाला हो जाय....तो भी उपकारभाव तो रहना ही चाहिए। 'मुझ पर उपकार करने के लिए भी एक बार यहाँ आ जा!'

तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रतस्वामी ने एक अश्व को प्रतिबोध करने के लिए रात्रि में विहार किया था! उपकार की प्रवृत्ति सभी को करने की है। साधु जो मन-वचन-काया से अहिंसा धर्म का पालन करता है, वह भी उपकार ही है। जहाँ

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्नेह न हो, जहाँ राग न हो.... वहाँ पर भी उपकार तो हो सकता है। रुद्रसोमा के सन्देश में से यह बात फलित होती है।

तीन के ऋण से मुक्त होना अति आवश्यक है :

माता-पिता, स्वामी और गुरु के उपकारों का बदला चुकाना मुश्किल है। यदि उनके उपकार समझें तो बात है। जिनके उपकार अपने पर हों उनके प्रति व्यवहार कैसा हो? उनकी आज्ञा का पालन कैसा हो?

बंगाल में आशुतोष मुखर्जी हाइकोर्ट के जज थे और बंगाल युनिवर्सिटी के उपकुलपति थे। उस समय भारत पर अंग्रेज राज्य करते थे। आशुतोष को इंग्लैंड जाने के लिए उनके मित्र आग्रह करते थे, परन्तु आशुतोष विदेश नहीं जाते थे। चूँकि उनकी माता की इच्छा नहीं थी आशुतोष को विदेश भेजने की। एक दिन भारत के गवर्नर-जनरल लार्ड कर्जन ने आशुतोष से कहा : 'तुम अपनी माता से कहो कि गवर्नर-जनरल ने मुझे विदेश जाने की आज्ञा की है।' तो तुम्हारी माता विरोध नहीं करेगी।'

आशुतोष ने कहा : 'मैं अपनी माता को ऐसा नहीं कह सकता, क्योंकि मैं गवर्नर-जनरल की आज्ञा से भी अपनी माता की आज्ञा को विशेष महत्त्व देता हूँ।'

श्री आर्यरक्षित ने राजा के सम्मान से भी ज्यादा महत्त्व माता को दिया था न? माता की इच्छा पूर्ण करने के लिए वे साधु बन गये! दृष्टिवाद के अध्ययन में दिन-रात डूब गये! यह थी श्रेष्ठ मातृपूजा।

फल्गुरक्षित उज्जयिनी पहुँच गया। उपाश्रय में गया। उसने सर्वप्रथम आर्यरक्षित को श्रमणरूप में देखा। आर्यरक्षित के चरणों में लेट गया.... आँखें आँसू बहाने लगीं। आर्यरक्षित ने फल्गुरक्षित को उठाया।

'कहो, किस प्रयोजन से यहाँ आना हुआ?'

'माता का सन्देश लेकर आया हूँ।'

'माता का सन्देश? कहो, क्या आज्ञा है माता की?'

'माँ आपको शीघ्र दशपुर बुला रही है। आपके विरह से वह व्याकुल है....।' फल्गुरक्षित रो पड़ा। रोते-रोते उसने माता का सन्देश सुनाया। आर्यरक्षित शान्त चित्त से आँखें मूँदकर सन्देश सुनते रहे। कुछ क्षण सोचते रहे और बोले : 'फल्गु! जो शाश्वत् नहीं है....उससे क्या मोह करना? संसार

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

के क्षणिक, विनाशी और चंचल सम्बन्धों में मोह क्या करना? दूसरी बात, मेरा अध्ययन चल रहा है....उसमें अन्तराय क्यों करना? हाँ, माता के उपकारों को मैं भूल नहीं सकता। परन्तु जब तक अध्ययन पूरा न हो.... तब तक यहाँ रुकना आवश्यक है। परन्तु फल्गु, यदि तेरा मेरे प्रति स्नेह है तो तू मेरे पास रह जा। साधु बने बिना तू मेरे पास नहीं रह सकता।'

'मुझे दीक्षा देने की कृपा करें, मैं आपके पास ही रहूँगा।' फल्गुरक्षित ने बड़े भ्राता के चरण पकड़ लिये। आर्यरक्षित ने फल्गुरक्षित को दीक्षा दी और श्रमण बनाया।

जब तक जनम मिले ऐसी माँ ही मिले :

आर्यरक्षित के हृदय में माता का सन्देश गूँजता रहता है। वे अध्ययन करते हैं। श्रमण जीवन की क्रियाएँ भी करते हैं....परन्तु अपने मन में माता की सौम्य मुखाकृति उभरती रहती है। माता के परम उपकारों की स्मृति, उस महाविरागी के हृदय को गीला कर देती है।

'मुझे माँ बुला रही है। मुझे शीघ्र जाना चाहिए। वह मात्र मोह से नहीं बुला रही है....उसकी भावना है चारित्र्यधर्म पाने की। वह मात्र मेरी जननी नहीं है, गुरु भी है! उसने अपने स्वार्थों का विसर्जन किया है....! वह पूरे परिवार का आत्मकल्याण चाहती है। कितना भव्य त्याग? कैसी दिव्यदृष्टि? जब तक संसार में जन्म लेना पड़े तब तक ऐसी माता की कुक्षी में ही जन्म मिलता रहे....।'

आर्यरक्षित एक दिन विह्वल बने और श्री वज्रस्वामी के चरणों में जाकर पूछा :

'गुरूदेव, अब मेरा अध्ययन कितना शेष रहा है?'

'वत्स, बिन्दु जितना अध्ययन हुआ है, सिन्धु जितना शेष है।'

आर्यरक्षित मौन रहे। काफी लगन से अध्ययन में जुड़ गये।

दसवाँ पूर्व आधा पढ़ लिया था।

पुनः उनके मन में दशपुर जाने की इच्छा प्रबल हो उठी। वे क्या करते हैं - आगे बात करूँगा।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***संभव है कि माता-पिता संतानों की तमाम इच्छाएँ पूरी नहीं भी कर सकते। उस समय संतानों को माता-पिता के संजोगों का विचार करना चाहिए। उनके प्रति रोष और आक्रोश नहीं करना चाहिए। उपकारियों के दिल को तोड़ना यह सबसे बड़ा पाप है।***
- ***वास्तविकता जान लेने के पश्चात् राग-द्वेष नहीं होते हैं। सच्चे कार्यकारण भाव जान लेने से समत्व की आराधना सरल हो जाती है।***
- ***मातृपूजक और पितृपूजक जिन्हें बनना है.... उन्हें इन कर्तव्यों का पालन प्रेम से करना चाहिए : १. पादप्रक्षालन। २. समय पर भोजन देना, कपड़े देना, बिछौना बिछाना, स्नान करवाना वगैरह। ३. सेवा स्वयं करना। ४. उनके आदेशों का पालन करना। ५. सभी कार्य उन्हें पूछकर करना। ६. माता-पिता आदि डांटे तो सामने जवाब देकर अविनय नहीं करना चाहिए। ७. उनकी धार्मिक भावनाओं को यथाशक्ति पूरी करना।***
- ***माता-पिता संतानों के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करें.... संतान माता-पिता के प्रति जो कर्तव्य हैं, उनका पालन करते रहें!***

प्रवचन : ६६

परमोपकारी महान् श्रुतधर आचार्यश्री हरिभद्रसूरीश्वरजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में, गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हुए सोलहवाँ सामान्य धर्म बता रहे हैं। सोलहवाँ सामान्य धर्म है - माता-पिता की पूजा।

माता-पिता पूजनीय होते हैं उपकार के माध्यम से। उपकार करनेवाले पूजनीय बनते हैं, उपकृत जीव पूजक होने चाहिए। उपकारी निरहंकारी होने चाहिए, उपकृत जीव कृतज्ञ होने चाहिए। उपकारी आत्माएँ निरपेक्ष वृत्तिवाली चाहिए, उपकृत जीव प्रत्युपकार की भावना से भरपूर होने चाहिए।

गृहस्थ धर्म सापेक्ष धर्म होता है। वह निरपेक्ष बनकर धर्म नहीं कर सकता। माता-पिता, पुत्र वगैरह की अपेक्षा से उपकारी बनते हैं न? पुत्र वगैरह माता-पिता की अपेक्षा से प्रत्युपकार कर सकते हैं। यह है सापेक्षता! परन्तु उपकार

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करनेवालों के मन में प्रत्युपकार की अपेक्षा नहीं होनी चाहिए। वहाँ होना चाहिए कर्तव्यपालन का भाव। वहाँ होनी चाहिए जिनाज्ञापालन की भावना।

हम पर जिन-जिनका छोटा-बड़ा उपकार हों, हमें भूलने नहीं चाहिए उन उपकारीजनों को और उनके उपकारों को। कभी ऐसा नहीं सोचना कि 'माता-पिता ने हम पर कौन-सा उपकार कर दिया है? उन्होंने जो कुछ हमारे लिए किया वह उनका कर्तव्य था और किया.... हमने तो उनको नहीं कहा था कि हमारे लिए ऐसा-ऐसा करना....।' यदि संतानें ऐसा सोचेंगी तो बड़ा अनर्थ होगा। हमारे प्रति कोई कर्तव्य-भावना से उपकार करता है, उसका भी बड़ा मूल्य है। हमारे मन में उसका मूल्यांकन होना चाहिए। संभव है कि माता-पिता संतानों की सभी इच्छाएँ पूर्ण नहीं कर सकें। उस समय सन्तानों को माता-पिता के संयोग-परिस्थिति का विचार करना चाहिए। उनके प्रति रोष-आक्रोश नहीं करना चाहिए। अविनय नहीं करना चाहिए। कटु शब्द के प्रहार नहीं करने चाहिए। उपकारियों के दिल को तोड़ने का पाप बड़ा पाप है। सन्तानों को अपने कर्तव्यों के पालन में जाग्रत रहना चाहिए।

श्री आर्यरक्षित मुनि हैं, श्रमण हैं, विरक्त महात्मा हैं, परन्तु माता का संदेश सुनने के बाद उनके हृदय में माता के उपकारों की स्मृति उमड़ने लगी है। हालाँकि वे अध्ययन करते हैं। दिन-रात अप्रमत्त-भाव से अध्ययन करते हैं, परन्तु बार-बार माता के संदेश के शब्द उनके हृदय को आंदोलित करते हैं। दसवें 'पूर्व' का अध्ययन चालू है। वे यह चाहते हैं कि 'दसवें' पूर्व का अध्ययन पूरा करके दशपुर चला जाऊँ।' परन्तु महासागर जैसा है दसवाँ पूर्व।

वे अधीर बने। श्री वज्रस्वामी के पास दूसरी बार गये और विनय से पूछा : 'गुरूदेव, दसवाँ पूर्व अब कितना शेष है?' श्री वज्रस्वामी ने कहा : 'आर्यरक्षित, तुम तीव्र गति से अध्ययन करते हो, फिर भी समय तो लगेगा ही, इसलिए दूसरा कोई विचार किये बिना अध्ययन करते रहो....।'

आर्यरक्षित ने वज्रस्वामी को माता के संदेश की बात नहीं कही थी। वे उचित नहीं समझे होंगे ऐसी बात करने में। वे पुनः अध्ययन में लग गये। दसवाँ पूर्व आधा हो गया.... अब आर्यरक्षित एकदम अधीर बन गये। उनको बार-बार माता की पुकार सुनाई देने लगी। वे तीसरी बार श्री वज्रस्वामी के पास गये और पूछा : 'गुरुदेव, अब कितना अध्ययन शेष रहा है?' श्री वज्रस्वामी ने आर्यरक्षित के सामने देखा। मुख पर बेचैनी थी, अधीरता थी....भीतर में कुछ अशान्ति थी। उन्होंने ध्यान लगाया। श्रुतोपयोग में देखा....'ओह, यह दसवें पूर्व का पूर्ण

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अध्ययन नहीं कर सकेगा। यह जायेगा यहाँ से और पुनः लौटकर मुझे मिल भी नहीं सकेगा। मेरा आयुष्य भी अब अल्प शेष है।'

उन्होंने आँखें खोली, आर्यरक्षित के सामने देखा और बोले :

'वत्स, गच्छ त्वं, मिथ्यादुष्कृतमस्तु ते।'

'हे वत्स, तू जा सकता है, मेरा तुझे 'मिच्छामि दुक्कडं है।'

आर्यरक्षित की आँखें भर आई। उन्होंने वज्रस्वामी के चरणों में अपना मस्तक रख दिया। रो पड़े वे। गुरुदेव को 'मिच्छामि दुक्कडं' दिया, आशीर्वाद लिया और फल्गुरक्षित के साथ उन्होंने दशपुर की ओर विहार कर दिया।

जिनशासन की कितनी सुन्दर आचारसंहिता है!

वज्रस्वामी जैसे महान् आचार्य.... जब शिष्य जा रहा है, शिष्य को 'मिच्छामि दुक्कडं' देते हैं! क्षमायाचना करते हैं! अध्यापन कराने में कभी शिष्य को उपालंभ देना पड़ता है, कभी दो कटु शब्द भी कहने पड़ते हैं, शिष्य के मन को दुःख होता है....अब, जब वह जा रहा है तो क्षमायाचना करते हैं! कैसी नम्रता? कैसी लघुता?

वास्तविकता जानने से राग-द्वेष कम होते हैं :

श्री आर्यरक्षित तीन-तीन बार पूछने गये - 'अब अध्ययन कितना शेष है.... तो वज्रस्वामी नाराज नहीं हुए, आक्रोश नहीं किया....परंतु ज्ञानोपयोग देकर आर्यरक्षित का भविष्य देखा! अपने को आये हुए स्वप्न को याद किया....! 'यह अब ज्यादा पढ़ नहीं सकता....' ऐसा निर्णय किया।

कुछ ऐसा विचार आया होगा कि 'अभी वह जाता है जाने दूँ, पुनः लौटकर आयेगा या नहीं? उस समय मेरा जीवन होगा या नहीं?' उन्होंने श्रुतबल से अपना आयुष्य देखा! शेष आयुष्य कम ही था! उन्होंने आशा छोड़ दी आर्यरक्षित को पुनः आगे अध्ययन कराने की। समत्व धारण किया और आर्यरक्षित को हार्दिक आशीर्वाद देकर विदा दी। वास्तविकता को जान लेने पर राग-द्वेष नहीं होते। सच्चे कार्यकारण-भाव को जान लेने पर समत्व की आराधना सरल बन जाती है।

श्री आर्यरक्षित सीधे दशपुर नहीं गये। अपने गुरुदेव श्री तोसलीपुत्र आचार्य को वंदन करने पाटलीपुत्र गये। श्री तोसलीपुत्र उस समय पाटलीपुत्र में बिराजमान थे। पाटलीपुत्र पहुँचे। गुरुदेव के चरणों में मस्तक रख दिया। गुरुदेव ने वात्सल्य

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बरसाया। तोसलीपुत्र बहुत वृद्ध हो गये थे। उन्होंने भी श्रुतोपयोग से अपना शेष आयुष्य जान लिया था। उन्होंने वात्सल्यपूर्ण शब्दों में कहा :

'वत्स, मैं तुझे आचार्यपद पर स्थापित करना चाहता हूँ। मेरा आयुष्य अल्प है। जिनशासन का तू महान् प्रभावक और संघाधार होनेवाला है।'

श्री आर्यरक्षित को गुरुदेव ने आचार्यपद प्रदान किया। अपना उत्तराधिकारी बनाया। आर्यरक्षित ने गुरुदेव को माता का आदेश कह सुनाया। गुरुदेव ने कहा :

'तेरे जाने से परिवार का आत्मकल्याण होगा। तुझे जाना चाहिए, परन्तु अब तू मुझे नहीं मिल सकेगा।' गुरु-शिष्य ने परस्पर क्षमापना कर ली। गुरुदेव की आज्ञा लेकर आर्यरक्षितसूरिजी दशपुर की ओर चल पड़े।

श्री आर्यरक्षित को कुछ पूर्वों का ज्ञान तोसलीपुत्र ने दिया था, कुछ पूर्वों का ज्ञान श्री भद्रगुप्ताचार्य ने दिया था ओर दशवें आधे पूर्व का ज्ञान श्री वज्रस्वामी ने दिया था। इस प्रकार दृष्टिवाद का बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त कर वे माता के पास जा रहे थे। 'दृष्टिवाद' के अन्तर्गत १४ पूर्वों का समावेश है। आर्यरक्षित ने साढ़े नौ पूर्वों का ज्ञान सम्पादन किया था। उस काल में १० पूर्वों से ज्यादा ज्ञान किसी महापुरुष के पास नहीं था।

जब अन्य मुनिवृन्द के साथ आर्यरक्षितसूरि फल्गुरक्षित मुनि सहित दशपुर के बाह्य प्रदेश में पहुँचे, फल्गुरक्षित ने कहा 'गुरुदेव, मैं पहले नगर में जाकर माता को शुभ समाचार देना चाहता हूँ....चूँकि उनका संदेश लेकर मैं ही आपके पास आया था, इसलिए मुझे ही पहले शुभ समाचार देना चाहिए।'

फल्गुरक्षित मुनि त्वरा से नगर में पहुँचे। अपने घर पर गये। माता रुद्रसोमा से कहा :

'वर्द्धये वर्द्धये मातर! गुरुस्तत्सुत आगमत्!'

'हे माता, मैं आपको शुभ समाचार देता हूँ। मेरे गुरु और आपके पुत्र यहाँ आ गये हैं।'

रुद्रसोमा रोमांचित हो गई! फल्गुरक्षित की बलैयाँ लीं। आँखों में हर्ष के आँसू भर आये। गद्गद् स्वर में पूछा :

'कहाँ है वह मेरा लाड़ला?'

'मैं यहाँ हूँ माँ!' आर्यरक्षितसूरि ने उसी समय गृह में प्रवेश किया।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रुद्रसोमा आर्यरक्षित को विस्फारित नयनों से देखती रही। प्रेम और आदर था रुद्रसोमा के नयनों में! अपने पुत्र को जैन साधु के वेश में देखकर उत्कट रोमांच का अनुभव करती हुई रुद्रसोमा....घर में जाकर सोमदेव को बुला लाई। सोमदेव अपने दो पुत्रों को जैनसाधु के वेश में देखते हैं परन्तु उनके हृदय में किसी वेश के प्रति द्वेष नहीं था। पुत्रस्नेह से उनका हृदय भर आया और उन्होंने आर्यरक्षित को अपने बाहुपाश में जकड़ लिया। आँखें हर्षाश्रु से छलकने लगीं। उन्होंने कहा :

'हे वत्स, तू क्यों शीघ्र नगर में आ गया? मैं तेरा प्रवेश-महोत्सव मनाता....! परन्तु हाँ, अपनी विरहव्याकुल माता को मिलने की उत्सुकता होगी! समझ गया! परन्तु, अभी तू वापस नगर के बाह्योद्यान में चला जा। मैं जाकर राजा को निवेदन करता हूँ। नगरजनों के भव्य उल्लास के साथ तेरा स्वागत करवाऊँगा। फिर, घर आकर इस श्रमण-वेश का त्याग कर देना और गृहस्थाश्रम का पालन करना। मैंने तेरे लिए एक अच्छे खानदान घराने की सुशील कन्या भी देखी हुई है। तू उससे शादी करना....जिससे तेरी माँ भी खुश होगी। धनार्जन करने का पुरुषार्थ करने की आवश्यकता नहीं है.... क्योंकि मेरे पास अपनी सात पीढ़ी तक भी कम नहीं हो उतनी सम्पत्ति है। राजसभा में पुरोहित-पद पर महाराजा तुझे स्थापित करेंगे। मुझसे भी तू सवाया पुरोहित सिद्ध होगा। तेरी ज्ञानश्री तुझे सारे देश में प्रसिद्ध करेगी। संसार के सभी सुख तुझे प्राप्त होंगे! मैं और तेरी माता, हम वानप्रस्थाश्रम को स्वीकार करेंगे।'

कोई संबंध शाश्वत् नहीं है :

श्री आर्यरक्षित पिता के रागभरे....मोहभरे वचन सुनते रहे। वे जानते थे कि पिता का पुत्रस्नेह ही ऐसे वचन बुलवा रहा है। पिता का स्वजनमोह-पुत्रमोह दूर करने की दृष्टि से उन्होंने कहा :

'हे तात, प्रति जन्म में माता....पिता....भ्राता....पुत्री....पुत्र.... वगैरह प्राप्त होते हैं। पशुयोनि में भी यह सब प्राप्त होता है....। विद्वान् पुरुष....ज्ञानी पुरुष इन संबंधों में मोह नहीं कर सकता। कोई संबंध शाश्वत् नहीं है, कोई संबंध अविनाशी नहीं है। '**संयोगाः वियोगान्ता**', संयोग का वियोग होता ही है। इसलिए आप पुत्रस्नेह में बंधें नहीं। आप जन्मजन्मान्तर की दृष्टि से सोचें। माता मरकर पुत्री बनती है....बहन बनती है....भार्या बनती है....। पुत्र मरकर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पिता...भाई और शत्रु भी बनता है! संबंधों की ऐसी विषमता है....तो फिर क्यों स्वजनमोह रखना?

हे तात, संपत्ति का गर्व भी करने जैसा नहीं है। राजा की कृपा से, उसके भृत्य-नौकर बनकर प्राप्त किए हुए धन पर गर्व कैसा? ऐसे धन पर श्रद्धा कैसी? अर्थ तो अनर्थ का हेतु है! अर्थ अनेक उपद्रवों का हेतु है। संपत्ति चंचल है। कर्मों का खेल है। क्षणपूर्व जो रंक होता है वह क्षण के बाद राजा बनता है और क्षणपूर्व जो राजा होता है वह क्षण के बाद रंक बन जाता है! इसलिए संपत्ति के भरोसे नहीं रहना चाहिए। आप तो विद्वान् हैं, विचक्षण ब्राह्मण हैं। इस जगत् को मिथ्या जानते हैं....सत्य एक मात्र आत्मा है। आत्मा के अलावा सारा जगत् मिथ्या है।

अर्थ और कामपुरुषार्थ में ही जीवन पूरा करोगे क्या?

'हे उपकारी, इस मानवजीवन का मूल्य आप समझते हैं। अर्थपुरुषार्थ और कामपुरुषार्थ में ही इस मानवजीवन को पूरा करना है क्या? शास्त्राध्ययन भी आपने अर्थप्राप्ति के लिए किया न? शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर आत्मकल्याण का पुरुषार्थ करना चाहिए, जिससे मानवजीवन सफल बन जाय। मृत्यु के बाद आत्मा सद्गति को प्राप्त करे। मात्र गृहस्थावास में ही जीवन बिता देने से तो आत्मा का अहित होता है। और, आप तो वानप्रस्थाश्रम स्वीकारने की भावना रखते हैं, संसार के कार्यों से निवृत्त होना चाहते हैं....तो फिर आप ऐसा साधुजीवन क्यों नहीं लेते? क्यों सर्वसंग का त्याग करके श्रमण नहीं बनते?

आप प्रज्ञावंत हैं, शास्त्रज्ञ हैं, मेरी बात पर गंभीरता से सोचें। विनाशी विषयसुखों के लिए अविनाशी आत्मा को भूलने की भूल नहीं करें। क्षणिक सुखों के मोह में शाश्वत् आत्मा के उद्धार का पुरुषार्थ नहीं चूकें। आप अपने मन को मोहवासना से मुक्त करें। निर्मल मन से इन बातों पर चिन्तन करें।

आपने मुझे गृहस्थाश्रम में लौटने की बात कही, यह संभवित नहीं है। जिन वैषयिक भोगसुखों का मैंने त्याग कर दिया है, उन वैषयिक सुखों के प्रति मेरी जरा भी इच्छा नहीं है....तनिक भी राग नहीं है। मुझे यह श्रमण जीवन प्यारा हैं, मैं इस जीवन में संतुष्ट हूँ। मुझे इसी जीवनचर्या में शान्ति मिलती है।

मैं यहाँ मात्र आपसे या मेरी उपकारिणी माता से मिलने नहीं आया हूँ। मैं आप सभी को मोक्षमार्ग देने आया हूँ। 'दृष्टिवाद' का अध्ययन अधूरा छोड़कर आया हूँ। मैं यहाँ कैसे रह सकता हूँ? आपने ही कहा था कि 'सत्पुरुष

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्राणान्त में अपने स्वीकृत सत्य का त्याग नहीं करते।' मैं कैसे इस श्रामण्य का-साधुता का त्याग करूँ?

हाँ, यदि आप सबका मेरे प्रति स्नेह है, प्रेम है, तो आप सभी श्रामण्य को स्वीकार करें। मोक्षमार्ग पर चलें, तो मैं आनन्दित बनूँगा। आपके अपार उपकारों का तनिक भी प्रत्युपकार करने का आश्वासन लूँगा।

सोमदेव ने कहा : 'वत्स, तेरी बातें सच्ची हैं। मैं तो अभी ही तेरा यह दुष्कर श्रमण जीवन अंगीकार करने को तैयार हूँ, परन्तु तेरी यह माता तो गृहस्थावास में रत है। पुत्री-दामाद-बच्चे....वगैरह के लालनपालन में निमग्न है। वह कैसे भवसागर तैर सकती है? वह कैसे साध्वी बन सकती है?'

पिता के वचनों से आर्यरक्षित का चित्त प्रसन्न हुआ। वह सोचते हैं : 'मिथ्यात्व से मोहित पिताजी यदि प्रबुद्ध बनें तो उनकी आत्मा उज्ज्वल बन जाय। माता तो बुद्ध है ही। उनके पुण्यप्रभाव से तो मुझे यह मोक्षमार्ग मिला है!'

आर्यरक्षित ने माता के सामने देखा और कहा : 'हे जननी! पिताजी की बात सोचने जैसी है। वे तुझे दुर्बोधा समझते हैं! मैं तुझे ज्ञानमहोदधि मानता हूँ। तेरे पास ज्ञान का प्रकाश है। तू महासत्त्वा है। तेरी ही कृपा से मैंने 'दृष्टिवाद' का ज्ञान पाया है....इस मोक्षमार्ग को पाया है और तेरी ही कृपा से मुझे श्री वज्रस्वामी जैसे विद्यागुरु मिल गये! १० पूर्वों का जिनके पास ज्ञान है और दिव्य शक्तियों के जो भंडार हैं।

'हे माता, धन्य है श्री वज्रस्वामी की माता सुनन्दा को! जिसने वज्र जैसे पुत्र को जन्म दिया! जब पुत्र ज्यादा रोने लगा, तब छह महीने की उम्र के पुत्र को दे दिया उसके पिता मुनिराज को! हाँ, जब वज्र माता के उदर में थे तभी उसके पिता श्रमण बन गये थे। तीन वर्ष की उम्र तक वे साध्वीजी के उपाश्रय में रहे। बाद में सुनन्दा ने पुत्र को वापस लेने के लिए झगड़ा किया....परन्तु वज्रस्वामी ने गुरु के पास ही रहने का निर्णय किया था। राजा ने फैसला दे दिया कि 'वज्र गुरुदेव के पास रहेगा!'

'मैं तुझे सुनन्दा से भी बढ़कर माता मानता हूँ। तूने स्वयं मुझे श्री तोसलीपुत्र आचार्यदेव के पास भेजा! तूने मुझ पर निःसीम उपकार किया!'

माता ने कहा : 'हे वत्स, तेरे सरल हृदयी पिताजी सत्य कहते हैं। वास्तव में मैं कुटुम्बपालन में व्यग्र हूँ और आर्त हूँ। महाव्रतों का पालन करने के लिए मैं कैसे समर्थ बनूँ? परन्तु तेरे प्रति मेरा अपार स्नेह है। तू मुझे ही सर्वप्रथम

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जैनी दीक्षा दे दे। यदि मैं लूँगी तो मेरे प्रति अत्यन्त स्नेहशील परिवार भी दीक्षा ग्रहण करेगा।'

श्री आर्यरक्षित ने कहा : 'हे माता! इस लोक में तू ही तीर्थ है। जैसे तू कहती है वैसे तुझे मैं दीक्षा दूँगा।'

श्री आर्यरक्षितसूरिजी ने माता को दीक्षा दे दी। रुद्रसोमा के साथ-साथ सोमदेव ने भी दीक्षा ली। पुत्री और दामाद ने भी दीक्षा ली। सारा परिवार दीक्षित बन गया।

कैसा स्नेह, सरलता और सहिष्णुता से सुशोभित परिवार होगा! आर्यरक्षित के प्रति सारे परिवार को स्नेह था! रुद्रसोमा के प्रति सारे परिवार को प्रेम था! एक-दूसरे के धर्म भिन्न होते हुए भी परस्पर प्रेम था! चूँकि वे लोग सरल थे। सहिष्णु थे। इन मौलिक गुणों ने इस परिवार को चारित्री बनाया।

रुद्रसोमा और सोमदेव ने संतानों के प्रति अपने कर्तव्यों का कैसा सुन्दर पालन किया होगा? कैसे सुसंस्कारों का सिंचन किया होगा? संतानों के प्रति माता-पिता के जो कर्तव्य हैं, उन कर्तव्यों का पालन माता-पिता को करना ही चाहिए।

१. संतानों का पालन।

२. संतानों को शिक्षादान।

३. देव-गुरु-धर्म से परिचय।

४. स्वजनों का परिचय।

५. उत्तम व्यक्तियों के साथ मैत्री।

संतानों का पालन करते समय, जब वे बच्चे होते हैं, बड़ा ख्याल रखना चाहिए। कैसे वस्त्र पहनना, कैसे खाना-पीना, कैसे बोलना....ये सारी प्राथमिक बातें बच्चे छोटे होते हैं तभी सीखते हैं। माता सुशिक्षित होगी, जीवन जीने की दृष्टि उसके पास होगी तो ही वह संतानों को प्रशिक्षित कर सकेगी। छोटे छोटे बच्चों को कभी गालियाँ बोलते सुनता हूँ....तो मेरा मन खिन्न हो जाता है। घर में माता-पिता स्वयं गालियाँ बोलते हों तो बच्चें भी वैसी ही भाषा सीखेंगे न?

जब बच्चों में बुद्धि आती है तब उनको व्यावहारिक शिक्षा देनी चाहिए। व्यावहारिक शिक्षा का प्रश्न विकट बन गया है। शिक्षा का स्तर आज गिर गया

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

है। विद्यालयों का वातावरण दूषित हो गया है। छात्रों में अनुशासन नहीं रहा है। अध्ययन का रस कम होता जा रहा है।

आज की शिक्षा : न तो आत्मलक्षी, न व्यवहारलक्षी :

शिक्षा आत्मलक्षी तो नहीं, व्यवसायलक्षी भी नहीं रही है। इसलिए शिक्षित बेकारों की संख्या बढ़ती जा रही है। परिस्थिति बिगड़ती जा रही है। नैतिक और धार्मिक मूल्यों का नाश हो रहा है। अनैतिकता और पापाचार बढ़ते जा रहे हैं। इस परिस्थिति में से बचने के लिए जाग्रत माता-पिता को अपने संतानों को परमात्मभक्ति की ओर मोड़ना चाहिए। साधुपुरुषों के संपर्क में लाना चाहिए और नैतिक-धार्मिक ज्ञान देना चाहिए। यह काम भी माता-पिता तभी कर सकेंगे, जब वे स्वयं उद्‌बुद्ध होंगे। संतानों का हित उनके हृदय में बसा होगा। वे स्वयं नैतिक और धार्मिक मूल्यों का आदर करते होंगे। उनमें परलोक-दृष्टि होगी।

संतानों को स्वजनों का परिचय कराना चाहिए। जो स्वजन हितकारी बातें करते हों, कल्याणकारी बातें करते हों....वैसे स्वजनों से परिचय करना चाहिए। हाँ, वे स्वजन व्यसनी नहीं होने चाहिए। पापाचारी नहीं होने चाहिए, इतनी सावधानी बरतनी होगी। जैसा संपर्क और संसर्ग होगा वैसे गुण-दोष आते हैं व्यक्ति के जीवन में। इसलिए संतानों की उत्तम पुरुषों के साथ मैत्री करानी चाहिए।

सन्तानों के मित्रों के प्रति जाग्रत रहना :

व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में 'मैत्री' महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। आपका लड़का कैसे लड़कों के साथ मैत्री रखता है-आप लोग ध्यान रखते हो? आपकी लड़की कैसी लड़कियों के साथ मैत्री रखती है, आप जानते हो? ध्यान रखते हो? आप यदि इस गंभीर बात का भी ख्याल नहीं रखोगे तो आपकी संतानें मातृपूजक और पितृपूजक कभी नहीं बन सकतीं।

सभा में से : जब हम लड़के-लड़कियों को कहते हैं कि 'तुम ऐसे-ऐसे लड़कों से, लड़कियों से मैत्री नहीं रखो।' तब वे कहते हैं : 'किससे मैत्री रखनी और किससे नहीं रखनी, वह हम समझते हैं। आपको हमारी व्यक्तिगत बातों में नहीं आना चाहिए....'

महाराजश्री : ऐसा उत्तर तो जब लड़के या लड़कियाँ बड़े होते हैं तब देते

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होंगे? मेरा कहना तो यह है कि जब वे छोटे होते हैं, किशोरावस्था में होते हैं, तब से आप ध्यान देते रहें। आपकी बात छोटे बच्चे और किशोर तो मानते हैं न? उनको अच्छे मित्र बताते रहो।

हालाँकि जिन विद्यालयों में-महाविद्यालयों में लड़के-लड़कियाँ पढ़ने जाते हैं वहाँ का वातावरण ही दूषित है। व्यसन-फैशन और अनुकरण....! वहाँ मित्र, अच्छे मित्र मिलने दुर्लभ होते हैं। अनेक बुराइयाँ 'फैशन' के नाम पर वहाँ खुल्लंखुल्ला चलती हैं। 'चरित्र' जैसी कोई बात वहाँ देखने को मिलती नहीं है। ऐसी स्कूल-कॉलेजों में आप अपनी संतानों को भेजते हैं....फिर वे मातृपूजक-पितृपूजक कैसे बनेंगे?

माता-पिता के पूजन की 'ब्ल्यू प्रिन्ट' :

माता-पिता के प्रति उनके कर्तव्य समझाने पर भी उनके दिमाग में वे बातें जँचती नहीं हैं। चूँकि उनका पालन ही विपरीत परिस्थिति में हुआ है। माता-पिता ने अपनी महत्ता खो दी हो, वैसा लगता है।

फिर भी, जिन संतानों को सुसंस्कार मिले हैं और मातृपूजक एवं पितृपूजक बनना है, उनको निम्न प्रकार कर्तव्यों का पालन करना चाहिए :

१. आन्तरिक प्रीति के साथ पादप्रक्षालन।

२. वृद्ध माता-पिता को समय पर भोजन देना, वस्त्र देना, शय्या देना, स्नान कराना वगैरह।

३. सेवा स्वयं करना, नौकरों से नहीं करवाना।

४. उनके वचनों को-आदेशों को आदर से ग्रहण करना।

५. सभी कार्यों में उनसे पूछना, पूछकर कार्य करना।

६. माता-पिता के सभी धार्मिक मनोरथों को यथाशक्ति पूर्ण करना।

जैसे प्रभुपूजा, तीर्थयात्रा, धर्मश्रवण, सात क्षेत्रों में अर्थव्यय।

आर्हत धर्म की आराधना में माता-पिता को जोड़ना और सहायक बनना- इसके अलावा अत्यंत दुष्प्रतिकार्य ऐसे माता-पिता के उपकारों का बदला चुकाया जा नहीं सकता। इसलिए वयोवृद्ध माता-पिता को बड़े आदर से - बहुमान से धर्म-आराधना में जोड़ने का प्रयत्न करें।

सभा में से : हम माता-पिता को धर्म-आराधना करने को कहें, फिर भी वे नहीं करें और संसार के प्रपंचों में ही डूबे रहें तो हम क्या करें?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

महाराजश्री : तो मौन रहना, परन्तु झगड़ा नहीं करना। बलात्कार से माता-पिता को धर्म नहीं कराया जाता है। यदि माता-पिता धर्माराधना करना चाहते हों तो उनकी इच्छा पूर्ण करना।

दो बातें हैं :

१. माता-पिता संतानों के प्रति कर्तव्यों का पालन करें।

२. संतानें माता-पिता के प्रति कर्तव्यों का पालन करें।

दोनों पक्षों में वात्सल्य, स्नेह, भक्ति, कृतज्ञता और प्रत्युपकार के उच्चतम भाव होने चाहिए। द्वेष, धिक्कार, अविनय, औद्धत्य और अनादर जैसे दोष नहीं होने चाहिए।

इस प्रकार माता-पिता के पूजन के विषय में विस्तृत विवेचना की है। यह सोलहवाँ सामान्य धर्म असाधारण धर्म है। विशिष्ट धर्म है, यह मत भूलना। सभी संतानें मातृपूजक बनें, यही शुभेच्छा।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***तुम अशांत हो तो उसका कारण स्वयं तुम हो! तुम दूसरों को अशांत बनाते होगे! तुम औरों के लिए बुरा-अहितकारी सोच रहे होगे!***
- ***जो दूसरों की प्रगति नहीं सहन कर पाते हैं, औरों की प्रशंसा नहीं सुन पाते हैं, वैसे लोग दूसरों के उद्वेग और खेद में निमित्त बनते ही रहते हैं।***
- ***तुम्हारे साथ अन्याय करनेवाले का भी बुरा मत सोचो। तुम्हारा नुकसान करनेवाले पर भी गुस्सा मत करो। दुःख के समय में दीन-हीन कल्पनाएँ कर-करके दिमाग को खराब मत करो।***
- ***कभी अनिवार्य संजोगों में उग्र या ऊँची आवाज में कुछ बातें साफ-साफ कहनी भी पड़ें.... तो कहो जरूर, पर तुरन्त ही सामनेवाले व्यक्ति के मानसिक उद्वेग को दूर करने का प्रयत्न करो।***
- ***कोई तुम्हें जानबूझकर हैरान कर रहा हो....उस समय भी न तो चित्त का संतुलन गँवाना है, न ही द्वेष को पनपने देना है!***

प्रवचन : ६७

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्य श्री हरिभद्रसूरिजी स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हुए सत्रहवाँ सामान्य धर्म बताते हैं 'अनुद्वेगजनीया प्रवृत्ति।'

किसी जीवात्मा को उद्वेग न हो वैसी प्रवृत्ति करनी चाहिए।

उद्वेग का अर्थ है अशान्ति, उद्वेग का अर्थ है संताप। मन से, वाणी से और काया से वैसी प्रवृत्ति नहीं करनी चाहिए। किसी आत्मा को संताप हो, अशान्ति हो वैसे विचार भी नहीं करने चाहिए। विचार से ही आचार का जन्म होता है। वृत्ति में से प्रवृत्ति पैदा होती है। इसलिए विचारों का परिवर्तन करना चाहिए, वृत्तियों का संशोधन करना चाहिए।

जैसा बोओगे वैसा काटोगे :

लोग अपने परिवार के हों या दूसरे हों, किसी के लिए अहितकारी विचार नहीं करने चाहिए। यदि वैसे अहितकारी विचार मनुष्य करता है तो उसको कहीं पर भी समता-समाधि प्राप्त नहीं होगी। सभी प्रवृत्ति का समान फल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मिलता है। दूसरों को शान्ति, समता, समाधि दोगे तो आपको भी शान्ति, समता, समाधि मिलेगी। दूसरों को अशान्ति, उद्वेग और संताप दोगे तो आपको भी अशान्ति, उद्वेग और संताप प्राप्त होगा।

यदि आप अशान्त हैं तो उसका कारण आप ही हैं। आप दूसरों को अशान्ति देते होंगे! आप दूसरों के लिए अहितकारी विचार करते होंगे। आप आन्तरिक निरीक्षण करना, आत्म-साक्षी से सोचना। यदि आप उद्विग्न रहते हैं तो उसका कारण आपके अहितकारी विचार हैं, यह बात आपको माननी पड़ेगी।

आपके विचार उद्वेगपूर्ण होंगे तो आपकी वाणी भी दूसरों को उद्वेग करानेवाली होगी, आपका व्यवहार भी उद्वेगजनक होगा। मन-वचन-काया से आप दूसरों को अशान्ति देंगे तो आपको शान्ति मिलनेवाली नहीं है।

पहला प्रश्न तो यह है कि आप स्वयं अपने मन की शान्ति चाहते हैं? आप प्रसन्नता चाहते हैं? आप प्रशान्त भाव चाहते हैं? यदि आप चाहते हैं, सच्चे हृदय से चाहते हैं तो वह प्राप्त करने का सरल उपाय यह है कि आप काया से और वाणी से तो नहीं, मन से भी किसी को अशान्ति न दें।

अज्ञानी के प्रति दया रखो :

सभा में से : दूसरे लोग जो कि अपने हों या पराये, हमें अशान्ति देते हैं, हमारे मन को उद्विग्न करते हैं, तब हमसे सहा नहीं जाता है।

महाराजश्री : सहनशीलता को बढ़ाने का प्रयत्न करें। अज्ञानी जीवों की प्रवृत्ति तो वैसी ही रहेगी! आप उनको क्षमा करते रहें। उनको सौम्य भाषा में समझाने का प्रयत्न करें। फिर भी न समझें तो उपेक्षा कर दें उनकी। एक बात समझ लें कि जो स्वयं अशान्त होते हैं, संतप्त होते हैं वे ही दूसरों की अशान्ति पैदा करते हैं। ऐसे जीवों के प्रति करुणा से देखें। 'ये लोग कितने अशान्त हैं, बेचैन हैं, चंचल हैं....? अन्तरात्मा से कितने दुःखी हैं? उनको शान्ति मिले, समता मिले, समाधि प्राप्त हो....।' ऐसे विचार करें।

जो मनुष्य दूसरों की कटुवाणी सुनने पर और अभद्र व्यवहार होने पर अपने आपको स्वस्थ और शान्त रख सकता है, वही मनुष्य दूसरों के लिए मन-वचन-काया से शुभ प्रवृत्ति कर सकता है। इतनी समझदारी तो होनी ही चाहिए। इतना सत्त्व तो होना ही चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अंगर्षि और रुद्रक :

इस विषय पर अभी-अभी एक प्राचीन कहानी मैंने पढ़ी। बहुत हृदयस्पर्शी कहानी है। 'चंपा' नाम का नगर था। उस नगर में कौशिकार्य नाम के एक विद्वान् पंडित थे। उनके पास दो छात्र पढ़ते थे। वे दोनों रहते भी थे कौशिकार्य के आश्रम में ही। एक का नाम था अंगर्षि और दूसरे का नाम था रुद्रक। अंगर्षि जो था वह सौम्यमूर्ति था। प्रियभाषी था। न्यायी, विनीत और सरल था। रुद्रक का व्यक्तित्व अंगर्षि से बिलकुल भिन्न था। उपाध्याय जब अंगर्षि की प्रशंसा करते तब रुद्रक जलता था। अंगर्षि के दोष देखने में तत्पर रहता था.... परन्तु दोष दिखे तब न? ऐसे लोग अशान्त ही रहते हैं। व्याकुल और संतप्त ही रहते हैं। क्योंकि ये लोग सदैव अशुभ चिन्तन में....दूसरों के अहित के विचारों में उलझे हुए रहते हैं। गुणवानों की ईर्ष्या करना और उनको गिराने की प्रवृत्ति करना - यही उनका कार्य होता है।

दूसरों का उत्कर्ष जो सहन नहीं कर सकते हैं, दूसरों की प्रशंसा जो सुन नहीं सकते हैं....ऐसे लोग दूसरों के उद्वेग में निमित्त बनते ही रहते हैं। रुद्रक का व्यक्तित्व ऐसा ही था। जबकि अंगर्षि गुणसमृद्ध छात्र था। उपाध्याय के प्रति संपूर्ण समर्पित छात्र था।

एक दिन उपाध्याय कौशिकार्य ने प्रातः दोनों छात्रों को अपने पास बुलाकर कहा कि 'तुम जंगल में जाओ और ईन्धन ले कर आओ।'

अंगर्षि ने उपाध्याय की आज्ञा को आदर सहित स्वीकार किया और जंगल की ओर चल पड़ा। रुद्रक को उपाध्याय की आज्ञा पसन्द नहीं आयी.... परन्तु काम तो करना ही था! यदि इनकार कर दे तो उपाध्याय उसको निकाल दें अपने घर में से। वह भी घर से निकला.... परन्तु रास्ते में ही एक देवकुलिका में कुछ लोगों को जुआ खेलते देखा....और वह वहाँ जाकर बैठ गया। मध्याह्न होने तक वहाँ बैठा रहा। गुर्वाज्ञा को भूल गया! गुरु के प्रति बहुमान का भाव हो, तो गुर्वाज्ञा याद रहे न? उसके हृदय में गुरु के प्रति आदर ही नहीं था....! मध्याह्न के बाद गुर्वाज्ञा याद आयी। वह जंगल की तरफ चल पड़ा। उसने सामने से आते हुए अंगर्षि को देखा। अंगर्षि ईन्धन लेकर घर जा रहा था। रुद्रक को भय लगा। 'यह अंगर्षि उपाध्याय के पास मुझ से पहले पहुँच जायेगा और कह देगा कि रुद्रक तो अभी-अभी ही जंगल में जा रहा था....।' तो उपाध्याय मेरे प्रति रोषायमान होंगे? वह त्वरा से आगे बढ़ा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रास्ते में उसने एक वृद्धा स्त्री को देखा। उसके सिर पर ईन्धन का बड़ा गट्ठर था। वह बेचारी वृद्धा अपने पुत्र को भोजन देकर, लकड़ी का गट्ठर उठाकर गाँव की ओर जा रही थी।

रुद्रक के मन में क्रूर विचार आ गये। 'इस वृद्धा को मार कर तैयार गट्ठर मैं ले लूँ, तो शीघ्र ही मैं घर पहुँच जाऊँगा।' उसने वृद्धा को मार डाला.... काष्ठभार ले लिया और दूसरे रास्ते से शीघ्र उपाध्याय के घर पहुँच गया। जाकर उपाध्याय से कहता है :

'गुरुजी! आपके प्रिय शिष्य की कहानी सुन लीजिए! वह मुझे अभी-अभी जंगल में मिला। बैठा होगा कहीं पर....खेलता रहा होगा मध्याह्न तक। जंगल में जाकर एक वृद्धा को मार डाला और उसके काष्ठ लेकर वह आ रहा होगा! देखो, वह आ रहा....!'

रुद्रक ने बात पूर्ण की और अंगर्षि ने काष्ठभार के साथ घर में प्रवेश किया। उपाध्याय तो रुद्रक की बात को सत्य मान कर अत्यन्त रोषायमान हो गये थे। ज्योंही अंगर्षि ने घर में प्रवेश किया....उपाध्याय बरस पड़े : 'हे पापी, तेरा मुँह भी मैं देखना नहीं चाहता....चला जा यहाँ से....! मैंने तुझे अच्छा, सुशील और दयालु छात्र माना था पर तू तो हत्यारा निकला....।' घोर भर्त्सना की अंगर्षि की। उसको निकाल दिया अपने घर से।

परन्तु यह तो अंगर्षि था! शान्त समुद्र जैसा सौम्य था। उपाध्याय के प्रति तनिक भी रोष नहीं किया। नगर से दूर एक वृक्ष की छाया में जाकर बैठा। सोचने लगा :

अंगर्षि का आत्मनिरीक्षण :

'आज यह क्या हो गया? चन्द्र में से आगवर्षा हुई? मेरे इन उपाध्याय के मुख में से कभी भी ऐसे परुष....कठोर वचन मैंने नहीं सुने हैं। उपाध्याय तो श्रेष्ठ प्रियभाषी हैं। ऐसा क्यों हुआ? ऐसा मेरा कौन-सा बड़ा अपराध हुआ? मेरे अपराध के बिना तो उपाध्याय मेरे प्रति इतने रोषायमान हो नहीं सकते!'

अंगर्षि ने अपने अपराध को ढूँढ़ा! परन्तु कोई अपराध नजर नहीं आया। वह सोचने लगा : 'मुझे मेरा ऐसा कोई दुष्कृत्य याद नहीं आ रहा....। तो भी धिक्कार हो मुझे....कि मैं गुरुदेव को उद्वेग करानेवाला बना। मेरे निमित्त आज उनको कितना क्लेश हुआ? वे धन्य शिष्य हैं कि जो गुरु के चित्त में प्रीति पैदा करते हैं। जो दूसरों को समता-समाधि प्रदान करते हैं।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अंगर्षि के चिन्तन को ध्यान से सुना न? उत्तम आत्माओं का चिन्तन इस प्रकार का होता है। यदि आप लोग कुछ सोचें-समझें तो कल्याण हो जाय। अंगर्षि ने उपाध्याय का दोष नहीं देखा और रुद्रक के प्रति शंका भी नहीं की। रास्ते में रुद्रक ईन्धन लिये बिना ही उसको मिला था न? तो वह शंका नहीं कर सकता था क्या? क्यों करता शंका? शंका करता भी, तो भी सबूत क्या था कि उस वृद्धा की हत्या रूद्रक ने की थी? उपाध्याय अंगर्षि की बात मानते ही, ऐसी भी बात नहीं थी।

महत्त्व की बात सोचियेगा :

सभा में से : उपाध्याय ने क्या अंगर्षि का व्यक्तित्व नहीं जाना था? 'अंगर्षि किसी जीव की हत्या नहीं कर सकता,' ऐसा विचार क्यों नहीं आया उपाध्याय को?

महाराजश्री : प्रिय शिष्य का भी कभी पापोदय ऐसा आता है कि गुरु उसके निर्मल....स्वच्छ व्यक्तित्व को भूल जाते हैं और निरपराधी होने पर भी अपराध उस पर थोप देते हैं। बनता है ऐसा। सीताजी के प्रति श्रीराम ने ऐसा ही अपराध किया था न? 'सीताजी महासती है,' ऐसा उद्घोष देवों ने जब किया था तब श्रीराम ने नहीं सुना था क्या? तो भी लोगों की बात सुनकर सीताजी का जंगल में त्याग करवा दिया था न?

बात महत्त्व की वह नहीं है कि रामचन्द्रजी ने क्या किया, परंतु महत्त्व की बात यह है कि सीताजी ने क्या किया! उपाध्याय ने क्या किया यह महत्त्व की बात नहीं हे, अंगर्षि ने क्या किया, यह महत्त्वपूर्ण बात है। एक व्यक्ति का पापोदय आयेगा तब दूसरा निमित्तरूप अपराधी बनेगा ही! अंगर्षि का पापोदय हुआ और उस पर स्त्रीहत्या का कलंक आया। उस पर उपाध्याय नाराज हुए और उसको घर से निकाल दिया गया।

इतना कष्ट आने पर भी अंगर्षि के मन में उपाध्याय के लिए एक भी अशुभ विचार नहीं आया, उपाध्याय के प्रति रोष नहीं आया और अपने लिए हीनता की भावना नहीं जगी....ये बातें महत्त्वपूर्ण हैं। ये बातें जीवन में जीने की हैं।

१. अपने प्रति अन्याय करनेवालों के लिए भी बुरा नहीं सोचना।

२. अपना अहित करनेवालों के प्रति भी रोष नहीं करना।

३. दुःख में हीनभावना से भर नहीं जाना।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सभा में से : हम निरपराधी हैं, फिर भी हम अन्यायों को सहन करते रहें क्या? अन्यायों के सामने लड़ना नहीं चाहिए?

मुमुक्ष अपराधी को क्षमा कर देता है :

महाराजश्री : एक बात मत भूलो, कारण के बिना कार्य नहीं होता है। अपराध इस जीवन में नहीं किया होगा, पूर्वजन्म में किया होगा। अपने आपको निरपराधी मानने से पूर्व गंभीरता से सोचते रहो। दूसरों के प्रति अन्याय करना नहीं, परन्तु कोई आपके प्रति अन्याय से व्यवहार करे तो रोषायमान मत होना और वैर की भावना मत करना। याद रखें कि आपको मोक्षमार्ग पर चलना है, संसारवास से मुक्त होना है। संसारवास में रहने की इच्छावालों के विचार और संसारवास से मुक्त होने की भावनावालों के विचारों में बड़ा अन्तर होता है।

संसारवास के प्रेमी लोग अपराधी को सजा करने की सोचेंगे, संसारवास से विरक्त लोग अपराधी को क्षमा देने की सोचेंगे!

दुःख में हीनभावना नहीं आनी चाहिए, परन्तु अनित्यभावना, एकत्वभावना, अन्यत्वभावना और संसारभावना का चिन्तन करना चाहिए। इन भावनाओं का सतत अभ्यास, केवलज्ञान का असाधारण कारण बन जाता है।

अंगर्षि को केवलज्ञान :

अंगर्षि प्रशान्त बनते गये। विशुद्धतर भावनाओं में लीन होते गये। उनको 'जाति-स्मरण' ज्ञान प्रकट हो गया। अपने पूर्वजन्म की स्मृति हो आई। पूर्वजन्म में उन्होंने एकत्वादि भावनाओं का चिंतन-मनन बहुत किया हुआ था....वह चिंतन उभर आया और वे धर्मध्यान से शुक्लध्यान में चले गये। उनको केवलज्ञान प्राप्त हो गया। वीतराग बन गये अंगर्षि।

सर्वज्ञ-वीतराग बनने का मार्ग मिल गया न? होना है सर्वज्ञ? होना है वीतराग? जिस मार्ग पर चलकर अंगर्षि सर्वज्ञ-वीतराग बने, उस मार्ग पर चलकर अपन भी सर्वज्ञ-वीतराग बन सकते हैं।

मन में भी किसी के अहित का विचार नहीं करना चाहिए। अंगर्षि ने मन में भी उपाध्याय के लिए और रूद्रक के लिए बुरा नहीं सोचा। वचन तो बोलने की बात ही नहीं थी। काय से अहित करना असंभव ही था। उन्होंने अपने आपको स्वस्थ रखा, शान्त रखा....और धर्मध्यान में निमग्न बने। सर्वज्ञ-वीतराग बन गये।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

देवों ने प्रकट होकर श्रमणवेष समर्पित किया। महोत्सव मनाया और आकाशवाणी कर लोगों को सत्य समझाया : 'हे नगरवासी लोगो, महापापी रुद्रक ने ही वत्सपाल की माता की हत्या की है। उसने ही महात्मा अंगर्षि पर गलत आरोप मढ़ा है, इसलिए उस पापी का मुँह देखना भी पाप है, उससे बात करना भी पाप है। हम देवलोक के देव यह घोषणा करते हैं। महात्मा अंगर्षि को केवलज्ञान प्रकट हुआ है। वे सर्वज्ञ-वीतराग बने हैं। वे इसी भव में मोक्ष पायेंगे।'

उपाध्याय का घोर पश्चात्ताप :

देवों की घोषणा उपाध्याय ने भी सुनी। उपाध्याय पहले तो स्तब्ध हो गये। अपनी भयानक भूल ख्याल में आ गई। हृदय पश्चात्ताप के दावानल से जलने लगा। वे रो पड़े....फूट-फूटकर रोने लगे। मैं ज्ञानी नहीं हूँ....अज्ञानी हूँ....घोर अज्ञानी हूँ। मैं अविचारी हूँ। मैंने कुछ नहीं सोचा, रुद्रक की बात मान ली और महात्मा अंगर्षि पर बरस पड़ा, रोष किया, उसका तिरस्कार किया, घर से निकाल दिया....मैंने घोर पाप किया....। मैं संसारसागर में डूब जाऊँगा। मैं जाऊँ उन महात्मा के पास....जाकर क्षमायाचना करूँ....वे मुझे क्षमा दे देंगे....।

उपाध्याय नगरजनों के साथ महर्षि अंगर्षि के पास पहुँचे। चरणों में वंदना की। गद्गद् स्वर में क्षमायाचना की। केवलज्ञानी अंगर्षि ने सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्र्यरूप मोक्षमार्ग का उपदेश दिया। सरल और भद्रपरिणामी उपाध्याय ने ज्ञानप्रकाश पाया....उनकी आत्मा निर्मल बनी।

उधर नगर में लोगों ने रुद्रक की घोर भर्त्सना की। सभी जगह रुद्रक की निन्दा होने लगी। रुद्रक ने भी देववाणी सुनी थी। उसके हृदय में भी घोर पश्चात्ताप हुआ। 'मैं अधम हूँ....अधमाधम हूँ, घोर पापी हूँ। मुझे नर्क की सजा होनी चाहिए। मैं नगर के मध्यभाग में खड़ा रहूँ और नगर के लोग मुझे पत्थर मारते रहें....। नहीं....नहीं, मैं उस महात्मा अंगर्षि के पास जाऊँ....उनसे क्षमायाचना करूँ....। वे अब तो सर्वज्ञ-वीतराग बन गये हैं। पहले भी वीतराग जैसे ही थे....कितने प्रशान्त थे! कितने सरल....सदाचारी और सहनशील थे।'

रुद्रक को भी केवलज्ञान :

रुद्रक सर्वज्ञ अंगर्षि के पास गया। उनके चरणों में गिर पड़ा पुनः पुनः क्षमायाचना की। अंगर्षि ने उसको मोक्षमार्ग बताया। वहाँ खड़ा-खड़ा रुद्रक समताभाव में स्थिर बना। अनन्त-अनन्त कर्मों की निर्जरा होती रही। शुक्लध्यान

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

में प्रविष्ट हुआ....घातीकर्मों का नाश किया....रुद्रक भी सर्वज्ञ-वीतराग बन गया।

जिस प्रकार किसी के अहित का उद्वेगजनक विचार मन में नहीं करना है, वैसे किसी को उद्वेग हो, वैसे वचन भी नहीं बोलने हैं।

सभा में से : ऐसे वचन तो हम रोजाना बोलते रहते हैं। दूसरों की शान्ति-अशान्ति का विचार ही नहीं करते....दूसरों की प्रीति-अप्रीति का भी विचार नहीं करते।

महाराजश्री : इसलिए आप स्वयं अशान्त हैं, उद्विग्न हैं। आप वैसे वचन बोलने बंद कर दो और फिर देखो कि आपको शान्ति मिलती है या नहीं। आप अपनी वाणी पर संयम रखो तो सर्वप्रथम पारिवारिक शान्ति तो हो ही जाये। आप लोग अपने घर में परस्पर किस प्रकार का वाणी-व्यवहार करते हो? पत्नी के साथ, पुत्र-पुत्री के साथ, भाइयों के साथ, माता-पिता के साथ....किस प्रकार बोलते हो? उनको उद्वेग हो वैसा नहीं बोलते हो न?

सभा में से : अयोग्य आचरण कोई करता हो, तो बोलना पड़ता है। नहीं बोलें तो गलत काम करते रहें और बोलें तो उद्वेग होता ही है....तो क्या करना चाहिए?

महाराजश्री : उग्र शब्द सुनाने से गलत काम करनेवाले रुक गये क्या? सुधर गये क्या? हाँ, यदि उग्र शब्दों से सामनेवाला सुधर जाता हो तब तो बोलते रहो। उद्वेग पैदा करके भी आत्महित होता हो दूसरे का, तो उद्वेग पैदा कर सकते हो। 'ऑपरेशन' द्वारा दर्दी का दर्द दूर होता हो तो 'ऑपरेशन' करना उचित है। परन्तु जब तक दवाइयों से सुधार होता हो तब तक 'ऑपरेशन' नहीं करवाते हो न? 'ऑपरेशन' कराने पर भी अच्छा होने की संभावना नहीं हो तो क्या करोगे? 'ऑपरेशन' नहीं करवाते हो न? वैसे उग्र शब्दप्रयोग से भी सामनेवाला सुधरनेवाला न हो तो उग्र शब्दों का प्रयोग नहीं करोगे न?

कभी, अनिवार्य संयोगों से उग्र वाणी का प्रयोग करना पड़े तो भी तुरंत ही सामनेवाला व्यक्ति का उद्वेग दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। 'मेरे निमित्त से कोई भी व्यक्ति को उद्वेग नहीं रहना चाहिए।' यह निर्णय हो जाना चाहिए अपने हृदय में। दूसरों की उद्विग्नता-अशान्ति अपने हृदय को दुःखी कर दे! यदि अपने निमित्त उनको अशान्ति हुई हो तो।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ज्यादातर ऐसा देखने में आता है कि मनुष्य अपने निकट के स्नेहीजनों के साथ ही ज्यादा उग्र-कटु शब्दप्रयोग करता रहता है। जिनके साथ उनको जीवन बिताने का होता है, जो जीवनसाथी होते हैं, उन्हीं के साथ अशान्तिजनक शब्दों का प्रयोग! कितनी घोर मूर्खता है यह? बाहर के लोगों के साथ प्रिय शब्दों का व्यवहार और घर के लोगों से कटु शब्दों का व्यवहार! क्या उचित लगता है यह आपको? घरवालों के साथ भद्र वाणी-व्यवहार करें तो आपत्ति क्या है? घरवालों के मन उद्विग्न रखने में लाभ क्या है? घरवाले उद्विग्न रहेंगे तो -

१. वे आपको सुख-शान्ति नहीं दे सकेंगे।

२. उनकी धर्माराधना शान्तचित्त से नहीं होगी।

३. घर की शोभा घटती जायेगी।

४. कोई आत्महत्या भी कर सकता है।

५. आपकी धर्माराधना भी स्थिरचित्त से नहीं होगी।

६. सभी लोग आर्तध्यान-रौद्रध्यान करते रहेंगे।

७. इससे पापकर्म बंधते रहेंगे।

८. मित्र इत्यादि भी घर में नहीं आयेंगे।

९. मेहमानों का आदर-सत्कार नहीं होगा।

१०. आपके प्रति किसी का प्रेम नहीं रहेगा।

क्या इतने नुकसान सहन करके भी आप उग्र शब्दों का प्रयोग करते रहेंगे? जरा दिमाग से सोचो। रुको और वचन-प्रयोग सुधारने का संकल्प करो।

हाँ, आप सुधार सकते हो आपके वचन-प्रयोग को। आप स्वयं पर विश्वास करें। आप वैसा ही बोलें....कि आपके बोले हुए शब्दों के नीचे आप अपने हस्ताक्षर कर सकें। आपके वचन कोई लिख ले और आपको कहे कि 'इस कागज पर हस्ताक्षर कर दें, तो आप बिना हिचकिचाहट के हस्ताक्षर कर दें! बोलने में इतनी सावधानी रखें।'

'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ के टीकाकार आचार्यश्री ने बड़ी महत्त्वपूर्ण बात कह दी है : 'परोद्वेगहेतोर्हि पुरुषस्य न क्वापि समाधिलाभोऽस्ति, अनुरूपफलप्रदत्वात् सर्वप्रवृत्तिनाम्।' दूसरों को उद्वेग-अशान्ति देने के कारण ही मनुष्य को कहीं भी शान्ति प्राप्त नहीं होती है। सभी प्रवृत्तियों का अनुरूप फल होता है। जैसा घोष, वैसा प्रतिघोष! जैसा प्रदान वैसा आदान! आप दूसरों को शान्ति दोगे तो

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आपको शान्ति मिलेगी ही। आप दूसरों को सुख दोगे तो आपको सुख मिलेगा ही। परन्तु आप दूसरों को दुःख दोगे तो आपको सुख नहीं मिलेगा। आप दूसरों को अशान्ति दोगे तो आपको शान्ति नहीं मिलेगी।

सभा में से : अनजान में दूसरों के प्रति उद्वेगजनक प्रवृत्ति हो जाय तो?

महाराजश्री : तो, बाद में खयाल आने पर क्षमा माँगनी चाहिए। दूसरों का उद्वेग दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। प्रयत्न करने पर भी दूसरों का उद्वेग दूर नहीं होता हो, तो आप दोषित नहीं हैं।

वैर की गाँठें मत बाँधो :

बार-बार दूसरों को अशान्त करने से, पीड़ा देने से, परेशान करने से दूसरों के हृदय में आपके प्रति द्वेष दृढ़ होगा। वैर की गाँठ बंध जायेगी। वह वैर की गाँठ जन्म-जन्म आपको दुःख देती रहेगी।

काया से भी दूसरों को परेशान मत करो, अशान्त मत करो। राजा गुणसेन जब राजकुमार थे तब राजपुरोहित के पुत्र अग्निशर्मा को कितना परेशान किया था? जानते हो न 'समरादित्य केवली चरित्र' को? अग्निशर्मा बेचारा कुरूप था, उसका शरीर कूबड़ा था। गुणसेन उसको गधे पर बिठाता था, उसके गले में काँटे का हार पहनाता था, घोर उपहास करता था....। अग्निशर्मा बेचारा त्रास सहन न कर सका, नगर छोड़कर जंगल में भाग गया....। परन्तु उसके हृदय में वैर की गाँठ तो बंध ही गई थी। आगे जाकर वह गाँठ दृढ़ हो गई थी। जन्म-जन्म तक वह अग्निशर्मा का जीव, गुणसेन के जीव का हत्यारा बना!

इसीलिए ज्ञानी पुरुष कहते हैं कि किसी भी जीव को काया से, शरीर से दुःखी मत करो। परेशान मत करो। आप दूसरों को परेशान नहीं करोगे तो आप स्वयं परेशान नहीं होंगे। यदि, आप दूसरों को परेशान नहीं करते हैं, फिर भी दूसरे आपको परेशान करते हैं, तो समझना कि पूर्वजन्म के अपराध की आपको सजा हो रही है। आप प्रतिकार कर सकते हैं, परन्तु हृदय में दुर्भावना रखे बिना।

सत्रहवाँ सामान्य धर्म का इतना विवेचन पर्याप्त होगा। मन-वचन-काया से दूसरों को उद्वेग नहीं हो, अशान्ति नहीं हो, वैसी प्रवृत्ति करने में जाग्रत रहें।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***परिवार के लोगों को जरूरी भोजन, जरूरी कपड़े और रहने की सुविधा... ये प्राथमिक जरूरतें पूरी करनी चाहिए।***
- ***तुम्हारे पास पैसा हो तो - मित्र गरीब हो, बहन निःसंतान या विधवा हो, वृद्ध ज्ञानीजन हो, कोई सज्जन पुरुष गरीब हो, तो उनकी जिम्मेदारी भी उठानी चाहिए। इन सबका पालन-पोषण करने की क्षमता न हो तो, माता-पिता, पत्नी और छोटे बच्चों का पालन-पोषण तो करना ही चाहिए किसी भी हालात में!***
- ***परिवार की सेवा क्या यह समाजसेवा नहीं है? परिवार क्या समाज या देश से अलग है? अपने परिवार की उपेक्षा करके लोग समाजसेवा करने के लिए क्यों लार टपकाते हुए दौड़ रहे हैं? वहाँ मान-सम्मान और चंद्रक मिलते हैं! घर में तो यह सब मिलने से रहा!***
- ***आश्रितों की उपेक्षा मत करो....उनके संस्कार-सदाचार के लिए पूरी सतर्कता बरतो!***

प्रवचन : ६८

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्यश्री हरिभद्रसूरिजी, स्वरचित 'धर्मबिंदु' ग्रन्थ में गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हुए अट्ठारहवाँ सामान्य धर्म 'आश्रितों का पालन' बता रहे हैं।

जिनके पालन-पोषण की जिम्मेदारी हो उनका पालन-पोषण करना ही चाहिए। माता-पिता का, आश्रित स्नेही-स्वजनों का एवं सेवकजनों का पालन-पोषण करना ही चाहिए। यदि इन सभी का पालन-पोषण करने की शक्ति न हो तो भी माता-पिता, सुशीला नारी और अशक्त संतानों का पालन-पोषण करना ही चाहिए।

यदि रोटी, कपड़ा और मकान न मिले तो? :

हर मनुष्य के जीवन में 'जिम्मेदारी' एक महत्त्व की बात होती है। दूसरों के प्रति अपनी जिम्मेदारी को निभानेवाला मनुष्य गृहस्थ जीवन को शोभायमान करता है और अपने सामान्य धर्मों का पालन करने का श्रेय प्राप्त करता है। सर्वप्रथम अपने परिवार के प्रति जो कर्तव्य होते हैं, उन कर्तव्यों का पालन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करना चाहिए। परिवार के प्रति अनेक कर्तव्य होते हैं, उन कर्तव्यों में परिवार का पालन-पोषण महत्त्व का पहला कर्तव्य होता है। परिवार को पर्याप्त भोजन, पर्याप्त कपड़े और रहने का मकान - ये तीन प्राथमिक आवश्यकताएँ देनी चाहिए। कड़ी मेहनत करके भी इतनी सुविधाएँ देनी चाहिए। यदि ये प्राथमिक सुविधाएँ नहीं देंगे तो परिवार का जीवन छिन्नभिन्न हो जायेगा। यदि पर्याप्त भोजन नहीं मिलता है, पर्याप्त वस्त्र नहीं मिलते हैं और रहने को घर नहीं मिलता है तो -

१. हिंसा और चोरी का अनिष्ट परिवार में प्रविष्ट होता है।

२. आत्महत्या होती है।

३. महिलाएँ शरीर बेचती हैं।

४. पारिवारिक क्लेश बढ़ता है।

५. आर्तध्यान-रौद्रध्यान होता है।

जिस परिवार में ऐसे अनिष्ट प्रविष्ट हो जाते हैं, वह परिवार नष्ट हो जाता है।

इसलिए परिवार के प्रति पूरा ध्यान देना चाहिए। पहली बात तो यह है कि जब तक परिवार के पालन की क्षमता न हो तब तक शादी ही नहीं करनी चाहिए। परिवार बढ़ाना ही नहीं चाहिए।

परिवार में माता-पिता, आश्रित, स्वजन, धर्मपत्नी और नौकरों का समावेश होता है। जो लड़के धनार्जन करने में असमर्थ हों, उनका भी पालन करना चाहिए। जैनेतर शास्त्रों में तो यहाँ तक कहा है कि 'वृद्ध माता-पिता, सती स्त्री और शिशुओं का पालन अनेक अकर्म करके भी करना चाहिए।'

वृद्धौ च मातापितरौ सतीं भार्यां सुतान् शिशून्।
अप्यकर्मशतं कृत्वा भर्तव्यान् मनुरब्रवीत् ।।

इतना ही नहीं, यदि संपत्ति हो तो दूसरों का भी पालन करना चाहिए। मित्र दरिद्र हो, भगिनी संतानविहीना हो, वृद्ध ज्ञातिजन हो और निर्धन कुलीन मनुष्य हो....तो उसका पालन करना चाहिए। इन सबका पालन-पोषण करने की शक्ति नहीं हो तो भी माता-पिता, पत्नी और छोटे बच्चों का पालन तो अवश्य करना ही चाहिए।

'मनु' ने तो इस बात पर कितना जोर दिया है? परिवार का पालन यदि न्याय-नीति और प्रामाणिकता से नहीं होता है, कुछ अकार्य करके धनोपार्जन

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

करना पड़ता है, तो भी करना उचित बता दिया है। पारिवारिक जिम्मेदारियाँ निभानी बहुत ही आवश्यक होती हैं।

श्रीमन्तों का कर्तव्य :

सभा में से : परिवार का मुख्य व्यक्ति असाध्य व्याधि से ग्रस्त हो जाय और घर में दूसरा कोई धनोपार्जन करनेवाला न हो तो क्या किया जाय?

महाराजश्री : ऐसी परिस्थिति में, जो सुखी स्नेही हो, मित्र हो या साधर्मिक हो, उनका परम कर्तव्य बन जाता है उस परिवार का पालन करने का। संपत्तिशाली धनवान् लोगों का कर्तव्य होता है ऐसे संकट में फँसे हुए परिवारों को संभालने का। एक-एक श्रीमन्त यदि ऐसे एक-एक परिवार को सम्हाल ले तो प्रश्न हल हो जाय।

सभा में से : सभी जीव अपने-अपने कर्म लेकर जन्म लेते हैं, उनको उनके कर्मों के भरोसे छोड़ दिया जाय तो?

महाराजश्री : यदि आपको इस प्रकार आपके कर्मों के भरोसे छोड़ दिया जाय तो आपको क्या होगा? जब आप व्याधिग्रस्त हो, आपत्तिग्रस्त हो, बेसहारा हो, उस समय आपके स्नेही, मित्र और स्वजन आपको छोड़ दें यह सोचकर कि 'उनके पापकर्मों का उदय है, भोगने दो उन कर्मों को!' तो आपके मन में क्या होगा? दुःख होगा न? व्याधिग्रस्त और आपत्तिग्रस्त जीवों को उनके कर्मों के भरोसे छोड़ने में क्रूरता है, निर्दयता है। कर्तव्यपालन नहीं करना है और अपने आपको 'तत्त्वज्ञानी' बताना है, ऐसे लोग ही ऐसा कुतर्क कर सकते हैं। व्यक्तिगत स्वार्थों में लिपटे हुए लोग दूसरों के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन कैसे करेंगे? जिनको आप अपने स्वजन मानते हो, जिनको आप अपना मित्र मानते हो, उनके प्रति आपके कुछ निश्चित कर्तव्य होते ही हैं। पहला कर्तव्य है उनका यथोचित पालन-पोषण करना।

परिवार के प्रति इतना ध्यान तो रखना ही :

परिवार के प्रति दुर्लक्ष्य नहीं करना चाहिए। कितनी बातों पर लक्ष देना चाहिए - वह बताता हूँ :

१. परिवार में सबको समुचित भोजन मिलता है या नहीं? समय पर सभी भोजन करते हैं या नहीं? भक्ष्य-अभक्ष्य का विवेक रहता है या नहीं? प्रकृतिविरुद्ध भोजन तो नहीं होता है न?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२. परिवार में सभी को उचित वस्त्र मिलते हैं या नहीं? सबकी वेश-भूषा मर्यादाओं के अनुरूप होती है या नहीं? वस्त्रों के लिए रुपयों का दुर्व्यय तो नहीं होता है?

३. स्त्री-पुरूषों की मर्यादाओं का पालन हो सके, वैसा मकान है या नहीं? छोटे-बड़ों की मर्यादा का पालन हो सके, वैसी आवास-व्यवस्था है या नहीं?

४. लड़कों को और लड़कियों को उचित व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त होती है या नहीं? संतानें बराबर अध्ययन करती हैं या नहीं?

५. परिवार में कोई बीमार होता है तो उसकी सही रूप से 'ट्रीटमेन्ट' होती है या नहीं? उसकी सार-संभाल ली जाती है या नहीं? परिवार के दूसरे सदस्य बीमार के पास बैठकर उसकी सेवा करते हैं या नहीं?

६. परिवार के सदस्य उचित धर्माराधना करते हैं या नहीं? धर्म के प्रति उनका लगाव है या नहीं?

७. घर में कौन आता-जाता है, कैसी-कैसी बातें होती हैं और घर के लोग कहाँ आते-जाते हैं - इसका पूरा खयाल होना चाहिए।

८. घर पर आनेवाले अतिथियों का कैसा आदर-सत्कार होता है, वह भी देखना चाहिए।

९. घर के लोग अपने-अपने कार्य सुचारुरूप से करते हैं या नहीं? अपने कार्य करने में वे उत्साहित हैं या नहीं?

१०. घर के लोग विनय, विवेक और मर्यादा का पालन ठीक ढंग से करते हैं या नहीं?

घर के-परिवार के बुज़ुर्गों को इतनी बातों का तो खयाल करना ही चाहिए। यदि इन बातों का लक्ष्य नहीं होगा तो परिवार नष्ट हो जायेगा। परिवार में असंख्य बुराइयाँ प्रविष्ट हो जायेंगी।

परिवार की सेवा भी समाजसेवा ही है :

सभा में से : परिवार की उपेक्षा कर यदि कोई समाजसेवा करे अथवा देशसेवा करता रहे तो क्या उचित है?

महाराजश्री : अनुचित है। क्या आपका परिवार समाज से भिन्न है? परिवार की सेवा समाज की सेवा नहीं है क्या? परिवार क्या देश से भिन्न है? परिवार की उपेक्षा देश की ही उपेक्षा है। अपने परिवार की उपेक्षा करके

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

समाजसेवा करने क्यों जाते हैं, जानते हो? वहाँ मान-सम्मान मिलता है! घर में मान-सम्मान कौन देगा? मान-सम्मान की इच्छा मनुष्य में प्रबल होती है न?

पहले तो कोई-कोई पुरुष अपने परिवारों के प्रति लापरवाह होते थे, महिलाएँ तो जाग्रत होती थीं अपने परिवारों के प्रति। परन्तु अंतिम दो दशक के समय में महिलाएँ भी बदलती जा रही हैं। वे भी परिवार के प्रति घोर उपेक्षा करती दिखायी देती हैं। उनको अपने परिवार की सेवा में गुलामी लगती है! क्लबों में, पार्टियों में, मंडलों में आजादी लगती है। क्या किया जाय? आप लोग कुछ समझें और सुधार करें तो अच्छा है। गतानुगतिकता छोड़नी होगी। अपने परिवार के प्रति दृष्टि बदलनी होगी। बहुत कुछ बिगड़ा है, फिर भी सुधार की शक्यता नष्ट नहीं हुई है। यदि पाँच-दस वर्ष बिना सुधार किये गुजर गये तब तो फिर सुधार की शक्यता नहीं रहेगी।

परिवार को सुव्यवस्थित करने के लिए परिवार का इहलौकिक और पारलौकिक हित करने के लिए ग्रन्थकार आचार्यदेव ने कुछ उपाय बताये हैं। मुझे तो लगता है कि ये ही उपाय वास्तविक हैं। वर्तमानकाल में भी ये उपाय किये जा सकते हैं। परन्तु परिवर्तन करने में थोड़ी तकलीफें तो आयेंगी ही। तकलीफें सहन करके भी परिवर्तन करना होगा। परिवार के लिए बड़ों को कुछ त्याग भी करना होगा।

हर एक के पास योग्य कार्य चाहिए :

पहला उपाय बताया है : तस्य यथोचित विनियोगः।

परिवार के हर व्यक्ति को उनके लिए योग्य कार्यों में जोड़ना चाहिए। कार्य दो प्रकार के होते हैं : धार्मिक और व्यावहारिक। ऐसे कार्यों में जोड़ना चाहिए कि उनको उन कार्यों में आनन्द आये। इसलिए परिवार के लोगों की अभिरुचि देखनी चाहिए। किसको कौन-सा कार्य पसन्द आयेगा....आता है, वह समझकर प्रेरणा देनी चाहिए। धर्मकार्य हो या व्यावहारिक हो, अभिरुचि देखकर प्रेरणा व मार्गदर्शन देना चाहिए। यदि उन लोगों के पास ऐसी कोई प्रवृत्ति नहीं होगी तो वे आवारा बन जायेंगे, जुआ खेलने चले जायेंगे। दूसरी अनेक अयोग्य प्रवृत्तियाँ उनके जीवन में प्रविष्ट हो जायेंगी। आज अनेक ऐसे श्रीमन्त परिवार हैं कि जिन परिवारों के लोग उचित कार्यों में लगे हुए नहीं हैं इसलिए अनेक बुरे काम कर रहे हैं।

सभा में से : लड़कों को और लड़कियों को उनके उचित कार्य बताते हैं फिर

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भी नहीं करते! धर्मकार्य तो ठीक, व्यावहारिक कार्य भी वे करना नहीं चाहते।

महाराजश्री : क्या बच्चे पैदा होते हैं तभी से ऐसे होते हैं? किसने उनको अनुशासनहीन बनाया? किसने उनको स्वच्छन्दता सिखायी? माता-पिता के हृदय में यदि संतानों के प्रति सद्भावना होती है और बुद्धि निर्मल होती है तो वे बाल्यकाल से ही संतानों के जीवननिर्माण में रस लेते हैं, अभिरुचि रखते हैं। इनकी संतानें बड़ी होने पर भी विनीत, आज्ञांकित और कार्यदक्ष बनती हैं।

कैसे-कैसे धर्मकार्यों में संतानों को और दूसरे आश्रितों को जोड़ना चाहिए, यह बात समझ लो।

१. परमात्मा के मन्दिर जाना और सद्पुरुषों के पास जाना - ये दो प्रवृत्ति तो सबके लिए होनी चाहिए।

२. जिसके हृदय में दया और करुणा ज्यादा हो, उसको जीवदया की प्रवृत्ति में जोड़ना चाहिए। जैसे, कई गाँव-नगरों में 'पिंजरापोल' गोशाला होती हैं, वहाँ रुग्ण, अनाथ पशु रखे जाते हैं, वहाँ जाकर उन पशुओं की देखभाल करनी चाहिए।

३. जिसको योगसाधना में रस हो, उसको सुयोग्य गुरु के पास भेजकर योगसाधना सिखानी चाहिए। प्रतिदिन कुछ समय वह योगसाधना करता रहे।

४. जिसको ज्ञानोपासना का रस हो, उसको धर्मग्रन्थों के अध्ययन में प्रेरित करना चाहिए।

५. जिसको परमात्मभक्ति में रस हो उसको विशेषरूप से परमात्मभक्ति में जोड़ना चाहिए।

६. जिसको ध्यान-साधना में अभिरुचि हो, उसको ध्यानमार्ग का अध्ययन कराकर उस दिशा में प्रवृत्त करना चाहिए।

७.जिसको तपश्चर्या करने में रस हो, उसको तपश्चर्या का स्वरूप समझाकर, तपोमय जीवन बनाने देना चाहिए।

आश्रितों के प्रश्नों का समाधान करें :

परिवार के लोग यदि बुद्धिमान् होंगे तो आपको प्रश्न करेंगे : 'यह धर्मक्रिया क्यों करनी चाहिए? इस धर्मक्रिया का अर्थ क्या है? आपको प्रत्युत्तर देना होगा। वैसा प्रत्युत्तर देना होगा कि उनके मन में धर्मक्रिया की उपादेयता जँच जाय।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्कूल-कॉलेज में पढ़नेवाले लड़के और लड़कियाँ तर्क-कुतर्क भी करेंगे। आप गुस्सा मत करना। उनका तिरस्कार मत करना। अन्यथा वे धर्मक्रिया के प्रति अनादरवाले बन जायेंगे। यदि आप नहीं समझा सकें तो जो ज्ञानीपुरूष समझा सकते हों, उनके पास भेजें, उनके पास जाने की प्रेरणा दें।

बुद्धिमान् स्त्री-पुरुष को बौद्धिक संतोष देना आवश्यक होता है। कोई भी धर्मकार्य 'क्यों और कैसे?' समझकर किया जायेगा तो ही आनन्द मिलेगा। जिस कार्य में मनुष्य को आनन्द मिलता है वह कार्य फिर छूटता नहीं है।

परिवार के लोगों को - आश्रितों को धार्मिक एवं व्यावहारिक कार्यों में जोड़ने के लिए आपको, उन लोगों की अभिरुचि जाननी होगी और कार्यदक्षता देखनी होगी। उनमें कार्य करने का उत्साह जाग्रत करना होगा। उत्साह कैसे जाग्रत किया जाय, वह कला है न आप लोगों के पास? आक्रोश करने से अथवा गालियाँ बोलने से उत्साह नहीं जगता है, यह बात आप लोग मानते हो न?

आश्रितों की आवश्यकताएँ भी सोचें :

सभा में से : जब लड़के-लड़कियाँ कोई भी काम करना नहीं चाहते....सिर्फ खाना-पीना, घूमना-फिरना और सोना....तब गुस्सा आ ही जाता है। वे कोई धर्मक्रिया करना नहीं चाहते, वे कोई व्यावहारिक काम भी करना नहीं चाहते....।

महाराजश्री : ऐसे आश्रितों की उपेक्षा करो। आक्रोश मत करो। कुछ कालक्षेप करो। समय को गुजरने दो। धैर्य धारण करो। जीवों की कर्मपरवशता का विचार करो। दूसरों के सामने आश्रितों की निंदा मत करो। 'जब समय आयेगा तब सुधरेगा', ऐसा विचार करो। बार-बार ऐसे आश्रितों को प्रेरणा भी मत करो। साथ-साथ, उनको सन्मार्ग पर लाने के उपाय भी सोचते रहो। कभी ऐसा भी होता है कि आश्रितों की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होने से वे विपरीत आचरण करते हैं। इसलिए ग्रन्थकार ने कहा है :

'तत्प्रयोजनेषु बद्धलक्षता।'

- माता को क्या चाहिए?
- पिता को क्या चाहिए?
- पत्नी को क्या चाहिए?
- संतानों को क्या चाहिए?
- नौकरों को क्या चाहिए?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आवश्यकताएँ तीन प्रकार की होती हैं : धर्म, अर्थ और काम।

- आश्रितों को धर्माराधना करने की सुविधा प्राप्त है या नहीं?
- आश्रितों को उचित रुपये मिलते हैं या नहीं?
- आश्रितों को उचित पाँच इन्द्रियों के विषय प्राप्त होते हैं या नहीं?

आपको इन बातों का खयाल करना ही चाहिए। इन बातों का खयाल करते रहोगे तो ही आश्रित लोग अपने कर्तव्यों के प्रति सजग रहेंगे और उन्मार्ग की ओर नहीं जायेंगे।

आश्रितों के भी अपने कर्तव्य है :

सभा में से : हम सभी का खयाल करते रहें और वे लोग हमारा खयाल नहीं करें....तो हमारा मन टूट जाये न?

महाराजश्री : बात सच्ची है। आप आश्रितों के प्रति अपने कर्तव्यों को निभाते हैं और आश्रित लोग आपका खयाल नहीं करते हैं, तो यह संबंध टिक नहीं सकता। आश्रितों को आपके स्वास्थ्य का, आपकी सुविधाओं का, आपकी अर्थव्यवस्था का खयाल करना ही चाहिए। आपकी धर्माराधना का भी खयाल करना चाहिए। बहुत ज्यादा अपेक्षाएँ भी नहीं रखनी चाहिए आप से।

- यदि माता-पिता जो कि निवृत्त जीवन जीते हैं और वृद्धावस्था में हैं, अपने पुत्र से, पुत्रवधू से और पौत्रों से ज्यादा सुख-सुविधाओं की अपेक्षा रखते हुए झगड़ते रहते हैं, वे स्वयं दुःखी होते हैं और परिवार में अशान्ति बनाये रखते हैं।

- यदि पत्नी पति से ज्यादा अपेक्षाएँ रखती हैं और अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए झगड़ती रहती है, तो वह अपना ही सुख नष्ट करती है। वह यह समझती है कि पति को मेरी सभी इच्छाएँ पूर्ण करनी चाहिए, यह धारणा गलत है।

- यदि संतानें पिता से ज्यादा अपेक्षाएँ रखती है तो वे भी अशान्ति ही बनाये रखती हैं। संतानों के सभी मौज-शौक पूरा करने के लिए पिता बंधा हुआ नहीं है। जीवन जीने के लिए जो आवश्यकताएँ होती हैं, उन आवश्यकताओं की पूर्ति अवश्य होनी चाहिए। जैसे कि उनको पर्याप्त और उचित भोजन मिलना चाहिए। उनको पर्याप्त और उचित वस्त्र मिलने चाहिए। उनको शिक्षा और औषध मिलने चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आश्रितों को धर्मपुरुषार्थ में भी जोड़ें :

इन प्राथमिक एवं बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के साथ-साथ उन लोगों को उचित धर्मपुरुषार्थ में जोड़ना चाहिए। जिसके लिए जो धर्मक्रिया उचित हो, उस धर्मक्रिया में जोड़ना चाहिए। धर्मक्रिया में अभिरुचि पैदा करनी चाहिए। प्रसंग-प्रसंग पर उनको प्रेरणा देनी चाहिए। परिवार के मुख्य व्यक्ति का इस विषय में लक्ष्य होना चाहिए। कौन-कौन-सा धर्मपुरुषार्थ करना है, यह खयाल होना चाहिए।

जब लड़के-लड़कियाँ युवावस्था प्राप्त करें तब उनका विशेषरूप से विचार करना चाहिए। उनकी कामवासना प्रबल न बन जाय और वे गलत रास्ते पर भटक नहीं जायें, इसलिए उचित उपाय करने चाहिए।

गंभीरता से सोचें इन बातों को :

पत्नी के विषय में पति को और पति के विषय में पत्नी को भी सोचना चाहिए। कामपुरुषार्थ के विषय में गंभीरता से सोचना चाहिए। अन्यथा दो में से एक या दोनों गलत काम कर सकते हैं। पत्नी से यदि पति को संतोष प्राप्त नहीं होता है तो पति वेश्यागामी अथवा परस्त्रीगामी बन सकता है। वैसे, यदि पत्नी को पति से संतोष प्राप्त नहीं होता है तो पत्नी परपुरुष के प्रति आकर्षित हो सकती है। इस प्रकार दोनों के जीवन में घोर पाप प्रविष्ट हो जाता है।

दुराचार-व्यभिचार को पाप मानते हो न? घोर पाप मानते हो न? तो परिवार की जीवनपद्धति ही ऐसी बना लो कि परिवार में वह पाप प्रवेश ही न कर पाये। घर में एक भी युवा स्त्री या लड़की हो, तो कोई युवा नौकर घर में मत रखो। घर में यदि एक भी युवा पुरुष या लड़का हो तो कोई युवा नौकरानी घर में मत रखो। हो सके इतनी सावधानी बरतनी चाहिए। कामविषयक वृत्ति सभी में होती हैं, उस वृत्ति पर संयम रखना होता है। संयम नहीं कर सकें तो सुयोग्य निश्चित पात्र के साथ ही उस उत्तेजना को शान्त करने की होती है।

अब रहा अर्थपुरुषार्थ। घर में जो व्यक्ति अर्थोपार्जन करने में समर्थ हो, उसको अर्थोपार्जन के लिए प्रेरित करना चाहिए। हाँ, महिलाओं को अर्थोपार्जन के कार्य में नहीं जोड़ें। 'अर्थपुरुषार्थ' में कुछ तो क्रूरता आ ही जाती है। स्त्री में क्रूरता नहीं होनी चाहिए। स्त्री तो करुणा और कोमलता के फूलों की फुलवारी होनी चाहिए। स्त्री की मुख्य जिम्मेदारी घर की सुख-सुविधा की होती है। बच्चों के लालन-पालन की होती है। भोजन-व्यवस्था की होती है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

घर पर आये-गये अतिथि एवं स्नेही-स्वजनों के आदर-सत्कार की जिम्मेदारी होती है। हाँ, कोई छोटा-सा गृहउद्योग हो कि फुरसत के समय में घर पर ही महिलाएँ कर सकें, तो अनिवार्य संयोग में अनुचित नहीं है। अन्यथा, महिलाओं को अर्थोपार्जन के लिए प्रेरित नहीं करना चाहिए।

पुरुषों को भी चाहिए कि वे सही मार्ग पर चलकर अर्थोपार्जन करें। ऐसे धंधे नहीं करें कि जिससे आपत्ति में फँस जायें। मन उद्विग्न हो जाय। चित्त में आर्तध्यान-रौद्रध्यान बढ़ जाय। पैसे का पागलपन तो आना ही नहीं चाहिए। श्रीमन्त होने का व्यामोह नहीं होना चाहिए।

इस प्रकार, धर्म-अर्थ और काम - तीन पुरुषार्थ में परिवार को समुचित ढंग से संजोये रखना चाहिए। उपेक्षा मत करो।

परिवार की सुरक्षा का ख्याल भी करना चाहिए। इसलिए ग्रन्थकार आचार्यदेव कहते हैं :

'अपायपरिरक्षोद्योगः।'

आश्रितों को अपायों से-नुकसानों से बचाये रखना चाहिए। अपाय दो प्रकार के होते हैं : इहलौकिक और पारलौकिक। जो व्यक्ति अपने आश्रित लोगों की अनर्थों से रक्षा करता है वही वास्तव में मालिक कहलाता है। यदि आप लोग परिवार के मालिक कहलाते हो तो आपका कर्तव्य होता है कि आप परिवार को अनर्थों से बचायें।

सभा में से : घर में जो हमारा कहा मानें, उसको बचा सकते हैं, जो हमारा कहा माने ही नहीं, उसको कैसे बचायें?

महाराजश्री : जो व्यक्ति आपका कहा नहीं मानता है और मनमाने ढंग से काम करता है, तो उसको निभाने की जरूरत ही क्या है? उसका पालन ही क्यों करना चाहिए? ऐसे लोगों की बात बाद में करेंगे, पहले तो, जो लोग आपकी बात मानते हैं, उनको अनर्थों से बचाना चाहिए, यानी वे अपने जीवन में ऐसे काम ही नहीं करें कि जिससे इस जीवन में दुःखी हों और परलोक में भी दुःखी हों।

खयाल बचपन से रखो :

एक बात समझ लो कि पहले से ही परिवार को अच्छे संस्कार दिये होंगे तो ही ये बातें बन सकेंगी। बुरी आदतों में फँस जाने के बाद बाहर निकलना मुश्किल

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

बन जायेगा। बुरे काम और अच्छे काम का खयाल प्रारंभ से ही दे देना चाहिए। पूरा खयाल रखने पर भी कभी गलती हो जाय तो उसको बचा लेना चाहिए।

अनर्थों से बचानेवाली होती है परलोक दृष्टि! हर कार्य में परलोक का विचार होना चाहिए। 'मैं ऐसा काम करता हूँ तो इसका फल परलोक में क्या मिलेगा?' हर प्रवृत्ति का पारलौकिक फल होता है, इसका ज्ञान होना चाहिए। हिंसा का फल और अहिंसा का फल, सत्य का फल, असत्य का फल, चोरी का फल और अचौर्य का फल, दुराचार का फल और सदाचार का फल, परिग्रह का फल और अपरिग्रह का फल।

यह ज्ञान होगा तो ही आप आश्रितों को बचा सकेंगे अनर्थों से।

सभा में से : परलोक की बात तो कोई सुनता ही नहीं है!

महाराजश्री : चूँकि परलोक की बात आपने पहले से नहीं सुनायी होगी! बच्चों को शैशवकाल से यदि बात सुनाते रहे होंगे तो आज भी वे सुनते! हाँ, बुद्धिमान् व्यक्ति परलोक के विषय में प्रश्न कर सकता है। आपको तर्कयुक्त प्रत्युत्तर देकर उसके मन का समाधान करना होगा। यदि समाधान करने की आपकी क्षमता न हो तो ज्ञानी पुरुषों के संपर्क में उनको ले जायँ। ज्ञानी गुरुजनों के संपर्क में परिवार को रखने से बहुत लाभ होता है।

पहले आप यह सोचें कि आपके आश्रितों को अनर्थों से बचाने की आपकी जागृति है क्या? आपकी दृष्टि है क्या? यदि आपकी जागृति होगी, दृष्टि होगी, तो काम कुछ तो बनेगा ही। आप आश्रितों की उपेक्षा मत करो। 'उनको जो करना हो सो करें, मुझे कुछ नहीं करना है....भुगतने दो अपने कुकर्मों के फल....।' ऐसा मत सोचो।

जब सवाल इज्जत का हो तब क्या करना? :

सभा में से : जब कुकर्मों की हद आ जाती है, इज्जत को बट्टा लगता है, बड़ा आर्थिक नुकसान करते हैं....तब सहा नहीं जाता।

महाराजश्री : ऐसी अपरिहार्य स्थिति में क्या करना चाहिए, इस बात का मार्गदर्शन स्वयं ग्रन्थकार आचार्यदेव देते हैं :

'गर्ह्ये ज्ञानस्वगौरवरक्षा।'

यदि आश्रित लोग लोकविरुद्ध अनाचारादि सेवन करनेवाले बन जायँ, कुत्सित कार्य करने लगें तो आपको अपने ज्ञान व स्वमान की रक्षा करनी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चाहिए। यानी आश्रित लोगों की वजह से आपको इतनी ज्यादा चिन्ता नहीं होनी चाहिए कि आपकी बुद्धि कुंठित हो जाय, आपका ज्ञान विस्मृत हो जाय। हाँ, ज्यादा चिन्ताएँ करने से, ज्यादा माथापच्ची करने से बुद्धि चंचल, अस्थिर और कुंठित हो जाती है। आश्रित लोग यदि सही रास्ते पर चलने को तैयार नहीं हों, गलत काम छोड़ने को तैयार नहीं हों, उनके गलत कार्यों से आपकी अपकीर्ति होती हो, आपका अपयश होता हो तो आपको सोचना ही चाहिए। आपको अपना स्वमान नहीं खोना चाहिए।

आश्रितों से संबंध तोड़ना पड़ेगा। उनसे किसी प्रकार का संबंध नहीं रखने का। उनको मान-सम्मान नहीं देने का। है न इतनी तैयारी? यदि गलत धन्धा करके लड़के ने दो-चार लाख रुपये कमा लिये....शराब पीता है, अंडे खाता है, दूसरी महिलाओं से शरीरसंबंध रखता है....तो आप क्या करेंगे?

हृदय में करुणा को बनाये रखना :

सभा में से : इस काल में श्रीमन्तों की अपकीर्ति नहीं होती है। श्रीमन्त मनुष्य को सभी पाप करने की दुनिया 'परमिशन' देती है।

महाराजश्री : लड़का श्रीमन्त बन जाने पर वह पिता का आश्रित ही नहीं रहेगा न? स्वतंत्र हो जायेगा? फिर माता-पिता की जिम्मेदारी नहीं रहती है। माता-पिता को अनाचारी श्रीमन्त पुत्र की भी परवाह नहीं करनी चाहिए। पुत्र के रुपयों से प्रभावित नहीं होना चाहिए। उनको अपने ज्ञान और स्वमान की रक्षा करनी चाहिए। आश्रित अनाचारी, दुराचारी, स्वच्छंदी बन जाय....उसके सुधार की कोई संभावना नहीं दिखती हो....तब उससे संबंध विच्छेद कर ही देना चाहिए। हृदय में रोष नहीं रखना, भावदया रखने की। 'क्या होगा उस बेचारे का परलोक में? इस भव में तो दुःखी हो ही रहा है....परलोक में भी दुःखी होगा।'

परिवार के प्रति कितने व्यापक कर्तव्य निभाने के होते हैं? ग्रन्थकार और टीकाकार आचार्यों ने कितनी सुन्दर और सुव्यवस्थित जीवनपद्धति बतायी है! आप लोग गंभीरता से सोचें-समझें तो यह जीवनपद्धति अपना सकते हो। अपनी-अपनी जिम्मेदारी को समझते चलो। आश्रितों की उपेक्षा मत करें। भौतिक-धार्मिक और आध्यामिक दृष्टि से आश्रितों का खयाल करें।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***पूजा करने से पहले देव, अतिथि और दीनजनों की पहचान करना जरूरी है। पहचान करके पूजा करने से भावों में प्रगाढ़ता आती है।***
- ***जहाँ पर प्रेम की शहनाइयाँ बज रही हों उस दिल को परमात्मा में जोड़ना नहीं पड़ता....वह तो परमात्मा के साथ जुड़ा हुआ ही रहता है।***
- ***मन्दिर में प्रवेश करने से पूर्व सांसारिक विचार-व्यवहार और वाणी को बाहर ही छोड़ दो।***
- ***पूजा करनेवालों को पूजा का क्रम सीख लेना चाहिए।***
- ***पूजा करने में विवेक का पूरा खयाल रखना है।***
- ***अष्टप्रकारी पूजा में प्रत्येक पूजा के पीछे कुछ लक्ष्य है, आदर्श है....उन रहस्यों को समझने से ही पूजा का अपूर्व आनन्द प्राप्त हो सकता है।***
- ***स्वस्तिक चार गति का प्रतीक है। इससे ऊपर उठने के लिए ज्ञान-दर्शन-चारित्र्य का सहारा लेना है और सिद्धशिला पर पहुँचकर आत्मस्वरूप में लीन हो जाना है।***

प्रवचन : ६९

महान् श्रुतधर, पूज्य आचार्यश्री हरिभद्रसूरिजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हुए उन्नीसवाँ गृहस्थ धर्म बताते हैं : देव-अतिथि और दीनजनों की सेवा।

जिस प्रकार स्नेही, मित्र, स्वजन परिजन वगैरह की उचित आवभगत करते हैं उस प्रकार देव-अतिथि और दीनजनों की भी उचित सेवा करनी है। सर्वप्रथम आपको इन देव-अतिथि-दीनजनों की यथार्थ पहचान होनी चाहिए। बाद में उनकी सेवा क्यों करनी चाहिए, कैसे करनी चाहिए....उसका ज्ञान होना चाहिए।

देव का परिचय :

संस्कृत भाषा में 'दिव्' धातु है, उसका अर्थ होता है स्तुति करना। भक्तिभरपूर हृदय से इन्द्र वगैरह जिनकी स्तुति करते हैं, स्तवना करते हैं वे 'देव' कहलाते हैं। नहीं होता है उनको कोई क्लेश या संक्लेश, नहीं होते हैं

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कोई कर्म के कटु विपाक। यानी, जो रागरहित और द्वेषरहित होते हैं। वे अंतरंग शत्रुओं के विजेता होते हैं। वे अनंत गुणों के धारक होते हैं। ऐसे देव के भिन्न-भिन्न नाम इस दुनिया में प्रचलित हैं।

कोई उनको 'अर्हन्' कहते हैं, कोई 'बुद्ध' कहते हैं, कोई 'शंभु' कहते हैं, कोई 'अनन्त' कहते हैं।

अपनी-अपनी कुल-परंपरा से जो देव का नाम मिला हो, उस देव का नाम-स्मरण और देवपूजन करना चाहिए। नाम से मतलब नहीं, स्वरूप से मतलब होना चाहिए। राग-द्वेषरहितता, वीतरागता एवं सर्वज्ञता होनी चाहिए देव में। यह बात ऐसे मनुष्यों के लिए है कि जिन्होंने सर्वज्ञ-वीतराग जिनेश्वरदेव का शासन नहीं पाया हो।

अतिथि का परिचय :

जो महात्मा लोग सदैव शुभ प्रवृत्ति में एवं पवित्र आचरण में निरत रहते हैं, उनके सभी दिन समान होते हैं। उनके लिए चतुर्थी हो या अष्टमी, नवमी हो या एकादशी, त्रयोदशी हो या चतुर्दशी। सभी दिन समान होते हैं, इसलिए वे अतिथि कहलाते हैं। यहाँ 'तिथि' शब्द से पर्वतिथि समझना। यों तो एकम से पूर्णिमा तक सभी तिथि ही कहलाती हैं। सामान्य तिथि और पर्वतिथि का जिनको भेद नहीं हैं, जो सभी तिथियों में धर्मपरायण रहते हैं-वे अतिथि कहलाते हैं। दूसरे लोग जो कि ऐसे महात्मा नहीं होते हैं और बाहर से आते हैं वे 'अभ्यागत' कहलाते हैं।

दीन का परिचय :

संस्कृत भाषा के 'दिङ्' धातु से 'दीन' शब्द बना है। 'दिङ्' का अर्थ होता है क्षय होना। जिस मनुष्य की शक्ति क्षीण हो गई हो, जो धर्मपुरुषार्थ, अर्थपुरुषार्थ और कामपुरुषार्थ करने में समर्थ न रहा हो, शक्तिमान न रहा हो, वह 'दीन' है। शरीर व्याधिग्रस्त हो गया हो, इन्द्रियाँ शिथिल हो गई हों अथवा अंधापन या विकलता आ गई हो....वे दीन हैं। दुनिया में ऐसे मनुष्य करोड़ से भी ज्यादा हैं।

परमात्मपूजा :

'देव प्रतिपत्ति' का अर्थ है परमात्मपूजा। हर गृहस्थ को परमात्मा की पूजा करनी चाहिए। आप लोगों का तो महान् भाग्योदय है कि आपको सर्वज्ञ-वीतराग तीर्थंकर भगवंत का धर्मशासन मिला है। आपको श्रेष्ठ परमात्मस्वरूप

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

की प्राप्ति हुई है। यदि आप परमात्मा के स्वरूप को समझने का प्रयास करें, तो परमात्मा के प्रति भीतरी बहुमान जगेगा। आन्तरिक प्रीति जाग्रत होगी। जिसके प्रति आन्तरिक प्रीति पैदा होती है उनका -

- दर्शन किये बिना चैन नहीं मिलता,
- पूजन किये बिना तृप्ति नहीं होती,
- स्तवन किये बिना आह्लाद नहीं होता!

परमात्मा के प्रति प्रीति जगी है हृदय में? प्रीतिपूर्ण हृदय परमात्मा की सच्ची पहचान कर सकता है। यों तो परमात्मतत्त्व अगम-अगोचर तत्त्व है। इन्द्रियों से और मन से अगोचर है। कोई भी इन्द्रिय का विषय 'परमात्म' नहीं हैं। मन का विषय भी 'परमात्मा' नहीं है। हाँ, परमात्मा तक पहुँचने का माध्यम अवश्य है मन! पवित्र और निर्मल मन।

सभा में से : परमात्मा तो इस समय हैं नहीं, तो पूजा कैसे करें!

महाराजश्री : परमात्मा की प्रतिमा में परमात्मा के दर्शन करने के हैं। परमात्मा के मन्दिर इसीलिए तो बनते हैं। परमात्मा की प्रतिमाएँ भी इसीलिए बनती हैं। इस अवसर्पिणीकाल में प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव के पुत्र भरत चक्रवर्ती ने अष्टापद के पहाड़ पर, जहाँ परमात्मा ऋषभदेव का निर्वाण हुआ था, वहाँ मन्दिर बनवाया था और चौबीस तीर्थंकर की प्रतिमाएँ स्थापित की थीं। धर्मग्रन्थों में यह बात पढ़ने को मिलती है। इसलिए कह सकते हैं कि मन्दिर और मूर्ति की संस्कृति असंख्य वर्ष पुरानी है। प्रतिमा को परमात्मा मानकर, तन और मन को उसमें एकाग्र करें। तन-मन को परमात्मा में स्थिर करने के लिए विधिपूर्वक मन्दिर जायँ और दर्शन-पूजन-स्तवन करें।

मन्दिर कैसे जायें?

घर से जब मन्दिर जाने के लिए निकलें तभी से अपने मन को परमात्मा के विचारों में जोड़ दें। हालाँकि, जिस हृदय में परमात्मप्रीति की शहनाई बजती रहती है, उसको अपने मन को परमात्मा के विचारों में जोड़ना नहीं पड़ता है, जुड़ा हुआ ही होता है। अर्थात् सहजता से जुड़ जाता है। परमात्मा के प्रति प्रीति जाग्रत होने के बाद, मनुष्य बाहर से दुनिया की कोई भी प्रवृत्ति करें, पर उसका मन तो परमात्मा के सान्निध्य में ही रहेगा। इसलिए आप लोगों से मैं कहता हूँ कि : 'सर्वप्रथम आप परमात्मा से प्रीति बाँधें। परमात्मा से प्रेम करें।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रेम कैसे होता है?

प्रेम होता है अनेक माध्यमों से। कुछ माध्यम इस प्रकार होते हैं :

- रूपवान् से प्रेम होता है,
- गुणवान् से प्रेम होता है,
- धनवान् से प्रेम होता है,
- शीलवान् से प्रेम होता है!

मैं आपसे पूछता हूँ कि परमात्मा में क्या नहीं है? परमात्मा का रूप देवराज इन्द्र से भी बढ़कर होता है न? परमात्मा के गुण अनन्त होते हैं न? परमात्मा का वैभव-समवसरण की ऋद्धि अद्‌भुत होती है न? कौन-सी कमी होती हैं परमात्मा में? संसार में उनसे बढ़कर कौन ज्यादा पुण्यशाली होता है?

भूल अपनी ही है, परमात्मा को जानने का प्रयत्न ही नहीं किया। परमात्मसृष्टि में-भावालोक में प्रवेश ही नहीं किया। हम संसार में ही उलझते रहे। वैषयिक सुखों को खोजते रहे और जो वैषयिक सुख मिले, उनमें रसलीन होते रहे। विषय-विवशता और कषाय-परवशता ने हमारी आध्यात्मिक हत्या कर डाली है। हम कैसे परमात्मा से प्रीति करेंगे?

परमात्मा से वह मनुष्य प्रीति कर सकता है कि जिसकी इन्द्रियाँ कुछ उपशान्त हुई हो, जिसका मन कुछ प्रशान्त हुआ हो। तन-मन का उन्माद कुछ कम हुआ हो। स्थिर, धीर और वीर पुरुष की परमात्मा से प्रीति बाँध सकते हैं। जो अस्थिर, अधीर और कायर पुरुष होते हैं, वे प्रीति नहीं बाँध सकते हैं। इसलिए कहता हूँ कि इन्द्रियों को व मन को कुछ उपशान्त तो करना ही पड़ेगा। मन कुछ उपशान्त होगा तो ही, परमात्मा के मन्दिर जाने के लिए घर से निकलोगे तभी से परमात्मा के विचार दिमाग में शुरू हो जायेंगे। दूर से मन्दिर का शिखर देखते ही 'नमो जिणाणं' आपके मुँह से निकल जायेगा। मस्तक झुक जायेगा।

सभा में से : परमात्मपूजन के लिए विचारशुद्धि के साथ देहशुद्धि और वस्त्रशुद्धि भी होनी चाहिए न?

महाराजश्री : अवश्य, देहशुद्धि और वस्त्रशुद्धि होनी ही चाहिए। जिस देह से परमात्मा की पावन मूर्ति को स्पर्श करना है, वह देह शुद्ध होनी ही चाहिए। देह वस्त्ररहित नहीं रह सकती, इसलिए शुद्ध वस्त्र पहनने चाहिए। परमात्मपूजन के लिए अलग ही वस्त्र रखने चाहिए। उन वस्त्रों को दूसरे किसी भी कार्य में नहीं पहनना चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

मन्दिर में क्या करेंगे? :

मन्दिर में प्रवेश करते समय आपको 'निसीहि' बोलना चाहिए। 'निसीहि' का अर्थ है : 'अब मैं संसार की-दुनिया की कोई भी बात नहीं करूँगा, कोई भी कार्य नहीं करूँगा।' निसीहि यानी निषेध। सांसारिक कार्यों का निषेध। यह निषेध पूजक को स्वयं स्वीकार करना होता है।

मंदिर में जाना है परमात्मा की पूजा के लिए। वहाँ पर भी यदि दुनियादारी की बातें करते रहें, संसार के कार्य करते रहें, तो फिर पूजा कैसे होगी? परमात्मा के विचार कैसे रहेंगे आपके मन में?

सारे विचारों को मंदिर के बाहर छोड़कर ही मंदिर में प्रवेश करने का है। मात्र विचार करने के हैं परमात्मा के। यदि आप पर मंदिर की व्यवस्था की जिम्मेदारी नहीं है तो व्यवस्था-विषयक विचार भी नहीं करने के हैं। हाँ, जिन द्रव्यों से परमात्मा की पूजा करनी हो, उन द्रव्यों का विचार कर सकते हैं।

अन्य विचारों से मुक्त बनने के लिए, परमात्मा के चारों ओर तीन प्रदक्षिणा देने की है। प्रदक्षिणा फिरते समय परमात्मा के विचारों में ही मन को स्थिर रखने का है। परमात्मा के चारों ओर फिरने से मन परमात्मा में स्थिर हो सकता है। विचार परमात्मा के ही करने चाहिए। मन में परमात्ममूर्ति को साकार बनाना चाहिए। मन की आँखों से परमात्मा को देखने का प्रयत्न करें।

तीन प्रदक्षिणा देने के बाद, परमात्मा के सामने खड़े होकर तीन बार प्रणाम करना चाहिए। प्रणाम करते समय कमर से झुकें। दो हाथ जोड़कर, मस्तक झुकाकर प्रणाम करें। इस क्रिया से नम्रता का भाव जाग्रत होगा। नम्रता के बिना नमस्कार नहीं हो सकता। तन विनम्र चाहिए, मन भी विनम्र चाहिए। परमात्मा के सामने किसी भी प्रकार का मान-अभिमान नहीं होना चाहिए।

कपड़ों का विवेक :

परमात्मपूजन के लिए वस्त्र-परिधान भी वैसा ही चाहिए कि जिससे नम्रता का भाव बना रहे। बिना सिलाई के कपड़े इसलिए पहनने का विधान किया गया है। पेंट-बुशशर्ट पहनकर पूजा करने जाओगे तो नम्रता का भाव नहीं आयेगा। मेक्सी या स्कर्ट पहनकर जाओगे तो नम्रता का भाव नहीं आयेगा। आज कई तरूण-तरूणी एवं युवक-युवती इस बात को नहीं समझते हैं और मनचाहे वस्त्र पहनकर पूजा करते हैं.... बहुत बुरी बात है। मंदिरों में अनुशासन भी नहीं है। हाँ, जब तक लोग विवेकी थे तब तक अनुशासन की

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आवश्यकता भी नहीं थी। परन्तु अब, जब लोगों में से विवेक जा रहा है, तब अनुशासन की आवश्यकता है। ज्यादातर लोगों में धार्मिक ज्ञान है नहीं और मंदिर तो जाते-आते हैं। गलतियाँ करते रहते हैं।

विशेषकर, परमात्मा जिनेश्वरदेव का पूजन श्वेत वस्त्र पहनकर करना चाहिए। लाल या हरे जैसे भड़कीले रंग के वस्त्रों से पूजा नहीं करनी चाहिए।

सभा में से : कई जैनमंदिरों में लाल एवं पीले रंग के वस्त्र, पूजा के लिए रखे हुए होते हैं, ऐसा क्यों?

महाराजश्री : रोजाना धोने नहीं पड़ें....इसलिए। वे वस्त्र 'कॉमन' सर्वसाधारण होते हैं न? ८/१० दिन में धुलते होंगे। ऐसे वस्त्र नहीं पहनने चाहिए। श्वेत, वस्त्र ही रखने चाहिए और वे भी अचानक कोई पूजक बाहर गाँव से आया हो और उसके पास पूजन के वस्त्र नहीं हों, उसके लिए रखने चाहिए।

पूजा के लिए शुद्ध पूजन-सामग्री होनी चाहिए। आप लोग सुखी हैं तो आपको अपनी ही सामग्री से पूजा करनी चाहिए। अथवा उतने रूपये मन्दिर की पेढ़ी में जमा करा देने चाहिए, जिससे मंदिर की पेढ़ी द्वारा रखी गई पूजन-सामग्री से आप पूजन कर सकें।

पूजा के प्रकार :

पूजन तीन विभागों में विभाजित हैं :

१. अंगपूजा,

२. अग्रपूजा,

३. भावपूजा।

अब क्रमशः मैं आपको इन तीनों पूजाओं की विधि बताता हूँ। ध्यान से सुनें और याद रखें।

अंगपूजा :

सर्वप्रथम करने की है अभिषेकपूजा, जिसको जलपूजा भी कहते हैं। यह पूजा करने से पहले आपको, मेरू पर्वत पर ६४ देवेन्द्र मिलकर परमात्मा को नहलाते हैं-उस दृश्य की कल्पना करनी चाहिए। कितने उमंग से और उल्लास से देव परमात्मा को नहलाते हैं....! आपको भी उमंग से परमात्मा को नहलाना है। दो हाथ में कलश लेकर, परमात्मा की बाल्यावस्था को कल्पना में लाकर भक्तिभाव से अभिषेक करना चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

सभा में से : अभिषेक जो किया जाता है वह दूधमिश्रित जल से किया जाता है, ऐसा क्यों?

महाराजश्री : देवलोक के देव परमात्मा का अभिषेक करने के लिए क्षीरसागर का पानी लाते हैं। क्षीरसागर का पानी दूध जैसा होता है, इसलिए आपको भी वैसा पानी चाहिए न! आप क्षीरसागर के पास तो जा नहीं सकते। इसलिए पानी में दूध मिलाकर क्षीरसागर के पानी जैसा पानी बना लेते हैं।

अभिषेक करने के बाद, स्वच्छ और मुलायम वस्त्र से प्रतिमाजी को पोंछना चाहिए। इस कार्य में दो विकृति प्रविष्ट हो गई हैं। एक है खसकूंची और दूसरी है तांबे की या पीत्तल की सूई।

परमात्मा की मूर्ति की सफाई इस प्रकार नहीं करना चाहिए। इससे मूर्ति को तो नुकसान होता ही है, साथ साथ हृदय के भावों को भी नुकसान होता है। कपड़े से ही सफाई करनी चाहिए।

दूसरी पूजा है चन्दनपूजा :

परमात्मा के नौ अंगों पर केसर मिश्रित चन्दन से पूजा करनी चाहिए। केवल चन्दन से भी पूजा हो सकती है। एक-एक अंग की पूजा करते समय उन अंगों का महत्त्व ख्याल में होना चाहिए। नव अंग परमात्मशक्ति प्राप्त करने के नव केन्द्रबिन्दु हैं। दाहिने हाथ की अनामिका अंगुली से पूजा करने का विधान है। अनामिका में परमात्मशक्ति ग्रहण करने की क्षमता होती है।

तीसरी पूजा है पुष्पपूजा :

चन्दनपूजा के बाद ताजे सुगन्धी पुष्पों से पूजा करनी चाहिए। बासी पुष्प भगवान को नहीं चढ़ाने चाहिए। पुष्पों को सूई से बींधने भी नहीं चाहिए। पुष्पों की पंखुड़ियाँ तोड़नी नहीं चाहिए। पुष्पपूजा से भावोल्लास की वृद्धि होती है। भाववृद्धि....शुभ भावों की वृद्धि ही तो पूजा का उद्देश्य है। मूर्ति पर जैसे-तैसे पुष्प नहीं चढ़ाने चाहिए। भगवान का सौन्दर्य बढ़े इस प्रकार पुष्प चढ़ाने चाहिए। पूजक के पास वैसी दृष्टि होनी चाहिए। यदि सौन्दर्यबोध नहीं हो तो भगवान के उत्संग में पुष्प रख देने चाहिए।

चौथी पूजा है धूप की :

स्वयं जलकर दूसरों को सुगन्ध देनेवाला धूप उच्चतम प्रेरणा देता है। 'मुझे स्वयं कष्ट सहन करके दूसरों के दुःख दूर करने हैं, दूसरों को सुख देना है', यह प्रेरणा धूपपूजा में से लेने की है। परमात्मा में अनंत गुणों की सुवास है। 'हे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रभो, मेरी आत्मा में भी गुणों की सुवास प्रगट हो, वैसी कृपा करें।' ऐसी प्रार्थना करने का है। दुर्गुणों की दुर्गंध से घोर घृणा हो गई होगी तो ही यह प्रार्थना सार्थक बनेगी। दुर्गुण निकाल देने हों और सद्‌गुण पाने हों तो परमात्मा की धूपपूजा भाव से करें। यह धूपपूजा 'अग्रपूजा' कही जाती है। चूँकि परमात्मा के सामने खड़े होकर धूपपूजा करने की होती है। जैसे धूपपूजा अग्रपूजा है वैसे दीपकपूजा, अक्षतपूजा, नैवेद्यपूजा और फलपूजा भी अग्रपूजा है।

पाँचवी पूजा है दीपकपूजा :

दीपक से परमात्मा की पूजा करने की है। दीपक ज्ञान का प्रतीक है। परमात्मा का केवलज्ञान रत्नदीपक समान है। रत्न का प्रकाश जैसे बुझता नहीं हैं वैसे केवलज्ञान कभी जाता नहीं है। दीपकपूजा करते समय हमें परमात्मा से केवलज्ञान की-पूर्णज्ञान की याचना करनी है। हमारे भीतर जो अज्ञानता का घोर अन्धकार है, उस अन्धकार को मिटाने की प्रार्थना करनी है। 'हे परमात्मन्, मेरा अज्ञान-अन्धकार मिटा दो और ज्ञान का-सम्यग्ज्ञान का प्रकाश फैला दो, मेरी आत्मा में ज्ञान का रत्नदीप प्रगट करने की कृपा करो....' ऐसी हार्दिक प्रार्थना करने की है। प्रतीक के माध्यम से हमें भावात्मक धर्म की आराधना करने की है। प्रतीकों की सार्थकता इसी में है। प्रतीकों का आयोजन निरर्थक नहीं होता है। जो लोग प्रतीकों की सार्थकता सोच नहीं सकते हैं, समझ नहीं सकते हैं, वे लोग प्रतीकों का अपलाप करते हैं, परन्तु तर्कहीन अपलाप करने से क्या?

छट्ठी पूजा है अक्षतपूजा :

'अक्षत' अक्षयपद का प्रतीक माना गया है। अक्षयपद यानी मोक्ष, अक्षयपद यानी निर्वाण। अक्षत से प्रभु के सामने स्वस्तिक बनाया जाता है। स्वस्तिक संसार का प्रतीक हैं। संसार की चार गति है न? देवगति, मनुष्यगति, तिर्यंचगति और नरकगति। स्वस्तिक इन चार गतियों का प्रतीक है। स्वस्तिक बनाकर हम परमात्मा से कहते हैं : 'हे प्रभो, इस चतुर्गतिमय संसार से मुझे मुक्त होना है। आपके अचिन्त्य अनुग्रह से ही मेरी मुक्ति हो सकती है। आपकी आज्ञा के अनुसार मैं सम्यक्‌दर्शन, ज्ञान और चारित्र्य की आराधना करूँगा....।' इस तीन तत्त्वों की प्रतीक हैं अक्षत की-चावल की तीन ढेरियाँ! जो स्वस्तिक के ऊपर की जाती हैं। मोक्ष का प्रतीक है अर्धचन्द्राकार सिद्धशिला! जो तीन ढेरियों के ऊपर बनायी जाती है। जो अक्षयपद हमें पाना है, उस भावना का आविर्भाव सिद्धशिला बनाकर किया जाता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

चाहते हो न अक्षयपद? आत्मा की परमविशुद्ध अवस्था ही अक्षयपद है। चूँकि आत्मा की परमविशुद्ध अवस्था प्रगट होने पर, वह अवस्था नष्ट नहीं होती है। जो नष्ट न हो कभी, वह अक्षय कहलाता है।

अक्षतपूजा करते समय, 'संसार से मेरा छुटकारा हो और सिद्धशिला पर मेरा शाश्वत् अवस्थान हो....' इसी भावना में मन को जोड़ने का है। इस भावना को विशेष पुष्ट करने के लिए, स्वस्तिक के ऊपर 'नैवेद्य' यानी किसी मिठाई को स्थापित किया जाता है।

सातवीं पूजा है नैवेद्यपूजा :

स्वस्तिक है संसार का प्रतीक और नैवेद्य है संसार के बन्धन का प्रतीक। आहार....भोजन से ही तो संसार है। भोजन की आसक्ति कि जिसको 'आहार-संज्ञा' कहते हैं, वही संसार का बहुत बड़ा बन्धन है। उस बन्धन को तोड़ने के लिए नैवेद्यपूजा की जाती है। परमात्मा से प्रार्थना करने की है : 'हे करुणासिन्धु! मुझे अब आहारी नहीं रहना है, अणाहारी बनना है, इसलिए मैं आपको नैवेद्य चढ़ाता हूँ....मेरी आहार-संज्ञा तोड़ने की कृपा करें। मुझे अणाहारी होना है।'

आठवी पूजा है फलपूजा :

पूजा करके कौन-सा फल चाहिए? परमात्मपूजा से कौन-सा श्रेष्ठ फल मिलता है? मोक्ष! इसलिए सिद्धशिला पर फल चढ़ाया जाता है। फल से 'मोक्षफल' की अभिलाषा व्यक्त होती है। फल मोक्षफल का प्रतीक है।

अग्रपूजा पूर्ण होने पर पूजक का हृदय हर्ष से भर जाता है। हर्षविभोर हृदय....अपना हर्ष 'घंटनाद' करके अभिव्यक्त करता है। 'हर्ष' एक ऐसा भाव है कि वह अभिव्यक्ति चाहता ही है! मन्दिर में दूसरे माध्यमों से हर्ष की अभिव्यक्ति नहीं की जाती, इसलिए 'घंटनाद' किया जाता है। 'घंटनाद' एक निर्दोष क्रिया है। वातावरण को प्रफुल्लित करनेवाली क्रिया है।

इस प्रकार द्रव्यक्रिया पूर्ण कर, भावपूजा में प्रवेश करना है।

द्रव्यपूजा और भावपूजा के बीच एक बहुत ही रसपूर्ण क्रिया करने की होती है, वह है परमात्मा की तीन अवस्थाओं का चिन्तन।

१. छद्मस्थ-अवस्था,

२. कैवल्य-अवस्था,

३. रूपातीत-अवस्था।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ये तीन अवस्थाएँ होती हैं तीर्थंकर परमात्मा की। छद्मस्थ अवस्था की अवान्तर तीन अवस्थाएँ होती हैं :

- बाल्य-अवस्था,
- राज्य-अवस्था,
- श्रमण-अवस्था।

अब मैं आपको एक-एक अवस्था का चिन्तन कैसे करना चाहिए, वह बताता हूँ।

छद्मस्थ-अवस्था :

छद्मस्थ-अवस्था में पहली है बाल्यावस्था। भगवंत का जन्मकाल स्मृति में लायें। जन्म होता है भगवान का और प्रकाश होता है तीनों लोक में! देवलोक के प्रमुख जो ६४ इन्द्र होते हैं वे बालस्वरूप भगवान को मेरु पर्वत पर ले जाते हैं। देवेन्द्रों को भी भगवान के प्रति कितनी अपार श्रद्धा होती है....भक्ति होती है? कैसा हार्दिक प्रेम होता है? मेरु पर्वत पर ले जाकर अपूर्व उल्लास से स्नान करवाते हैं। बाद में गाते हैं....नाचते हैं।

इस दृश्य को कल्पना की आँखों से देखकर चिन्तन करने का है कि : 'हे भगवंत, आपका कैसा अपूर्व पुण्योदय! आपका रूप अद्वितीय....आपकी शक्ति अद्वितीय....आपके गुण भी अद्वितीय। आप 'अवधिज्ञानी' होते हैं। आप बाल्यकाल में भी गुणगंभीर होते हैं। हे वीतराग, आपके सामने देवेन्द्र नाचते थे तो भी आपके मन में अहंकार पैदा नहीं हुआ, अपनी विभूति का गर्व नहीं हुआ....! चूँकि आप जब गर्भस्थ थे तभी से विरक्त थे! हे प्रभो! मुझे आपकी वह विरक्ति और स्वस्थता....बहुत आकर्षित करती है।

'हे परमगुरु, आपका जन्म राजपरिवार में हुआ था। विपुल राजवैभव आपको प्राप्त थे। आप पले भी वैभवों में। आप राजा भी बने....परन्तु आपका आत्मभाव अनासक्त रहा। आप निर्लेप रहे। पाँच इन्द्रियों का एक भी विषय आपको आकर्षित नहीं कर सका। सभी प्रकार के उत्तम वैषयिक सुख होते हुए भी और भोगते हुए भी आपकी आत्मा आकाश की तरह निर्लेप रही....! धन्य है आपकी निर्लेपता....! हे प्रभो, मुझे वैसी निर्लेपता देने की कृपा करें....।'

'हे पुरुषश्रेष्ठ, ज्यों संसारवास की अवधि पूर्ण हुई त्यों ही संसार का सहजता से त्याग कर दिया....। आप त्यागी अनगार बन गये। वैभव-संपत्ति और स्नेही-स्वजन....सभी का त्याग कर दिया। शरीर का ममत्व भी त्याग

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दिया....उग्र तपश्चर्या की। गहरा आत्मध्यान किया। अनेक कष्ट स्वेच्छा से सहन किये। 'कर्म-क्षय' की कठोर साधना में आप धीर और वीर बने....और आप सर्वज्ञ-वीतराग बने।'

इस प्रकार छद्मस्थ-अवस्था का चिन्तन करके कैवल्य-अवस्था का चिन्तन शुरू करना चाहिए।

कैवल्य-अवस्था :

'हे त्रिभुवन गुरु! ज्यों ही आप सर्वज्ञ-वीतराग बने, देवलोक के देव-देवेन्द्र इस धरा पर उतर आये और 'समवसरण' की दिव्य रचना की। आप समवसरण में सिंहासन पर आरूढ़ हुए। अशोक वृक्ष की शीतल छाया.... ऊपर तीन छत्र, पीछे प्रकाशमान भामंडल, दोनों तरफ यक्षों का चामर ढोना.... आकाश में देवों का दुंदुभि-वादन, दिव्य ध्वनि, पुष्पवृष्टि....। कैसा अद्‌भुत पुण्यप्रकर्ष?

'हे करुणासिन्धु! कैसा आपका केवलज्ञान! कैसी आपकी दिव्य वाणी! जहाँ जहाँ आप पधारते हैं लोगों के रोग दूर हो जाते हैं और देव-देवेन्द्र भी आपकी चरणसेवा करते हैं। विश्व को मोक्षमार्ग का उपदेश देकर परमसुख-परमशान्ति का मार्ग बताया....कितना परम उपकार किया! न राग, न द्वेष.... फिर भी अपार करुणा। हे भगवंत मेरे पर भी करुणा बरसायें....मेरा उद्धार करें।'

रूपातीत-अवस्था :

'हे चिदानन्दरूपी! सभी कर्मों का नाश हुआ.... आप अरूपी बन गये। अनामी बन गये, अजर-अमर बन गये। अब कभी भी आप इस चतुर्गतिमय संसार में जन्म नहीं लेंगे। आप पूर्णानन्दी बन गये....। न कोई रोग, न कोई शोक। न कोई दुःख, न कोई अशान्ति। हे परमात्मन्, मुझ पर भी अनुग्रह करो....मुझे भी अभेदभाव से आपके आत्मस्वरूप में मिला दो। आपकी आत्मज्योति में मेरी आत्मज्योति को मिला दो....।'

चैत्यवंदन की क्रिया :

❍ इस प्रकार अवस्था-चिन्तन करने के पश्चात् चैत्यवंदन करने के लिए तत्पर बनें। सर्वप्रथम 'इरियावहिया' सूत्र के ईर्यापथ-प्रतिक्रमण कर, दुपट्टे के आंचल से तीन बार भूमि-प्रमार्जन कर, तीन बार पंचांग-प्रणिपात यानी खमासमण दें।

❍ चैत्यवंदन के जो सूत्र बोले उसमें अपने मन को जोड़ें। सूत्रों के अर्थ में मन को जोड़ें और परमात्मा की प्रतिमा में मन को जोड़ें। सूत्र-अर्थ और प्रतिमा में मन को जोड़ने का है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

❍ जिस दिशा में परमात्मा विराजमान हो, उसी दिशा में देखने का है। उस दिशा के अलावा तीन दिशाओं का त्याग करने का है। यानी तीन दिशाओं में देखने का नहीं है।

❍ चैत्यवंदन करते समय योगमुद्रा, मुक्ताशुक्तिमुद्रा और जिनमुद्रा करने की होती है। अर्थात् दो हाथ भिन्न-भिन्न तरह जोड़ने के होते हैं। चित्त के भावों की शुद्धि-वृद्धि में मुद्राएँ भी विशिष्ट कारण बनती है। मुद्राएँ नहीं आती हों तो अवश्य सीख लेनी चाहिए।

❍ चैत्यवंदन की क्रिया में जो सूत्र बोले जाते हैं, उन सूत्रों में तीन सूत्र 'प्रणिधान-सूत्र' हैं। एक सूत्र में (जावंति चेइयाइ) तीनों लोक में जितने जिनमन्दिर हैं उनकी वंदना की जाती है। दूसरे सूत्र में (जावंत केवि साहू) ढाई द्वीप में जितने साधु भगवंत हैं, उनको वंदना की जाती है। तीसरे सूत्र में (जय वीयराय) परमात्मा से प्रार्थना की जाती हैं। तीनों वक्त चित्त को एकदम एकाग्र करना, वह प्रणिधान है। परन्तु प्रणिधान तभी हो सकेगा जब आपको सूत्रों के अर्थ का ज्ञान होगा। अर्थज्ञान तो पाना ही चाहिए। सूत्रों का अर्थ समझे बिना आप कैसे धर्मक्रिया करते हैं, मैं नहीं समझ पाता। आप लोगों के मन में अर्थज्ञान पानेकी इच्छा क्यों नहीं जगती? परमात्मा की पूजा करते हैं, सामायिक करते हैं, प्रतिक्रमण करते हैं.... परन्तु सूत्रों का अर्थज्ञान प्राप्त नहीं करते हैं....आश्चर्य!

'जय वीयराय' सूत्र का अर्थ जाने बिना आप परमात्मा से कैसे प्रार्थना कर सकते हैं? केवल सूत्रपाठ कर लेने से हार्दिक प्रार्थना नहीं हो सकती है। परमात्मपूजा एकदम भाव से किया करें। सभी मंगलों में यह श्रेष्ठ मंगल है। चित्तशान्ति पाने का और आत्मनिर्मलता पाने का श्रेष्ठ मार्ग है। परमात्मा की पूजा किये बिना मुँह में पानी भी नहीं डालना चाहिए, भोजन नहीं करना चाहिए।

परमात्मा से हार्दिक प्रेम हो जाने पर, उनका दर्शन-पूजन किये बिना भोजन भाता भी नहीं है। ऐसी मानसिक स्थिति बन जाती है।

दैनिक जीवन में परमात्मपूजा को स्थान दे दें।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***अलग-अलग परंपराओं में अलग-अलग पद्धतियाँ होती है पूजा की। तौर-तरीकों की सत्यता-असत्यता के वाद-विवाद में उलझने के बजाय जिस परंपरा में अपनी आस्था हो, श्रद्धा हो.... प्रज्ञा हो उसके मुताबिक करना चाहिए।***
- ***अतिथि-सत्कार बड़ा धर्म है। इस धर्म ने ही भगवान महावीर की आत्मा को नयसार के भव में समयक्त्व का बीज दिया। तीर्थंकरत्व की बुनियाद वहीं पर रची गयी थी।***
- ***प्रत्येक जगह पर उचित आचरण, उचित कर्तव्य का पालन एवं समुचित व्यवहार ही जीवन को धर्ममय बना सकता है। परमात्मा के दर्शन-वंदन-पूजन-स्तवन करते करते कभी न कभी तो हृदय का*** Pin Point ***खुल जायेगा।***
- ***परमात्म-प्रीत का फव्वारा फूटेगा भीतर से! फिर आनन्द की अनुभूति सहज बनेगी।***
- ***सेवा करते समय उपकार करने की भावना को पनपने मत देना। अपने कर्तव्य पालन को मद्देनजर रखना।***

प्रवचन : ७०

परम कृपानिधि, महान् श्रूतधर, आचार्यश्री हरिभद्रसूरीश्वरजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में, गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हुए, उन्नीसवाँ सामान्य धर्म बता रहे हैं - 'देव-अतिथि और दीनजनों की उचित सेवा।'

परंपरा के अनुसार करो :

एक बात काफी स्पष्टता से समझना : ये सामान्य धर्म जो बताये जा रहे हैं, वे सभी मार्गानुसारी मनुष्यों के लिए बताये जा रहें हैं। जैन हो, शिव हो, वैष्णव हो, बौद्ध हो....कोई भी धर्म-परंपरा का हो। यदि वह मार्गानुसारी होगा, यानी मोक्षमार्ग के प्रति अद्वेषी होगा, तो ये सामान्य धर्म उसके जीवन में होंगे, अथवा इन सामान्य धर्मों को जीवन में जीने का प्रयत्न करता होगा। देवपूजा, मनुष्य को अपनी अपनी धर्मपरंपरानुसार करने की है। आप लोग जैन हैं,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इसलिए जैन-परंपरा की पूजा-पद्धति आपको बताई है। हालाँकि, दिगम्बर जैन-परंपरा की पूजा-पद्धति आप जैसी नहीं है। वैसे दूसरे दूसरे 'गच्छों' की पूजा-पद्धतियों में थोड़ा बहुत अन्तर देखने को मिलता है। इन पूजा-पद्धतियों को लेकर भूतकाल में अनेक वाद-विवाद भी हुए हैं।

विवाद नहीं :

ऐसे वाद-विवादों में उलझना नहीं है। वाद-विवादों में उलझने से मूल बात 'परमात्मभक्ति' की विस्मृति हो जाती है। परमात्म-प्रीति नष्ट हो जाती है। इसलिए आप लोग वाद-विवादों में उलझना मत। दूसरी बात, आप लोग शास्त्रज्ञाता तो हैं नहीं। शास्त्रज्ञान के बिना वाद-विवाद कैसे कर सकोगे? हाँ, वाद-विवाद, शास्त्रज्ञान के बिना और तर्कशास्त्र के ज्ञान के बिना नहीं हो सकता। यदि आपको वाद-विवाद करना है तो शास्त्रों को पढ़ना शुरू करो। तर्कशास्त्र, न्यायशास्त्र भी पढ़ो। पढ़ोगे? बिना पढ़े ही वाद-विवाद करना है? तब तो मूर्ख कहलाओगे! आजकल ऐसे मूर्खों की जमात अपने समाज में बढ़ने लगी है।

किसी साधु-मुनिराज के सौ-दो सौ प्रवचन सुन लिये, कुछ पाँच-पचास धार्मिक किताबें पढ़ डालीं....किसी मुनिराज ने कह दिया : तुम तो अच्छे विद्वान् हो गये....। बस, वह अपने आपको सर्वज्ञ मानने लगता है! अपने गले में किसी 'गुरु' की माला पहनकर फिरता है और दूसरे मुनिजनों से शाब्दिक युद्ध करता फिरता है। कोई एक भी गंभीर धर्मग्रन्थ का अध्ययन, परिशीलन नहीं किया होता है। सब उधार ही उधार। वाद-विवाद करके अपना अहंकार पुष्ट करता है और दूसरों का तिरस्कार करता रहता है। आप लोग बचते रहना.... ऐसे लोगों के संगठनों में भी जुड़ना मत।

आप लोग आपकी परंपरानुसार परमात्मा की पूजा करते रहें और अतिथिजनों की सेवा करते रहें। 'अतिथि' किसको कहते हैं-समझ लें।

अतिथि कौन? :

जो महात्मा सदैव-प्रतिदिन शुभ और सुन्दर क्रियाकलापों में प्रवृत्त होते हैं, प्रतिदिन तप और संयम की साधना करते रहते हैं, वह अतिथि कहलाते हैं। उनको 'आज अष्टमी है', 'आज चतुर्दशी है....' ऐसा भेद नहीं होता है। उनके लिए रोजाना अष्टमी होती है, रोजाना चतुर्दशी होती है। जिनका चरित्र

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

निर्मल होता है और जो आत्मविशुद्धि की साधना में निरत होते हैं-ऐसे अतिथियों की उचित सेवा करनी चाहिए।

आप जानते हैं न कि अपने देश की संस्कृति में, मोक्षमार्ग की आराधना को महत्त्वपूर्ण स्थान मिला हुआ है। जो कोई स्त्री-पुरुष मोक्षमार्ग की आराधना करने के लिए साधुता का स्वीकार कर लेते हैं उनको उच्चतम आदर की दृष्टि से देखा जाता है। उनकी सेवा-भक्ति की जाती है। उनको स्वयं अन्न, वस्त्र और मकान की चिंता करने की नहीं होती हैं। गाँव-गाँव और नगर-नगर के लोग उनको भोजन देते हैं, वस्त्र देते हैं और अल्पकालीन निवास के लिए मकान देते हैं। हृदय के भाव से देते हैं, आदर से देते हैं, आग्रह करके देते हैं। इनको अन्न, वस्त्र और मकान की चिन्ता से मुक्त इसलिए रखा जाता है, चूँकि वे आत्मसाधना में बिना किसी विक्षेप, लीन रह सकते हैं। शास्त्राध्ययन, चिन्तन-मनन और लेखन में सदैव तत्पर रह सकते हैं। साधु-संन्यासी के लिए भिक्षावृत्ति ही शास्त्रविहित है। जैन-परंपरा के अलावा दूसरे धर्मों की परंपराओं में से प्रायः भिक्षावृत्ति निकल गयी है। फिर भी भिक्षावृत्ति से जीनेवाले हैं जरूर।

अतिथि-सत्कार ने आत्मा की पहचान दी :

ऐसे अतिथियों की भोजन से, वस्त्र से, पात्र से सेवा करनी चाहिए। ऐसे अतिथिजनों का समागम महान् पुण्योदय से मिलता है। यदि उनके हृदय के आशीर्वाद मिल जायँ, तो ज्ञानदृष्टि खुल जाय! श्रमण भगवान महावीरस्वामी की आध्यात्मिक-यात्रा का प्रारंभ ऐसे ही एक महान् अतिथि की सेवा से हुआ था....। महावीर तो बाद में....असंख्य वर्षों के बाद बने। जिस जन्म में अन्तःचेतना जगी थी वह जन्म था 'नयसार' नाम के ग्रामपति का। मजदूरों को लेकर वह गया था जंगल में लकड़ी कटवाने के लिए। मध्याह्न के समय जब भोजन तैयार हुआ तब उसने सोचा : 'कोई अतिथि मिल जाय तो उसको भोजन करा कर मैं भोजन करूँ।' जंगल में वह अतिथि को खोजता है।

आप लोग शायद शहर में भी अतिथि को खोजते नहीं होंगे? भोजन करने से पहले 'अतिथि' की स्मृति भी आती है? हाँ, जिसके हृदय में मोक्षमार्ग की प्रीति होगी, आत्मविशुद्धि की दृष्टि होगी, उसको अतिथियों की स्मृति आयेगी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

ही। अथवा, जिनको सांस्कृतिक परम्परा मिली होगी अतिथि-सत्कार की, उनको भी भोजन के समय अतिथि की स्मृति आयेगी।

नयसार को वैसी अतिथि-सत्कार की परंपरा मिली थी। भाग्य-योग से उसको जंगल में भी अतिथि मिल गये। वे एक महामुनि थे। रास्ता भूल गये थे, नयसार ने देख लिया। उनके पास गया और आदर से अपने पड़ाव पर ले आया। भक्तिभाव से भिक्षा दी। मुनिराज ने भोजन किया, विश्राम किया और वहाँ से आगे बढ़े। नयसार उनको रास्ता बताने के लिए साथ चला। मुनिराज ने नयसार को तब नवकार मंत्र दिया और धर्मबोध दिया। नयसार की आत्म-चेतना जाग्रत हुई। उस समय नयसार कहाँ जानता था कि वह स्वयं असंख्य वर्षों के बाद करोड़ों जीवों की आध्यात्मिक चेतना जाग्रत करनेवाले तीर्थंकर महावीर होनेवाले हैं।

अतिथि-सत्कार कैसे? :

अतिथि-सत्कार करने में औचित्य का पालन करना चाहिए। औचित्य-पालन तभी हो सकेगा जब अतिथि की पहचान होगी। किस समय, किस प्रकार अतिथि की सेवा करनी चाहिए, उसको कहते हैं औचित्य। दीनजनों की सेवा में भी औचित्य का बोध अनिवार्य है। यों तो जीवन के तमाम कार्यों में औचित्य-पालन करने का होता है। मनुष्य कितना भी गुणवान् हो, परन्तु औचित्यबोध नहीं हो तो उसकी गुणसमृद्धि कोई विशेष महत्त्व नहीं रखती है। कुछ उदाहरण से यह बात समझाता हूँ :

१. अतिथि को कोई शारीरिक व्याधि है, आपको उचित औषध प्रदान करना चाहिए और अनुपान देना चाहिए। जिस भोजन से व्याधि बढ़ती हो वह भोजन नहीं देना चाहिए, चाहे वह भोजन कितना भी उत्तम क्यों न हो।

२. अतिथि जब अपने ज्ञान-ध्यान में लीन हो तब विक्षेप नहीं करना चाहिए। उनके ज्ञान-ध्यान में सहायक बनना चाहिए।

३. अतिथि को ठहरने के लिए ऐसा स्थान देना चाहिए कि उनकी आराधना में विक्षेप न हो।

४. अतिथि के साथ विनय से, नम्रता से बात करनी चाहिए।

यह है औचित्य। औचित्य के विचार में देश, काल, व्यक्ति, अवस्था वगैरह का चिन्तन होना चाहिए। अतिथि का गौरव बना रहे और आप लोगों के सद्भाव की वृद्धि होती रहे-यह लक्ष होना चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक शहर में हमें जाना था। अपरिचित शहर था। उपाश्रय कहाँ आया, हम जानते नहीं थे। हमने शहर में प्रवेश किया। एक भाई ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया। हमने उनसे ही पूछा : 'भाई, उपाश्रय का रास्ता बताओगे?' उसने कहा : 'महाराज, सीधे सीधे इसी रोड़ पर चले जाओ, आगे बायीं ओर मुड़ जाना....।' वह चला गया। हम आगे बढ़े.... एक मोड़ आया। हमने वहाँ दूसरे व्यक्ति से पूछा : 'उपाश्रय का रास्ता....' उस भाई ने तो इशारे से ही रास्ता बता दिया और चलता बना! हम तो पूछते-पूछते उपाश्रय पहुँच गये....परन्तु जिनको-जिनको पूछा, किसी में औचित्यबोध नहीं पाया।

'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ के टीकाकार आचार्यश्री ने 'औचित्य-पालन' को कितना महत्त्वपूर्ण बताया है। उन्होंने कहा है :

औचित्यमेकमेकत्र गुणानां राशिरेकतः।
विषायते गुणग्राम औचित्यपरिवर्जितः ।।

'एक ओर अकेला औचित्य और दूसरी ओर गुणों का समूह-दोनों समान हैं। औचित्य के बिना गुणों का समूह भी जहर जैसा है।'

औचित्य की उपेक्षा मत करें :

तपश्चर्या करते हो, परन्तु औचित्य नहीं है; दान देते हो, परन्तु औचित्य नहीं है शील का पालन करते हो, परन्तु औचित्य नहीं है; प्रभुपूजा करते हो, परन्तु औचित्य नहीं है.... तो आपके तप-दान-शील-प्रभुपूजा वगैरह जहर के बराबर हैं। चूँकि आपने औचित्य-पालन नहीं किया। कहाँ कैसा औचित्य-पालन करना चाहिए, वह स्वयं समझने का होता है। इतनी बुद्धि तो होनी चाहिए। बुद्धि के बिना धर्माराधना कैसे हो सकती है? जिन लोगों में बुद्धि नहीं होती है और धर्मक्रियाएँ करते हैं, वे औचित्य-पालन नहीं कर पाते हैं। कुछ उदाहरण बताता हूँ।

❍ एक भाई मन्दिर में जाकर पूजा तो करते हैं, परन्तु साधुपुरुषों को वंदना नहीं करते, भिक्षा के लिए प्रार्थना भी नहीं करते! दीनजनों का तिरस्कार करते हैं।

❍ एक भाई वैसे हैं कि जो साधुपुरुषों को वंदना करते हैं, अपने घर आये हुए साधुपुरूषों को भिक्षा भी देते हैं, परन्तु प्रभुपूजा नहीं करते हैं और दीन-दुःखीजनों को दान नहीं देते हैं!

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

❍ एक भाई ऐसे हैं, जो प्रभुपूजा करते हैं, दीन-दुःखीजनों को दान देते हैं, परन्तु अतिथि-सत्कार नहीं करते हैं।

ये सारे उदाहरण हैं औचित्यभंग करनेवालों के।

ये तीनों कार्य गृहस्थ जीवन के शृंगार हैं। यदि आपके घर में प्रभुपूजा होती है, अतिथि का सत्कार होता है और दीनजनों को दान मिलता है, तो आपका घर प्रशंसनीय बनता है। समाज में और शिष्टपुरुषों में आप श्लाघनीय बनते हो।

ये तीन शुभ कार्य तभी औचित्यपूर्ण ढंग से हो सकते हैं, जब तीन प्रकार के शुभ भाव आपके हृदय में जगे होंगे।

१. परमात्मा के प्रति-भक्ति का भाव।

२. साधुपुरुषों के प्रति 'ये मोक्षमार्ग के आराधक हैं', ऐसा समझकर अहोभाव। यानी मोक्षमार्ग की आराधना का भाव-प्रमोद भाव।

३. दीन-दुःखी के प्रति करुणा का भाव।

प्रीति-भक्ति का भाव :

परमात्मा के प्रति किसी जीवात्मा को सहजता से प्रीति हो जाती है, तो किसी जीव को प्रीति करनी पड़ती है। परमात्मा का मन्दिर और उनकी मूर्ति, परमात्मतत्त्व की स्मृति करवाते हैं। परमात्मा की स्मृति में परमात्मा के अनन्त गुण, असंख्य उपकार....इत्यादि समाविष्ट होते हैं। स्मृति से प्रीति जाग्रत होती है। प्रीति से भक्ति पैदा होती है। प्रीति तीन बातें पैदा करती हैं :

दर्शन, स्पर्शन और कीर्तन।

जिसके प्रति प्रीति होती है, उसके दर्शन किये बिना चैन नहीं मिलता। इसलिए प्रभात में उठते ही पहला स्मरण परमात्मा का किया जाता है। फिर मंदिर जाकर परमात्मा की मूर्ति का दर्शन करते हो, दर्शन के बाद पूजन करते हो और कीर्तन भी करते हो। यह सब 'प्रीति' ही करवाती है।

सभा में से : परमात्मा के प्रति प्रीति न हो और कोई जबरन् दर्शन-पूजन करवायें, तो क्या वह उचित है?

महाराजश्री : आपसे जबरन् दर्शन-पूजन करवानेवालों की आपके प्रति प्रीति होगी? वे आपको चाहते होंगे? वे यह भी चाहते होंगे कि आप परमात्मा से प्रीति करनेवाले बनें! उनकी ऐसी धारणा होनी चाहिए कि 'ये मेरे स्नेही

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

प्रतिदिन मंदिर में जाते रहेंगे तो कभी न कभी परमात्मा के प्रेमी बनेंगे, परमात्मा के भक्त बनेंगे....।' ऐसी धारणा से वे आपको आग्रह करते होंगे? आप उनकी भावना को समझें। प्रतिदिन मंदिर जाते रहेंगे, परमात्मा की मूर्ति की पूजा करते रहेंगे.... तो एक दिन कभी न कभी Pin Point खुल जायेगा। हृदय में परमात्म-प्रेम का सागर हिलोरें लेता रहेगा। आपको दिव्य आनंद की अनुभूति होती रहेगी।

प्रमोद-भाव :

विशिष्ट आराधक-मोक्षमार्ग के आराधक-सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्र्य के आराधक साधुपुरुषों को देखकर, उनके प्रति प्रमोद-भाव पैदा होना चाहिए। वे महापुरुष कैसा उत्तम जीवन जीते हैं, स्वेच्छा से कितने कष्ट सहन करते हैं, उस विषय में चिन्तन करना चाहिए। इस विषय में आपका चिन्तन-मनन होगा तो ही अतिथिजनों के प्रति आदरभाव पैदा होगा।

एक सावधानी रखना। सभी अतिथि-साधुपुरुष उत्कृष्ट कोटि के नहीं होते हैं। उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य - तीनों कक्षा के अतिथि होते हैं। सभी अतिथियों से त्याग-तप और संयम की एकसमान अपेक्षा नहीं रखना। दूसरी बात भी कह दूँ। जो पूज्य होते हैं, वंदनीय होते हैं उनकी कभी भी आलोचना नहीं करना। हाँ, यदि आपको संपूर्ण सत्य वृत्तान्त ज्ञात हो कि 'यह साधु नहीं है, मात्र साधु का वेष है', तो आप उनसे दूर रहें। निन्दा-विकथा में उलझें नहीं। साधुता का मार्ग सरल तो है नहीं, इस मार्ग पर चलनेवाले सभी तो सफल होते ही नहीं। किसी किसी का पतन भी होता है। कुछ ऐसे उदाहरण देखकर या सुनकर, सभी साधुओं के लिए वैसी धारणा नहीं बनानी चाहिए।

- दोषदर्शन प्रमोद-भाव को कुचल डालता है।
- गुणदर्शन प्रमोद-भाव को विकसित करता है।
- प्रमोद-भाव से दोषों का नाश होता है, गुणों की वृद्धि होती है।

करुणा-भाव :

दूसरे जीवों के दुःख देखकर, उन दुःखों को मिटा देने की भावना ही तो करुणा-भाव है। मानवता के अनेक गुणों में यह सर्वप्रथम गुण है। आत्मविकास की प्रारम्भिक भूमिका है करुणा।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दीनजनों की यथायोग्य सेवा करनी चाहिए, गृहस्थजनों को। पहले 'दीन' की व्याख्या सुन लो।

जो धर्म करने में समर्थ न हों, जो अर्थोपार्जन करने में समर्थ न हों और जो विषयभोग करने में भी समर्थ न हों। इनको कहते हैं दीन। जिनका शरीर जर्जरित हो गया हो, जिनका मन निर्बल हो गया हो, जो मृत्यु की राह में ही जीते हों....ये होते हैं दीन। ऐसे दीनजनों की सेवा करने की होती है। उनको भोजन देना, पानी देना, वस्त्र देना, आश्रय देना.... विविध सेवा करने की है।

सभा में से : हमें तो घरवालों की सेवा करने का भी समय नहीं मिलता है, तो फिर ऐसे दीनजनों की सेवा करने का समय कहाँ से मिलेगा?

महाराजश्री : आपका समय जाता कहाँ है? आपको सिनेमा देखने का समय मिलता है, शादी के समारोहों में जाने का समय मिलता है, दोस्तों के साथ गपसप लड़ाने का समय मिलता है, रेडियो सुनने का समय मिलता है....टीवी, विडियो देखने का समय मिलता है, दीनजनों की सेवा के लिए समय नहीं मिलता है! आश्चर्य है न? वास्तविकता दूसरी है, आप छिपाते हो....। हृदय में करुणा का भाव नहीं है, सही बात है न?

दीन कौन?

दीनजन की व्याख्या टीकाकार आचार्यश्री ने अच्छी की है। जो व्यक्ति कोई भी पुरुषार्थ करने में सक्षम न हो, अशक्त-असमर्थ हो, उसको 'दीन' कहा। ऐसे जीवों को आश्रय देना ही चाहिए। ऐसे मनुष्यों की सेवा करनी ही चाहिए। यह भी मनुष्य की एक अति दयनीय अवस्था होती है....। कोई भी मनुष्य ऐसी अवस्था को पा सकता है....घोर पापकर्म के उदय से। परमात्मा से प्रार्थना करें कि किसी भी जीव को ऐसी अवस्था नहीं मिले।

सभा में से : दूसरे दीनजनों की बात जाने दें, घर में हमारे माता-पिता यदि सर्वथा अशक्य अथवा अपंग हो जाते हैं, कोई भी काम नहीं कर सकते हैं, तब उनकी सेवा भी हम कहाँ करते हैं?

महाराजश्री : यदि ऐसी बात है तो आप लोग नैतिक अधःपतन की गहरी खाई में गिरे हुए हो, ऐसा ही मानना पड़ेगा। और, जब आप स्वयं वैसी दीन स्थिति में पहुँच गये तो फिर आपको अनुभव होगा कि उस स्थिति में यदि कोई सेवा करनेवाला नहीं हो तो तन-मन की कैसी दुःखमय स्थिति निर्मित

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

होती है? माँगने पर भी मौत नहीं आयेगी और जीवन बेसहारा.....दर्दभरपूर जीना पड़ेगा।

सेवा कैसे करोगे?

दीनजनों की सेवा, धिक्कार से या तिरस्कार से नहीं करने की है। उसके मन को उल्लसित बनाते हुए, जीने का साहस बंधाते हुए सेवा करने की है। आप उन पर कोई एहसान कर रहे हो, वैसा भी उनको महसूस नहीं होने देना चाहिए।

सेवा कैसे करनी चाहिए, उसकी भी शिक्षा लेनी चाहिए। कुछ ऐसी संस्थाएँ हैं, जहाँ पर सेवा करने की सही शिक्षा दी जाती है। अपने जैन-समाज में ऐसी कोई संस्था नहीं है, ऐसा मेरा ख्याल है। चूँकि आप लोगों को वंशपरंपरागत सेवा करने की शिक्षा मिलती आयी होगी? वास्तव में शिक्षा दी जाती नहीं है, ली जाती है। कोई जरूरी नहीं कि माता दीनजनों की सेवा करनेवाली हो, उसके पुत्र-पुत्री सेवा करनेवाले ही हों। वे तो ऐसा भी कह सकते हैं : 'मम्मी बेकार की यह सेवा-बेवा की आफत मोल ले रही है। ऐसे अशक्तों को तो अस्पताल में भेज देना चाहिए। बहुत दया आती हो तो खर्च के रूपये दे देने चाहिए....।'

ऐसे भावशून्य....दयाशून्य बच्चों को कहाँ अनुभव होता है दीन-हीन की सेवा से मिलनेवाले भीतरी आनन्द का?

दीनजनों की सेवा करने में जिन्होंने अपनी पूरी जिन्दगी बिता दी है, ऐसे सत्पुरुषों से जाकर पूछो तो सही कि सेवा करने का आनन्द कैसा होता है। दीनजनों के हृदय के कैसे आशीर्वाद प्राप्त होते हैं....। वे किस प्रकार सेवा करते हैं.... जाकर अपनी आँखों से देखो।

जापान का उदाहरण :

अभी-अभी मैंने जापान की एक सत्य घटना पढ़ी.... पढ़ते पढ़ते मेरी आँखें हर्षाश्रु से छलक गईं। टोक्यो के योयोगी स्टेशन के पास दो रेस्तोराँ हैं। रेस्तोंराँ के मालिक हैं 'हयाशी' और उनकी पत्नी। इन रेस्तोराँ में एक प्रकार का कर्मचारियों का ही राज्य है। कर्मचारी ही रेस्तोराँ खोलते हैं, कर्मचारी ही रेस्तोराँ बंद करते हैं। कुछ कर्मचारी दिनभर कोई काम नहीं करते.... बस, गाते रहते हैं.... हयाशी उनको कुछ नहीं कहते। हयाशी तो कहते हैं : ये लोग कम से कम प्रसन्नचित्त होकर गीत तो गाया करते हैं। मुझे इस बात की खुशी है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इन दोनों रेस्तोराँ में सभी कर्मचारी मंदबुद्धि के होते हैं, समाज से तिरस्कृत और परिवार से तिरस्कृत। मंदबुद्धि, विक्षिप्त चित्तवाले लड़के-लड़कियाँ क्या काम कर सकते हैं? हयाशी कहते हैं : 'मुझे इन लोगों में आत्मविश्वास पैदा करना है। हम अपने इन नौकरों से कुछ मांगते नहीं हैं, हम उनसे प्यार करते हैं, उनका स्वीकार करते हैं और सबसे बड़ी बात तो यही है कि हम उनके विकसित होने की प्रतीक्षा करते हैं।'

हयाशी-दंपती प्रतिदिन मध्याह्न दो से चार, जब रेस्तोराँ में भीड़ नहीं होती है तब कर्मचारियों को अध्ययन कराते हैं।

मंदबुद्धि बच्चों को जन्म देनेवाले माता-पिता अपने बच्चों को तिरस्कृत करते हैं। जब कि हयाशी-दंपती ऐसे बच्चों का स्वीकार करते हैं....निरपेक्ष भाव से। निःस्पृह भाव से। स्वयं के तन-मन-धन का भोग देकर। कैसा अद्‌भुत आत्मविश्वास है हयाशी-दंपती में?

लोकप्रियता की मुख्य सड़क है सेवा :

दीनजनों की सेवा करनेवालों के प्रति जनता को आदरभाव होता है। दुनिया उसको देवदूत के रूप में देखती है। इस दृष्टि से सोचेंगे तो धर्मप्रसार का भी यह एक अद्‌भुत उपाय है। ईसाई धर्म दुनिया में क्यों इतना फैल गया? ईसाई धर्मगुरुओं ने दीर्घदृष्टि से सोचकर 'दीनजनों की सेवा' का प्रमुख मार्ग अपनाया। दुनिया के सभी देशों में, जहाँ जहाँ गरीबी है, रुग्णता है, दीन-हीन लोग हैं, वहाँ ये लोग पहुँच गये। अभी भी पहुँच रहे हैं। लोग उनको देवदूत समझते हैं और बड़े प्रेम से ईसाई धर्म को स्वीकार कर लेते हैं। दुःख दूर करनेवाला धर्म कौन नहीं अपनायेगा? सुख-सुविधा देनेवाला धर्म किसको प्यारा नहीं लगेगा?

उन लोगों के पास-ईसाई धर्मगुरुओं के पास दीनजनों की सेवा करने की कला है। आज वर्तमान विश्व में सबसे ज्यादा लोग ईसाई धर्म को माननेवाले हैं-करीबन् एक अरब और दस करोड़।

धर्मप्रसार की दृष्टि से भी दीनज़नों की सेवा का कार्य शुरू करना चाहिए और तीव्र गति से इस कार्य को व्यापक बनाना चाहिए। दोनों काम होंगे - दीन-दुःखी का उद्धार होगा और वीतरागकथित धर्म का प्रसार होगा। परन्तु यह काम पूरी तमन्ना से उठाना चाहिए। थके बिना जीवनपर्यंत काम करते रहना चाहिए। जैन संघ की समग्र भारतीय स्तर पर एक संस्था होनी चाहिए,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

जो इस कार्य की संपूर्ण आर्थिक जिम्मेदारी उठा ले। निष्ठावान् समर्पित कार्यकर्ता होने चाहिए। इस विषय में आप लोग सोचेंगे क्या? कुछ ठोस कदम उठायेंगे क्या?

परमात्मपूजन, अतिथि-सत्कार और दीनजनों की सेवा - यह गृहस्थ जीवन का सामान्य धर्म है। इस विषय का विवेचन पूर्ण होता है।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***भोजन करते समय अपनी शारीरिक प्रकृति का ख्याल करना नितांत आवश्यक है। वात-पित्त और कफ - इन तीन प्रकृतियों को जान लेना चाहिए।***
- ***कब खाना? क्या खाना? कितना खाना? कैसे खाना? वगैरह बातों का ध्यान रखना नितांत आवश्यक है।***
- ***बिनजरूरी खाने-पीने से तन के रोग बढ़ते हैं, शरीर में सुस्ती फैलती है और मन भी मंद हो जाता है।***
- ***स्वस्थ शरीर धर्माराधना के लिए सहायक बनता है। शरीर की स्वस्थता मन की प्रसन्नता में सहायक बनती है। शरीर-स्वास्थ्य की उपेक्षा मत करो।***
- ***संतुलित और नियंत्रित आहार-व्यवस्था को जीवन में स्थान देना जरूरी है।***
- ***इतनी हद तक मत खाओ-पीओ कि तबीयत बिगड़ जाये! 'माल अपना और पेट पराया...' नहीं पर 'पेट अपना है, माल पराया है...' यह याद रखो।***
- ***पेट को पेट ही रहने दो। इसे गोदाम या कचरा पेटी मत बना डालो कि 'जो आया डाल दिया, जब आया...जैसा आया, डाल दिया!'***

प्रवचन : ७१

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्यश्री हरिभद्रसूरिजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ में, गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हुए, बीसवाँ सामान्य धर्म बताते हैं प्रकृति के अनुकूल समय पर भोजन।

भोजन का तन-मन के साथ प्रगाढ़ संबंध है। भोजन के बिना तन शिथिल हो जाता है, मन निर्बल हो जाता है। इसलिए हर व्यक्ति को भोजन तो करना ही पड़ता है। परन्तु यदि मनुष्य अपनी शारीरिक प्रकृति से प्रतिकूल भोजन करता है और अयोग्य समय में भोजन करता है तो वह रोगों से आक्रान्त हो जाता है और मर भी जाता है। मानसिक दृष्टि से भी वह अशान्त, संतप्त और विकारग्रस्त हो जाता है। इसीलिए ग्रन्थकार आचार्यश्री प्रकृति को अनुकूल और योग्य समय पर भोजन करने की बात कहते हैं।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

'सात्म्य' का अर्थ यही किया गया है।

पानाहारादयो यस्याविरुद्धाः प्रकृतेरपि।
सुखित्वायावलोक्यंते तत्सात्म्यमिति गीयते ।।

प्रकृति-स्वभाव की पहचान :

आप लोगों को अपनी-अपनी प्रकृति का ज्ञान होना चाहिए। प्रकृति तीन प्रकार की होती है : वात-प्रधान प्रकृति, पित्त-प्रधान प्रकृति और कफ-प्रधान प्रकृति। हर मनुष्य की इसमें से कोई एक प्रकृति होती ही है। उस प्रकृति का ज्ञान होना चाहिए। 'मेरी वात-प्रधान यानी वायु-प्रधान प्रकृति है? या पित्त-प्रधान प्रकृति है? या कफ-प्रधान प्रकृति है?' यदि आपको अपनी प्रकृति का ख्याल नहीं आता हो तो किसी अच्छे वैद्य से पूछकर निर्णय करना चाहिए। संक्षेप में मैं बताता हूँ :

❍ भोजन के बाद वायु का प्रकोप बार-बार होता हो तो समझना चाहिए कि वात-प्रधान प्रकृति है।

❍ भोजन के बाद कभी भी पित्त उछलता हो, सिरदर्द रहता हो तो समझना चाहिए कि पित्त-प्रधान प्रकृति है। उपवास में भी पित्त उछलता हो, तो वह पित्त-प्रप्रकृति का द्योतक है।

❍ भोजन के बाद यदि कफ ज्यादा हो जाता हो तो समझना चाहिए कि कफ-प्रधान प्रकृति है।

कहने का तात्पर्य यह है कि जिस भोजन से स्वास्थ्य को हानि होती हो और बुद्धि कुंठित होती हो, वैसा भोजन नहीं करना चाहिए। मात्र स्वाद की दृष्टि से भोजन नहीं करना चाहिए, स्वास्थ्य का लक्ष्य होना ही चाहिए। यदि शरीर के स्वास्थ्य का लक्ष्य नहीं है तो फिर मन के स्वास्थ्य का लक्ष्य कैसे रहेगा? आत्मा के स्वास्थ्य का लक्ष्य कैसे रहेगा? स्वस्थ तन में स्वस्थ मन ही स्वस्थ आत्मा को पाने का पुरुषार्थ कर सकता है।

सभा में से : हम लोगों में आत्मा को पाने की इच्छा ही कहाँ जगी है?

शरीर को तो स्वस्थ रखो :

महाराजश्री : नहीं जगी है न? परन्तु वैसी इच्छा जगे, यह तो चाहते हो न? आत्मा को, विशुद्ध आत्मा को पाने की इच्छा नहीं जगी है, परन्तु पवित्र

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

और निर्मल मन हो, वैसी इच्छा तो है न? मन की बात भी छोड़े, स्वस्थ और नीरोगी शरीर तो चाहिए न? कोई भी पुरुषार्थ करने के लिए नीरोगी और सशक्त शरीर तो चाहिएगा न? नीरोगी और सशक्त शरीर का आधार है भोजन। प्रकृति के अनुकूल भोजन।

मिठाई ने कर दी सफाई :

एक महानुभाव थे। धर्मशास्त्रों के अभ्यासी थे, परन्तु मिठाइयाँ खाने का भारी शौक था, गजब की रुचि थी। शारीरिक परिश्रम तो था नहीं जीवन में। शरीर बढ़ता रहता था। उनको 'डायाबीटीज' हो गया। डॉक्टरों ने सभी मिष्ठ पदार्थों पर प्रतिबन्ध लगा दिया। चाय में भी शक्कर डालने की नहीं, बिना शक्कर की चाय पीने की....। वे महानुभाव जितने 'डायाबीटीज' से दुःखी नहीं थे, उतने इस प्रतिबंध से दुःखी थे। डॉक्टर से कहा : 'कुछ रास्ता बताइये साब! कभी तो मिठाई खाने की प्रबल इच्छा हो जाती है...।'

डॉक्टर ने कहा : 'आपके शरीर में 'सुगर' की मात्रा ज्यादा है, दवाइयों से 'कंट्रोल' में आ जाने दो, बाद में इजाजत दे देंगे....।' फिर भी, उनको तो उसी दिन रसगुल्ले खाने थे....। डॉक्टर से कहा : 'डॉक्टर, ऐसी दवाई दे दो कि मैं मिठाई खाऊँ तो भी सुगर का प्रमाण बढ़ न पाये....।' डॉक्टर ने दवाई लिख दी। अब वे महानुभाव, जब प्रबल इच्छा होती तब मिठाई खा लेते और दवाई भी लेते!

परिणाम क्या आया होगा आप अनुमान कर सकते हैं? उनके खून में 'डायाबीटीज' लग गया और एक दिन उनकी मृत्यु हो गई....कोई बड़ी उम्र भी नहीं थी। मिठाई खाना उनकी प्रकृति के अनुकूल नहीं था फिर भी रसलोलुपता से प्रेरित होकर खाते रहे तो मानव-जीवन को ही खो बैठे।

खाने का शौक सीमित रहे तो अच्छा :

एक भाई, जो कि २८/३० साल की उम्र के होंगे, पेट में 'अल्सर' हो गया। डॉक्टर को बताया। डॉक्टर ने कहा : 'दवाई तो देता हूँ परन्तु खाने-पीने में सावधानी रखना। खट्टे पदार्थ मत खाना और तीखे-चरपरे पदार्थ मत खाना। खट्टा सरबत भी मत पीना।' डॉक्टर ने तो जो कहना था वह कह दिया, परन्तु ये भाईसाब मानें तब न? खट्टा खाते रहे और तीखा-चरपरा भी खाते रहे....! पत्नी और दो छोटे बच्चों को अनाथ छोड़कर वे परलोक की यात्रा पर चले गये।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वैद्य या डॉक्टर के कहने पर भी जो मनुष्य प्रकृति-विरुद्ध खाता और पीता है - ऐसे व्यक्ति मोक्षमार्ग की आराधना कैसे कर सकते हैं? रसनेन्द्रिय के परवश पड़ा हुआ जीव, 'यह भोजन मेरी प्रकृति के प्रतिकूल है, मेरे स्वास्थ्य के प्रतिकूल है, इसलिए मुझे नहीं करना चाहिए,' ऐसा सोच ही नहीं सकता है। कभी सोच भी ले, आचरण में - 'प्रेक्टिस' में नहीं ला सकता है।

आत्मकल्याण की नहीं, मनःस्वास्थ्य की भी नहीं, शरीर की नीरोगिता की दृष्टि से भी रसलोलुप मनुष्य प्रकृति-विरुद्ध आहार का त्याग नहीं कर सकता है। वैसी जघन्य रसलोलुपता किस काम की जो शरीर का ही नाश कर दे?

सभा में से : शारीरिक स्वास्थ्य के लक्ष्य से 'रसत्याग' किया जाय अथवा 'द्रव्य संक्षेप' किया जाय, वह क्या उचित है? वह धर्म कहा जायेगा?

स्वस्थ शरीर धर्मआराधना में सहायक :

महाराजश्री : शारीरिक स्वास्थ्य का लक्ष्य क्या है? आत्मकल्याण की आराधना है। शरीर स्वस्थ और निरोगी होगा तो आत्मशुद्धि की साधना अच्छी तरह हो सकेगी। दूसरी बात, जो रसलोलुप मनुष्य शारीरिक दृष्टि से भी रसत्याग नहीं करता है वह मनुष्य आत्मा का हित कैसे सोच सकता है? शरीर तो रूपी है न? आत्मा अरूपी है, रूपी ऐसे शरीर के लिए जो मनुष्य रसत्याग नहीं कर सकता है, वह मनुष्य अरूपी वैसी आत्मा के लिए कैसे रसत्याग करेगा?

सभा में से : हम लोग तो जिह्वेन्द्रिय के इतने परवश हैं कि 'आत्मा' याद ही नहीं आती है।

महाराजश्री : आत्मा तो याद नहीं आती, शरीर का आरोग्य भी याद नहीं आता है न? रसनेन्द्रिय-जिह्वेन्द्रिय की इतनी ज्यादा लोलुपता बढ़ गई है कि मनुष्य अपनी प्रकृति को तो सोचता नहीं है, भक्ष्य और अभक्ष्य का विचार भी नहीं करता है। भक्ष्य-अभक्ष्य का विचार पाप और पुण्य के साथ संबंध रखता है, पाप-पुण्य का संबंध आत्मा के साथ है। रसलोलुपी को आत्मा का विचार कैसे होगा?

कुछ भक्ष्य पदार्थ भी ऐसे होते हैं जो मनुष्य की प्रकृति के प्रतिकूल होते हैं, उन पदार्थों का भी त्याग करना चाहिए। परन्तु यह तभी संभव होगा जब स्वाद की दृष्टि गौण रहेगी और स्वास्थ्य की दृष्टि मुख्य रहेगी। शरीर के स्वास्थ्य का विचार करनेवाले में कभी मन के स्वास्थ्य का और आत्मा के

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

स्वास्थ्य का विचार भी पैदा हो सकता है। धर्मग्रन्थों में एक भिखारी का किस्सा पढ़ने में आया है।

भिखारी की कहानी :

एक भिखारी था, भिक्षा माँगकर गुजारा करता था। भिक्षा में जो मिल जाता वह खा लेता। पहले दिन का बचा-खुचा भोजन दूसरे दिन भी खाता था। उसके शरीर में अनेक रोग पैदा हो गये। गाँव के बाहर एक वृक्ष के नीचे वह बैठा था। जीवन से निराश हो गया था। मन में आर्तध्यान करता था। इतने में वहाँ एक महात्मा पधारे। भिखारी ने दो हाथ जोड़कर प्रणाम किया। महात्मा ने भिखारी को देखा। उन्होंने बड़े वात्सल्य से भिखारी से कहा :

'तेरे शरीर में अनेक रोग पैदा हो गये हैं न?'

भिखारी ने कहा : 'हाँ, रोगों से बहुत परेशान हूँ....'

महात्मा ने कहा : 'तेरे रोग मिटाने हैं क्या?'

भिखारी ने कहा : 'रोग तो मिटाने हैं, आप कोई उपाय बताने की कृपा करें....'

महात्मा ने कहा : 'मेरा कहा मानेगा? मैं कहूँ वैसे करेगा?'

भिखारी ने कहा : 'अवश्य, आप जो भी कहेंगे, मैं उसका पालन करूँगा।'

महात्मा ने कहा : 'तू रोजाना एक ही अन्न खाना, एक ही सब्जी खाना और एक ही विगई खाना। विगइयाँ छह प्रकार की होती है : दूध, दही, घी, तेल, गुड़-शक्कर और तली हुई वस्तुएँ। इनमें से एक ही वस्तु खाना। मैं जानता हूँ कि तू भिखारी है, भिखारी को भिक्षा में जो भी मिले, वह खाना पड़ता है। परन्तु तू ध्यान रखना, भिक्षा में गेहूँ की रोटी ले लेना, बाद में चावल, बाजरा या किसी प्रकार के धान्य की वस्तु नहीं लेना। सब्जी में यदि कोई एक सब्जी मूंग की या चने की मिल गई, दूसरी सब्जी नहीं लेना। विगई में घी, तेल या कोई भी विगई मिल गई, दूसरी नहीं लेना। दूसरे दिन नयी ही भिक्षा लेने जाना। बासी मत खाना। बोल, करेगा इस प्रकार? यदि करेगा तो तेरे रोग दूर हो जायेंगे। तेरा स्वास्थ्य ठीक हो जायेगा। जीवन-पर्यंत इस प्रतिज्ञा का पालन करना होगा।'

भिखारी को शरीर स्वस्थ करना था। चूँकि वह रोगों से बहुत परेशान था। उसने महात्मा के समक्ष प्रतिज्ञा ले ली। महात्मा चले गये अपने रास्ते पर। भिखारी नगर में भिक्षा लेने चला।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

एक घर पर उसको गेहूँ की रोटी मिल गई। दूसरे घर पर गया तो घर की महिला बाजरे की रोटी देने लगी। भिखारी ने मना किया, महिला ने कारण पूछा। भिखारी ने कारण बताया। महिला प्रभावित हुई। उसने भिखारी को पर्याप्त सब्जी दी। भिखारी बीमार था, थोड़ा-सा ही भोजन उसको चाहिए था, मिल गया, खा लिया। वैसे प्रतिदिन वह भिक्षा लेने लगा। महिलाओं की उसके प्रति सहानुभूति बढ़ने लगी। धीरे-धीरे उसे एक-एक घर से ही पूरा भोजन मिलने लगा। लोग उसको अपने घर में ही भोजन कराने लगे। उसके रोग दूर हो गये। वह जहाँ भोजन करता, उस घर का छोटा-बड़ा काम भी कर देता था। गृहिणी-वर्ग का सद्भाव बढ़ने लगा।

किस्मत ने करवट बदली :

एक दिन, जिस घर में उसने भोजन किया, उस घर के मालिक ने उससे कहा : 'आज तू मेरी दूकान पर चलना, वहाँ थोड़ा काम है, तू करना, तुझे पैसा दूँगा।' भिखारी दुकान पर गया। दुकान का काम करके वह एक तरफ बैठा रहा। उस दिन शाम को सेठ ने जब अपना हिसाब देखा....तो ताज्जुब में रह गये। उन्होंने कल्पना से भी ज्यादा मुनाफा कमाया था। उन्होंने सोचा : 'आज मैंने इतने सारे रुपये कैसे कमाये? अवश्य, इस भिखारी के आज यहाँ आने से और बैठने से ही यह ज्यादा कमाई हुई है। ऐसा लगता है कि इसका भाग्योदय हुआ है। मनुष्य का भाग्यचक्र घूमता रहता है। सुख के बाद दुःख आता है, तो दुःख के बाद सुख भी आता है। इस महानुभाव के दुःख के दिन पूरे हो गये हैं और सुख के दिन आ गये हैं। क्या पता, इसने जो प्रतिज्ञा-धर्म का पालन किया है....इसका भी यह फल हो सकता है। आज भी वह प्रतिज्ञा का दृढ़ता से पालन कर रहा है। मेरे घर में कभी-कभी वह काम करता है....मैंने देखा है, प्रमाणिकता से काम करता है। मैं क्यों न उसको मेरी दुकान में हिस्सेदार (पार्टनर) बना लूँ? अच्छा व्यक्ति है।'

सेठ के ये विचार कितने प्रेरणादायी हैं, आपने सोचा क्या? ज्यादा कमाई हुई तो उसमें उन्होंने अपने पुण्योदय को नहीं मानते हुए उस भिखारी के पुण्योदय को कारण माना। उनके मन में यह धारणा होगी कि 'मैं तो वही हूँ, जो कल था इस दुकान में, इतने वर्षों में मैंने एक दिन में इतनी कमाई नहीं की है, आज ही इतनी ज्यादा कमाई हुई है.... और भिखारी भी आज ही दुकान पर आया है। इसलिए, भिखारी का पुण्योदय ही कारणभूत होना चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भिखारी के प्रतिज्ञा-पालन के धर्म से सेठ बहुत प्रभावित थे। उनकी यह श्रद्धा होगी कि 'धर्म से पापकर्मों का नाश होता है, धर्म के पालन से मनुष्य का भाग्योदय होता है....।' वास्तव में, भिखारी का भाग्योदय तो तभी से शुरू हो गया था, जब से गुरूदेव का मिलना हुआ था! उसके प्रति लोगों के हृदय में भी सहानुभूति पैदा हो गई थी, वह क्या भाग्योदय नहीं था?

सेठ की भी महानता थी :

सेठ ने भिखारी के भाग्योदय के विषय में जो अनुमान किया, वह सही था। आगे जो उन्होंने सोचा वह उन्हीं की विशेषता माननी चाहिए। उन्होंने भिखारी को अपनी दुकान में हिस्सेदार बनाने का जो सोचा, वह सेठ की विशेषता थी। अन्यथा वे नौकर के रूप में भी दुकान में रख सकते थे। यदि सेठ की दृष्टि मात्र पैसा कमाने की ही होती तो वे भिखारी को नौकर रख लेते। केवल स्वार्थ होता तो, भिखारी को दुकान में हिस्सेदार नहीं बनाते।

सभा में से : सेठ के हृदय में ऐसी अच्छी भावना जो पैदा हुई, उसमें क्या भिखारी का पुण्यकर्म प्रेरक बना होगा?

महाराजश्री : अवश्य, मानना ही पड़ेगा। अलबत्ता, सेठ की भी योग्यता थी। निमित्त अच्छा हो परन्तु उपादान योग्य न हो, तो कार्य सम्पन्न नहीं होता है। उपादान योग्य हो, परन्तु निमित्त अच्छा नहीं मिले, तो भी कार्य संपन्न नहीं हो सकता है।

सेठ ने भिखारी को अपनी दुकान में हिस्सेदार बना दिया। अब भिखारी, भिखारी नहीं रहा। भिखारी सेठ बन गया। रहने को मकान ले लिया, शादी भी कर ली। नगर में प्रतिष्ठित व्यक्ति के रूप में माना जाने लगा।

परन्तु वह अपनी प्रतिज्ञा-एक धान्य, एक सब्जी और एक विगई खाने की, बराबर निभा रहा है। प्रसन्नचित्त से निभा रहा है। दुःख के दिनों में ली हुई प्रतिज्ञा को सुख के दिनों में निभाना सरल बात नहीं है। दृढ़ मनोबल हो तभी प्रतिज्ञा-पालन हो सकता है। अन्यथा प्रतिज्ञा का भंग करते देर नहीं लगती है।

भिखारी सेठ बन गया, फिर भी विनम्र एवं सात्त्विक बना रहा। अपने उपकारी सेठ का एहसान भूलता नहीं है। अपनी प्रकृति के अनुकूल भोजन करता है। वह भी, जब क्षुधा का अनुभव होता है, तभी भोजन करता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भोजन समय पर करें :

काले भोजनम्! जब भूख लगे तभी भोजन करना चाहिए। चाहे प्रकृति के अनुकूल भोजन हो, परन्तु बिना भूख लगे, नहीं खाना चाहिए। भूख लगने पर आप भोजन करेंगे तो वह शीघ्र हजम हो जायेगा। बिना भूख आप भोजन करेंगे तो हाजमा बिगड़ जायेगा, संभव है अजीर्ण भी हो जाय।

क्षुधा का अनुभव होने पर भी यदि भोजन नहीं लिया जाय तो शरीर का बल क्षीण होता है। क्षुधा शान्त होने पर यदि भोजन किया जाय तो भी शरीर को हानि पहुँचती है। इसलिए, जब क्षुधा का अनुभव हो तभी भोजन करना चाहिए।

वह भिखारी-सेठ समय पर भोजन करता है। शरीर से स्वस्थ है, मन से स्वस्थ है और अब उसमें आत्मदृष्टि भी खुलती है। उसके मन में बार-बार उन उपकारी महात्मा की स्मृति हो आती है। वह मन से भावपूर्वक वंदना करता रहता है। 'उन महात्मा की महती कृपा से ही आज मैं इस सुखी अवस्था को पाया हूँ। उन्होंने मुझे कैसी अच्छी प्रतिज्ञा दी? इस प्रतिज्ञा के प्रभाव से ही मैं तन-मन-धन से सुखी बना हूँ। अब मुझे मेरी आत्मा के कल्याण के लिए धर्मपुरुषार्थ करना चाहिए।'

उपकारी के उपकारों को भूलना नहीं, यह एक महान् गुण है। यह गुण जिस मनुष्य में होता है, उसमें दूसरे अनेक गुणों का आविर्भाव होता है। गुणवान् व्यक्ति को धर्माराधना विशेष फलवती होती है। भिखारी-सेठ की धर्माराधना फलवती हुई। उनका आयुष्य पूर्ण हुआ और उनका जन्म एक राजा के वहाँ हुआ।

पुण्यकर्म का प्रभाव :

इसके जन्म होने से पूर्व उस राजा की सभा में एक अष्टांग-निमित्त शास्त्र में पारंगत विद्वान् आया था। उसने राजा को कहा था : 'राजन्, आपके राज्य में बारह साल का अकाल पड़ेगा।' राजा ने अकाल के समय प्रजा को परेशानी न हो, इसलिए अनाज वगैरह का संग्रह करना शुरू किया था। उन दिनों में ही रानी ने पुत्र को जन्म दिया। जन्म होते ही आकाश में बादलों की घटा जम गई और ऐसी वर्षा हुई कि राज्य में श्रेष्ठ फसल पैदा हुई। राजा को आश्चर्य हुआ। उधर उस अष्टांग-निमित्तों में पारंगत विद्वान् ने भी पुनः अपने निमित्तज्ञान से देखा। उनको भी बड़ा आश्चर्य और अपार खुशी हुई।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

राजा ने उस नैमित्तज्ञ को बुलाकर पूछा : 'है दैवज्ञ, ऐसा क्यों हुआ?' नैमित्तज्ञ ने कहा : 'महाराजा, आपके वहाँ जिस राजकुमार का जन्म हुआ है, उसके अद्भुत पुण्यप्रभाव से अकाल का संकट टल गया है। यह महान् धर्मात्मा है।'

यदि मनुष्य इन सामान्य धर्मों को अपने जीवन में स्थान दे दे तो उसका वर्तमान जीवन और पारलौकिक जीवन कितना सुखमय बन सकता है? इन सामान्य धर्मों के पालन में कोई कष्ट भी तो नहीं है। अपनी प्रकृति को जानकर; उस प्रकृति के अनुकूल भोजन करने में कौन-सा कष्ट है? जब क्षुधा लगे तब भोजन करने में कौन-सा कष्ट है? आप मुझे बताइये न?

स्वाद का सुख खतरनाक है :

सभा में से : दूसरा तो कोई कष्ट नहीं है, स्वाद को छोड़ना मुश्किल है। रसनेन्द्रिय पर संयम पाना मुश्किल है।

महाराजश्री : अपनी-अपनी प्रकृति को अनुकूल भोजन क्या स्वादरहित होता है? यों भी स्वाद पर तो विजय ही पाना है। रसनेन्द्रिय पर विजय पाये बिना, विजय पाने का पुरुषार्थ किये बिना, मोक्षमार्ग की आराधना कैसे कर पाओगे? रसनेन्द्रिय पर विजय पाने के लिए निम्न बातें ध्यान से सुनें :

१. रसनेन्द्रिय के परवश बने जीवों का घोर अधःपतन होता है। दुर्गति में भी जाना पड़ता है।

२. रसनेन्द्रिय के लोलुप जीव मांसाहार और शराब जैसे व्यसनों में फँसकर अपने वर्तमान जीवन को बरबाद करते हैं।

३. रसनेन्द्रिय परवश जीव, होटलों में, रेस्टोरेन्टों में जाकर भोजन करते हैं और फालतू अर्थव्यय करते हैं। शरीर को बिगाड़ते हैं। दवाइयों पर हजारों रुपये व्यय करते हैं।

४. रसनेन्द्रिय के परवश जीव, जब घर में उनको प्रिय भोजन नहीं मिलता है, तब गुस्सा करते हैं, झगड़ा करते हैं....इससे घर का वातावरण क्लेशमय बन जाता है। इससे पारिवारिक आनन्द नष्ट होता है।

५. रसनेन्द्रिय के परवश मनुष्य, अपने मन को धर्म-आराधना में जोड़ नहीं सकता है। उसका मन तो भोजन के विषय में ही भटकता रहता है। मन जोड़कर नवकार मंत्र की एक माला भी वह फेर नहीं सकता है।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

रसनेन्द्रिय की परवशता के अनेक नुकसान हैं - यह जानकर क्या आप, थोड़ा भी संयम नहीं रख सकते? आप लोग तो कभी-कभी उपवास भी कर लेते हैं, कभी-कभी आयंबिल भी कर लेते हैं, कभी-कभी एकासन भी करते हैं....! आप लोगों के लिए प्रकृति-विरुद्ध आहार का त्याग करना सरल हो सकता है।

आप लोगों की एक कमजोरी मैं जानता हूँ। आप ऐसे लोगों के साथ संबंध रखते हैं, कि जिनको मात्र अर्थपुरुषार्थ और कामपुरुषार्थ में ही रस है। जिनको धर्म से या आत्मा से कोई लगाव नहीं है। संग वैसा रंग! वे लोग खाने-पीने में कोई विधि-निषेध समझते नहीं हैं। आप लोग या तो उनका अन्ध अनुकरण करते हो, अथवा उनके कहने में आ जाते हो। देखा-देखी काफी चली है न?

होटल का चस्का सबको लगा है :

एक भाई ने मुझे कहा था : 'मेरे घर में इसलिए झगड़ा होता है कि मैं उनको भोजन के लिए होटल में नहीं ले जाता हूँ। पत्नी कहती है : 'पड़ोसवाले प्रति सप्ताह एक दिन शाम का भोजन होटल में करते हैं....अपन को भी वैसे एक दिन शाम का भोजन होटल में करना चाहिए।' मैं मना करता हूँ। होटल का भोजन किसी भी दृष्टि से अच्छा नहीं है-मैं समझता हूँ, परन्तु वह नहीं मानती है....। हाँ, अब शायद मान जायेगी। मैंने पूछा : 'अब क्यों मान जायेगी?' उसने कहा : 'हमारा वह पड़ोसी बीमार हो गया है, उसकी एक 'किडनी' फेल हो गई है। दूसरी किडनी भी ठीक रूप से काम नहीं करती है, हजारों रूपये खर्च हो रहे हैं। घर में रूपये हैं नहीं....। यह सारी बात मेरी पत्नी जानती है....इसलिए अब शायद वह होटल में जाने का नाम नहीं लेगी।

होटलों का स्वादिष्ट परन्तु अभक्ष्य भोजन, मनुष्य के स्वास्थ्य को नष्ट कर देता है - यह बात अब व्यापक बनी है। फिर भी अज्ञानी और जड़ मनुष्य, यदि उसके पास पैसे हो गये हैं, तो वह होटल में जाता ही रहेगा।

सभा में से : घर के भोजन से होटल का भोजन ज्यादा स्वादिष्ट क्यों लगता है?

स्वादिष्ट रसोई का राज :

महाराजश्री : यह बात भी बता दूँ। एक बड़ी होटल में रसोई करनेवाला रसोइया, एक श्रीमन्त घर में रसोई करने के लिए आया। दो-तीन महीना उसने रसोई की। घर में चार-पाँच लड़के-लड़कियों को उसकी रसोई बहुत

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

अच्छी लगी। परन्तु रसोइया चला गया। लड़कों को अब घर की रसोई नहीं भाती है। उन्होंने अपने पिता को आग्रह किया कि उस रसोइये को वापिस बुला लें। हालाँकि लड़कों की माँ अच्छी रसोई बनाती थी, परन्तु वैसा स्वाद नहीं आता था, जैसा स्वाद उस रसोइया की रसोई में आता था।

रसोइया वापस आ गया। एक दिन सेठ ने उससे पूछा : 'तेरी रसोई में ऐसा कौन-सा जादू है कि तेरी रसोई इतनी स्वादिष्ट लगती है?' रसोइये ने कहा : 'सेठ साहब, आप नाराज न हों तो मैं उसका रहस्य बता सकता हूँ। परन्तु रहस्य जानने के बाद आप मुझे छुट्टी दे देंगे....!' सेठ ने बहुत आग्रह किया तब रसोइये ने कहा : 'मैं रसोई बनाने के लिए पानी मेरे घर से ले आता हूँ। वह पानी दूसरे ढंग का होता है। हमारे मकान के ऊपर जो पानी की टंकी है, उस टंकी में ऊँट की हड्डियाँ डाली जाती हैं। २४ घंटे वे हड्डियाँ उस टंकी में रहती हैं.... फिर वह पानी रसोई के काम में ले लेते हैं। उस पानी से बनी रसोई में बढ़िया स्वाद आता है। अधिकांश चीनी होटलों में ऐसा पानी रसोई में काम लिया जाता है।'

सेठ तो रसोइये की बात सुनकर स्तब्ध रह गये। उन्होंने रसोइये को कहा : 'भाई, तू मेरे घर में वैसा पानी मत लाना, शुद्ध पानी से ही रसोई बनाया कर। हमें वैसा स्वाद नहीं करना है....।'

होटलों के भोजन की प्रशंसा करनेवाले आप लोग, कुछ समझेंगे क्या? छोड़ देंगे होटलों में जाना? शान्ति से घर में ही भोजन करें, प्रकृति के अनुकूल भोजन करें एवं जब क्षुधा का अनुभव हो, तब भोजन करें।

भोजन के विषय में और भी बातें करनी हैं, परन्तु अभी नहीं।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

- ***जीवन के प्रारंभ में आत्मा सर्वप्रथम भोजन-ग्रहण करने का कार्य करती है। बाद में शरीर, इन्द्रियाँ, मन, भाषा वगैरह की रचना होती है।***
- ***जीवन के लिए भोजन है, भोजन के लिए जीवन नहीं है।***
- ***सुखी जीवन की परिभाषा : निरोगी तन, निरामय मन, स्पष्ट वचन और श्वासोच्छ्वास का संतुलन।***
- ***भोजन की आसक्ति, रसनेन्द्रिय की गुलामी जीवन को बरबाद कर देती है!***
- ***भूख और स्वाद इसका भेद अच्छी तरह समझ लेना। बच्चों को यह सिखाओ कि 'कब खाना...कैसे खाना वगैरह।***
- ***संस्कारविहीन प्रजा संघ-शासन और समाज की कुछ भी भलाई नहीं कर पाती।***
- ***किसी भी चीज की इतनी अधिक आसक्ति नहीं होनी चाहिए कि रोग आने पर भी उसे हम छोड़ न पायें।***
- ***रोग और दुश्मन को पैदा ही मत करो, पैदा हो गये तो तुरंत उपाय करो'-यह नीतिवाक्य है।***

प्रवचन : ७२

परम कृपानिधि, महान् श्रुतधर, आचार्यश्री हरिभद्रसूरिजी, स्वरचित 'धर्मबिन्दु' ग्रन्थ के प्रारंभ में, गृहस्थ जीवन के सामान्य धर्मों का प्रतिपादन करते हैं। उन्होंने २०वाँ सामान्य धर्म बताया है, प्रकृति के अनुकूल व उचित काल में भोजन। जीवन के साथ भोजन जुड़ा हुआ है। जन्म होता है मनुष्य का, तब पहला काम वह भोजन का करता है। जन्म होता है तब रोता है बच्चा। क्यों रोता है? उसको भूख होती है। उसको दूध का भोजन मिल जाता है, वह शान्त हो जाता है। भोजन का प्रारम्भ जन्म के साथ ही हो जाता है।

अथवा, जब जीव माँ के पेट में गर्भ के रूप में आता है तब पहला काम वह भोजन का करता है। सर्वप्रथम वह आहार के पुद्गल ग्रहण करता है। बाद में वह शरीर रचना, इन्द्रियों की रचना, श्वासोच्छ्वास लेने-छोड़ने की रचना,

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

वचन की-बोलने की रचना व मन की रचना में प्रवृत्त होता है। पहला काम वह भोजन का करता है। जीवन के साथ भोजन अनिवार्य है।

भोजन और जीवन :

एक बात आप ध्यान से सुन लें : भोजन जीवन के लिए है, जीवन भोजन के लिए नहीं है। जीवन क्या है? तन, मन, वचन और श्वासोच्छ्वास-यही जीवन है। तन नीरोगी हो, मन स्वस्थ हो, वाणी स्पष्ट हो और श्वासोच्छ्वास नियमित हो-तो जीवन सुखी कहा जा सकता है। तन-मन का स्वास्थ्य, वचन की क्षमता और श्वासोच्छ्वास की नियमितता भोजन पर अवलंबित है। यदि सोच-समझकर भोजन नहीं किया जाय तो जीवन के ये चारों प्रमुख अंगों में गड़बड़ी पैदा हो जाती है। इसलिए यह २०वाँ सामान्य धर्म बहुत ही महत्त्वपूर्ण धर्म है। अपने जीवन में इस धर्म का पालन होना ही चाहिए। लेकिन यह बात हृदय में पहुँचे तब न? बात हृदय में पहुँचती है?

- भोजन आपकी प्रकृति के विरुद्ध नहीं करोगे न?
- जब भूख लगे तभी भोजन करोगे न?
- रुचि से ज्यादा भोजन नहीं करोगे न?
- अजीर्ण होने पर भोजन का त्याग यानी उपवास करोगे न?

वैद्य ने खाँसी का इलाज बताया :

ये बातें आपके हृदय तक पहुँचेंगी तो ही आप इन बातों का पालन करेंगे। एक महानुभाव हैं, उनको दही खाना पसंद है। उनको दमा की बीमारी हो गई। वैद्य के पास गये। वैद्य ने कहा : 'दवाई तो देता हूँ परन्तु आपको दही का त्याग करना होगा।' इसने दवाई नहीं ली। खाँसी भी शुरू हो गई। घर के स्वजन उनको समझाते हैं, फिर भी वह नहीं समझता है और दही खाता रहता है। स्वास्थ्य ज्यादा बिगड़ता है। पत्नी एक-दूसरे वैद्य के पास गई और परिस्थिति बताई। वैद्य ने कहा : 'चिन्ता मत करो, मैं घर पर चलता हूँ।' वैद्य घर पर आया। उसने कहा : 'मैं दवाई देता हूँ, दमा मिट जायेगा और खाँसी भी मिट जायेगी।' दर्दी ने कहा : 'परन्तु मैं दही तो नहीं छोड़ सकता....।'

वैद्य ने कहा : 'आप दही भी खाइये और दवाई भी लीजिये। जी भरकर दही खाइये।'

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

दर्दी ने कहा : 'दूसरे वैद्यराज तो दही छोड़ने का कहते हैं और आप दही खाने का कहते हैं....ऐसा क्यों?'

वैद्य ने कहा : 'दही में अनेक गुण हैं, परन्तु तीन गुण बड़े हैं-

१. दमा के दर्द में दही खानेवाला कभी भी वृद्ध नहीं होता।

२. उसके घर में चोर नहीं आते।

३. उसको रास्ते में कुत्ते नहीं काटते।

दर्दी ने कहा : 'ऐसा कैसे?'

वैद्य ने कहा : 'दमा में और खाँसी में दहीं खानेवाला शीघ्र मर जाता है इसलिए वृद्धावस्था नहीं आती। रातभर वह खाँसी खाता रहता है इसलिए घर में चोर नहीं आते। और वह लकड़ी के सहारे ही चलता है इसलिए कुत्ते नहीं काटते। समझे न?

चार बातें महत्त्व की :

उस महानुभाव के हृदय में बात पहुँच गई और उन्होंने दही का त्याग कर दिया। आप लोगों के हृदय में ये चार बातें पहुँच जायेंगी तब आप भी -

१. अपनी प्रकृति से विरुद्ध भोजन नहीं करेंगे।

२. जब आपको क्षुधा लगेगी तब ही भोजन करेंगे।

३. भोजन की रुचि समाप्त होने पर भोजन नहीं करेंगे।

४. अजीर्ण हो जाने पर आप उपवास करेंगे।

दो बातें गत प्रवचन में आपको बतायी हैं, आज तीसरी और चौथी बात बताऊँगा।

जब मनुष्य को प्रिय भोजन मिलता है, यदि वह लोलुप होगा तो अधिक भोजन करेगा। अधिक भोजन करने से उसकी तीन प्रतिक्रिया होती हैं : वमन होता है, दस्त लग जाती है अथवा मृत्यु हो जाती है। भले ही आप प्रकृति के अनुकूल भोजन करते हों, भूख लगने पर भोजन करते हों, परन्तु अधिक.... खूब ज्यादा भोजन करते हों तो, इन तीन प्रतिक्रियाओं में से कोई न कोई एक प्रतिक्रिया तो आयेगी ही।

राजा कंडरिक और पुंडरिक की कहानी :

राजा कंडरिक की मृत्यु ऐसे ही हुई थी न? अपने आगम ग्रन्थों में एक

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कहानी आती है। पुंडरिक नगर था। राजा का नाम भी पुंडरिक था। छोटा भाई था कंडरिक, वह युवराज था। एक विशिष्ट ज्ञानी साधु भगवंत नगर में पधारे। राजा परिवार सहित धर्मोपदेश सुनने उद्यान में साधु भगवंत के पास गया। वैराग्यपूर्ण धर्मोपदेश सुनकर राजा को वैराग्य हो गया। युवराज कंडरिक को भी वैराग्य हो गया। राजमहल में लौटकर राजा ने कंडरिक से कहा : 'भाई, मैं इस संसार का त्याग कर, साधुजीवन जीना चाहता हूँ, इसलिए तेरा राज्याभिषेक करना चाहता हूँ। तू राजा बनकर प्रजा का पालन करना।'

कंडरिक ने कहा : 'हे पिता तुल्य भ्राता, आज गुरुदेव का उपदेश सुनकर मेरे हृदय में भी वैराग्य पैदा हुआ है। मुझे अब ये वैषयिक सुख दुःखरूप लगते हैं, इसलिए मैं संसार त्याग करना चाहता हूँ और चारित्र्य जीवन अंगीकार करना चाहता हूँ। आप मुझे अनुमति प्रदान करने की कृपा करें।' दो भाइयों के बीच वार्तालाप हुआ। निर्णय यह हुआ कि पुंडरिक राजा बना रहे और कंडरिक साधु बन जाय।

कंडरिक ने संसार त्याग किया, वह साधु बन गया। गुरुदेव के साथ अन्यत्र विहार कर गया। कंडरिक ने ज्ञान-ध्यान से उग्र तपश्चर्या शुरू की। कुछ वर्षों में उसके शरीर में रोग पैदा हो गये। समता-भाव से वे रोगों को सहन करते हैं।

गुरुदेव के साथ विहार करते-करते वे पुंडरिक के नगर में पधारते हैं। राजा पुंडरिक परिवार सहित वंदन करने जाता है। पुंडरिक ने कंडरिक मुनि के रुग्ण शरीर को देखा। उन्होंने अपने मन में कुछ सोचा और वे गुरुदेव के पास गये। गुरुदेव को विनय से राजा ने कहा : 'गुरुदेव, कंडरिक मुनि का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, यदि आप अनुमति दें तो वे यहाँ कुछ समय स्थिरता करें और यहाँ कुशल वैद्यों के पास उनकी मैं चिकित्सा करवाऊँ। संयमधर्म की आराधना में शरीर तो मुख्य साधन है। शरीर स्वस्थ होगा तो वे अच्छी संयम-आराधना कर सकेंगे।'

आसक्ति पनपती है स्वाद से :

गुरुदेव ने अनुमति दे दी। दो अन्य मुनिवरों के साथ कंडरिक मुनि वहाँ रुक गये और गुरुदेव ने वहाँ से विहार कर दिया। राजा पुंडरिक ने वैद्यों के पास कंडरिक मुनि की चिकित्सा शुरू करवा दी। कुछ दिनों में मुनि नीरोगी हो गये परन्तु फिर भी वे अशक्त थे, इसलिए वैद्यों ने शक्तिवर्धक दवाइयाँ देनी

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

शुरू कीं। दवाइयों के अनुपान में पौष्टिक आहार भी आवश्यक था। मुनि पौष्टिक आहार लेने लगे। कुछ दिनों में मुनि का शरीर सशक्त हो गया। अब उनको वहाँ से विहार कर देना था, परन्तु उनके मन में विचार आया : 'यदि मैं यहाँ से विहार करूँगा तो गाँव-गाँव में मुझे ऐसा प्रिय भोजन कहाँ मिलेगा? रूखा-सूखा भोजन मुझे नहीं भायेगा.... इसलिए अब मैं विहार नहीं करूँगा।'

राजा पुंडरिक ने सोचा : 'अब मुनिराज का शरीर संपूर्ण स्वस्थ हो गया है, उनको विहार करके गुरुदेव के पास पहुँच जाना चाहिए।'

राजा ने भावपूर्वक वंदना कर, विनम्र शब्दों में कहा : 'मुनिराज, आपने मुझ पर महती कृपा की, आपकी सेवा का लाभ मुझे मिला, आप तो श्रमण हैं....साधु तो चलता भला.... पुनः पधारने की कृपा करना....।'

कंडरिक मुनि समझ गये! उन्होंने वहाँ से विहार कर दिया, परन्तु गाँव-गाँव की नीरस भिक्षा उनको नहीं भाती है। उनका मन विद्रोह करने लगा। 'अब मुझ से यह साधुजीवन नहीं पलेगा.... मैं वापस संसार में जाऊँगा....।' साथी मुनिवरों को गुरुदेव के पास भेज दिया और वे वापस पुंडरिक नगर के उद्यान में आ गये।

राजा पुंडरिक को, उद्यान के माली ने जाकर समाचार दे दिये। राजा के मन में शंका पैदा हुई। वह तुरन्त ही उद्यान में पहुँचा। मुनि को वंदना की और पूछा : 'आप क्यों अकेले वापस पधारे?' मुनि मौन रहे। राजा के सामने भी नहीं देखा। उनके मुख पर ग्लानि थी, चिन्ता थी। राजा ने बार-बार पूछा, परन्तु मुनि तो मौन! कोई प्रत्युत्तर ही नहीं! अन्त में राजा ने पूछ ही लिया :

'क्या अब साधुजीवन नहीं जीना है? तो यह साधुवेश मुझे दे दें और यह राजमुकुट आप धारण कर लें।'

देखिए, स्वाद की परवशता कितनी खतरनाक है :

मुनि का साधुवेश राजा पुंडरिक ने पहन लिया और पुंडरिक के वस्त्र कंडरिक ने पहन लिये। संसारी साधु बन गया, साधु संसारी बन गया....! रसनेन्द्रिय की परवशता ने साधु को संसारी बना डाला। रसनेन्द्रिय-विजय ने संसारी को साधु बना दिया। राजा पुंडरिक संसार में रहे थे फिर भी इन्द्रिय-विजेता थे। मुनि कंडरिक साधुवेश में थे, परन्तु इन्द्रिय से पराजित हो गये थे....रसनेन्द्रिय से पराजित हो गये थे।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

पुंडरिक मुनि गुरुदेव के पास पहुँचने के लिए विहार कर गये। कंडरिक रसभरपूर भोजन करने के लिए राजमहल में पहुँच गया। सारे नगर में कंडरिक के प्रति घोर तिरस्कार फैल गया। परन्तु कंडरिक को तो बस, पेट भरकर रसपूर्ण भोजन करना था। उसके मन पर रसलोलुपता सवार हो गई थी। राजमहल के रसोईघर में जाकर उसने रसोइये को अनेक स्वादिष्ट मिठाइयाँ बनाने की आज्ञा दे दी। अनेक प्रिय व्यंजन बनाने के 'आर्डर' दे दिया।

आर्तध्यान में से रौद्रध्यान में :

उसने पेट भर कर भोजन किया, भूख से ज्यादा भोजन किया.... अत्यधिक भोजन करने के बाद जाकर पलंग पर सो गया। पेट में तीव्र पीड़ा पैदा हुई। वमन....विरेचन होने लगा। वेदना से वह कराहता है। जोर-जोर से चिल्लाता है : 'कहाँ गये मंत्री? जाओ, शीघ्र वैद्यों को बुला लाओ, मेरी आज्ञा का पालन करो....' परन्तु एक नौकर भी कंडरिक के पास नहीं जाता है। कंडरिक तीव्र रोष करता है : 'मेरी आज्ञा नहीं मानते हो? मुझे अच्छा होने दो....एक-एक का शिरच्छेद करूँगा.....मार डालूँगा....।' पेट की पीड़ा बढ़ती जाती है....रौद्रध्यान भी बढ़ता जाता है। उसने सातवें नरक में जाने का आयुष्यकर्म बाँध लिया। उसी रात में वह मर गया और नरक में चला गया।

अति भोजन से तैजस शरीर कमजोर :

अति भोजन....वह भी गरिष्ठ भोजन, मौत न हो तो क्या हो? इसलिए ग्रन्थकार आचार्यदेव कहते हैं कि रुचि के उपरान्त....क्षुधा शांत होने के बाद, मात्र रसलोलुपता से भोजन नहीं करें। ऐसा व इतना भोजन करना चाहिए कि शाम को जठराग्नि मंद न पड़ जाय, दूसरे दिन जठराग्नि प्रदीप्त रहे। जठराग्नि को शास्त्रीय भाषा में 'तैजस शरीर' कहते हैं। तैजस शरीर सूक्ष्म शरीर होता है। हाजमे का आधार तैजस शरीर होता है। हाजमा बिगड़ता है तैजस शरीर के कमजोर पड़ने से। तैजस शरीर कमजोर पड़ता है, ज्यादा भोजन करने से।

सभा में से : भोजन का परिमाण है क्या? कितना भोजन करना चाहिए, हम लोगों को?

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

भोजन का ख्याल बचपन से करो :

महाराजश्री : कोई परिमाण नहीं होता है भोजन करने में। जठराग्नि माँगे उतना भोजन देना चाहिए। 'न भुक्तेः परिमाणे सिद्धान्तोऽस्ति।' हाँ, एक बात समझना, क्षुधा और रसलोलुपता का भेद ख्याल में होना चाहिए। क्षुधा न हो परन्तु प्रिय खाद्य पदार्थ देखकर 'मुझे तो भूख लग गई हैं....' ऐसा मत करना। बच्चे जो होते हैं, उनको क्षुधा का ख्याल नही होता है। उसको तो प्रिय पदार्थ दिखाई देगा तो माँगता रहेगा और खाता रहेगा। इसलिए माताओं को पूरा ख्याल रखने का होता है कि बच्चा रसवृत्ति से ज्यादा भोजन न कर ले। अन्यथा, बच्चे की पाचनशक्ति मंद पड़ जायेगी.... पेट में दर्द होगा.... बीमार हो जायेगा।

कुछ लोग बोलते हैं न कि 'आज तो मुझे भूख ही नहीं लगी है, खाने की इच्छा ही नहीं है....।' परन्तु यदि सामने प्रिय भोजन आ जाय तो?

सभा में से : भूख खुल जाती है।

महाराजश्री : भूख नहीं खुलती है.... रसनेन्द्रिय का हमला होता है! रसवृत्ति जाग्रत हो जाती है। घर में पेट भर भोजन किया हो और 'ऑफिस' जाने निकले हो, रास्ते में कोई मित्र मिल जाय और 'होटल' में ले जाय एवं आपकी प्रिय वस्तु सामने आ जाय.... तो खा लोगे न? यह है रसनेन्द्रिय की परवशता, यह है रसलोलुपता। इसका त्याग करना चाहिए। जठराग्नि को मंद नहीं होने देना चाहिए।

वैसे, यदि आप भूख से कम भोजन करेंगे तो शरीर दुर्बल बनेगा। कम भोजन भी नहीं करना चाहिए। हाँ, 'ऊनोदरी' अवश्य रखनी चाहिए। दो-चार कौर कम खाने चाहिए। भूख होने पर भी जिनको पर्याप्त भोजन नहीं मिलता है, वे लोग शरीर से दुर्बल होते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि संतुलित भोजन करना चाहिए। ज्यादा नहीं, कम नहीं। इससे शरीर स्वस्थ रहता है। स्वस्थ शरीर तीनों पुरूषार्थ-धर्म, अर्थ और काम - करने में समर्थ बनता है। शरीर स्वस्थ रहने से मन भी स्वस्थ रह सकता है। ज्यादा भोजन करनेवालों की बुद्धि कुंठित हो जाती है। कम भोजन करनेवालों का स्वभाव उग्र और चंचल हो जाता है। यानी भूखा मनुष्य जल्दी उग्र हो जाता है। इसलिए संतुलित भोजन करना चाहिए।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

इस ग्रन्थ के टीकाकार आचार्यश्री कहते हैं कि 'अति शारीरिक श्रम करने के बाद तुरन्त भोजन नहीं करना चाहिए, तुरन्त पानी नहीं पीना चाहिए। तुरन्त भोजन करने से या पानी पीने से वमन हो सकता है, बुखार आ सकता है।'

संयम-संतुलन अनिवार्य है :

आचार्यदेव की यह सूचना महत्त्वपूर्ण है। थका-पका मनुष्य, ज्यादा क्षुधातुर होता है.... तो जरा-सा भी विलंब सहन नहीं कर सकता है, शीघ्र ही भोजन करने लगता है। यदि एकदम प्यास लगी होती है तो तुरंत ही पानी पीने लगता है। इससे उसके शरीर को नुकसान होता है।

अपने आप पर संयम रखना बहुत आवश्यक है, सहनशक्ति को बढ़ाने से ही संयम रखा जा सकता है। असंयमी मनुष्य अपने आपको बड़ा नुकसान पहुँचाता है। इसलिए संयम के संस्कार बाल्यकाल से मिलने चाहिए।

जैसे, आपका लड़का बाहर से दौड़ता हुआ घर में आया.... उसकी साँस भर आयी है.... आते ही वह पानी का गिलास भरता है, उसी समय आपको उसे रोकना चाहिए। कहना चाहिए : 'बेटा, दो मिनट शांति से बैठ, बाद में पानी पीना। अभी तेरा श्वास भी बैठा नहीं है.... पानी नहीं पीना चाहिए।' प्रेम से कहोगे तो वह मान जायेगा। छोटा बच्चा माँ की बात मान लेता है।

वैसे, एक-दो किलोमीटर चलकर लड़का आया हो, या चार-पाँच सीढ़ी चढ़कर आया हो, आते ही 'मुझे खूब भूख लगी है माँ, जल्दी खाना दे दे....।' उस समय, यदि माँ समझदार हो तो.... कुछ दो-पाँच मिनट का विलम्ब कर देगी और धीरे-धीरे खाना परोसेगी। साथ-साथ मीठे शब्दों में कहेगी : 'मुन्ना, तुम जब थके-पके आये हो, तुरन्त भोजन नहीं करना चाहिए। तुरन्त भोजन करने से बुखार आ जाता है। उल्टी भी हो जाती है।' ऐसी बातें यदि माता-पिता अपने बच्चों को बाल्यकाल से सुनाते रहें तो अच्छा असर पड़ता है।

इतनी बातों का ख्याल रखो :

सभा में से : माता-पिता को ही ऐसा ज्ञान नहीं है, तो फिर बच्चों को कैसे ऐसी बातें बतायेंगे?

महाराजश्री : बड़ी दुःख की बात है। यदि माता-पिता अज्ञानी होंगे तो बच्चों को संस्कार नहीं मिलेंगे। असंस्कारी प्रजा बढ़ती जायेगी, इससे संघ और शासन को कितना बड़ा नुकसान होता है, यह बात आप समझ पायेंगे

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

क्या? बुद्धि यदि राग-द्वेष से ग्रसित होगी, तो आप इन बातों को नहीं समझ पायेंगे।

- कैसे खाना?
- कब खाना?
- क्या खाना?
- क्या नहीं खाना? क्यों नहीं खाना?
- कब नहीं खाना? क्यों नहीं खाना?
- क्या पीना?
- कब पीना?
- क्या नहीं पीना? क्यों नहीं पीना?
- भोजन करने के लिए कैसे बैठना?
- पानी किस तरह बैठकर पीना? क्यों?

ये सारी बातें माता-पिता को अच्छी तरह जान लेनी चाहिए और ब-खूबी बच्चों को समझानी चाहिए। बच्चों को उनकी भाषा में समझानी चाहिए। बच्चों के प्रश्न सुनकर गुस्सा नहीं करना चाहिए। जो बात नहीं समझा सको उस बात को लेकर कहना कि : 'तेरा प्रश्न अच्छा है, मैं सोचकर जवाब दूँगा।' बच्चों की जिज्ञासावृत्ति को तोड़ना नहीं चाहिए। कभी माता-पिता ऐसी भूल करते रहते हैं, अपनी अज्ञानता को छिपाने के लिए वे बच्चों पर गुस्से होकर, बात को टाल देते हैं। इस क्रिया की प्रतिक्रिया तब आती है, जब बच्चे युवक बन जाते हैं। आपकी बात का जब वे जवाब नहीं दे पाते हैं तब वे गुस्सा करते हैं। होता है न ऐसा?

चौथी बात है : अजीर्ण में भोजन का त्याग। पहले किया हुआ भोजन जब तक हजम नहीं हुआ है, अथवा हजम हुआ हो परन्तु पूरा हजम नहीं हुआ हो, तब तक भोजन नहीं करना चाहिए। सर्वथा भोजन नहीं करना चाहिए। चूँकि सभी रोगों का मूल अजीर्ण है। सभी रोग अजीर्ण में से पैदा होते हैं। अजीर्ण में भोजन करने से रोगों की वृद्धि होती है।

अजीर्णप्रभवा रोगास्तत्राजीर्णं चतुर्विधम्।
आमं विदग्धं विष्टब्धं रसशेषं तथापरम् ।।

टीकाकार आचार्यश्री ने चार प्रकार के अजीर्ण बताये हैं - १. आम अजीर्ण

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

२. विदग्ध अजीर्ण ३. विष्टब्ध अजीर्ण ४. रसशेष अजीर्ण/ आम अजीर्ण : यह अजीर्ण होने पर दस्त पतला आता है और उसमें से सड़ी हुई छाछ जैसी दुर्गंध आती है।

विदग्ध अजीर्ण : इस अजीर्ण में, दस्त में से दूषित धुएँ जैसी दुर्गंध आती है।

विष्टब्ध अजीर्ण : यह अजीर्ण होने पर शरीर टूटता है.... शरीर के अवयवों में दर्द होता है। बेचैनी महसूस होती है।

रसशेष अजीर्ण : यह अजीर्ण होने पर शरीर में जड़ता आती है। शरीर शिथिल हो जाता है।

अजीर्ण के कुछ लक्षण बताये गये हैं, इन लक्षणों से मनुष्य समझ सकता है कि 'मुझे, अजीर्ण हुआ है।' वे लक्षण भी आप सुन लें :

१-२. दस्त और वायु की गंध बदल जाय,

३. प्रतिदिन जैसा दस्त आता हो, उससे भिन्न प्रकार का दस्त हो,

४. शरीर भारी-भारी लगे,

५. भोजन की रुचि ही पैदा न हो,

६. डकारें अच्छी नहीं आयें।

यदि ये लक्षण शरीर में दिखाई दें तो समझना कि अजीर्ण हुआ है। भोजन का त्याग कर देना चाहिए। दूध भी नहीं पीना चाहिए।

अजीर्ण से बचो :

अजीर्ण से मनुष्य को पुनः-पुनः मूर्च्छा आ सकती है। शरीर में कंपन पैदा हो सकता है। शरीर ढीला पड़ जाता है और मौत भी आ सकती है। अजीर्ण से इतने सारे नुकसान होते हैं, यह जानकर क्या आप अजीर्ण में भोजन का त्याग करेंगे?

पहली बात तो यह है कि अजीर्ण होने देना ही नहीं चाहिए। आप यदि अपनी प्रकृति के अनुकूल भोजन करते हैं, क्षुधा लगने पर भोजन करते हैं, अधिक भोजन नहीं करते हैं, तो अजीर्ण होने की ९९ प्रतिशत संभावना ही नहीं रहती है। हाँ, कोई 'अशाता वेदनीय' कर्म का उदय हो जाय और रोग पैदा हो जाय, यह बात दूसरी है। अजीर्ण होने पर, आपका इतना मनोबल तो होना ही चाहिए कि आप उपवास कर सकें। भोजन की इतनी ज्यादा गुलामी किस

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

काम की कि आप रोगाक्रान्त दशा में भी भोजन नहीं छोड़ सकें? ऐसी गुलामी नहीं चाहिए, ऐसी कमजोरी को मिटा देना चाहिए। 'मुझसे तो उपवास नहीं होता है....मुझे तो चाय-दूध के बिना नहीं चल सकता है। दवाई ले लेंगे, अजीर्ण मिट जायेगा....।' ऐसी विचारधारा पैदा होती है निर्बल मन में से।

अजीर्ण में कई डॉक्टर भी भोजन का त्याग करने को नहीं कहते हैं। डॉक्टर भी तो दर्दी की इच्छा को मान देते हैं न? वे तो कहेंगे : 'जो खाने की इच्छा हो वह खाना.... बस, मेरी दवाई चालू रखना।' डॉक्टरी अब 'सेवा' नहीं रही है, 'बिजनेस'-व्यापार हो गया है। दर्दी की बीमारी जितनी लंबी चले, डॉक्टर को अच्छी 'इन्कम' होती रहती है न? हाँ, कोई आदर्शवादी डॉक्टर होगा.... तो अवश्य कहेगा कि 'आपको अजीर्ण हो गया है, आप भोजन का संपूर्ण त्याग कर दें।'

शरीर की तंदुरुस्ती का भी ख्याल करो :

कई बार घरों में ऐसा देखने को मिलता है कि घर का व्यक्ति सच्ची राय भी देता है, पर घरवाले नहीं मानते हैं। परन्तु यदि वही बात 'फेमिली डॉक्टर' कह दे तो घर के लोग मान लेते हैं। अन्यथा सामान्य दर्द होने पर 'डॉक्टर' के पास जाने की आवश्यकता ही नहीं रहती है।

अजीर्ण के जो लक्षण बताये, वे लक्षण दिखने पर, तुरन्त ही भोजन का त्याग कर दो। एक उपवास.... दो उपवास हो जाने दो.... ठीक हो जाओगे।

धर्मपुरुषार्थ करने में शरीर ही मुख्य साधन है। इसलिए शरीर को स्वस्थ एवं नीरोगी रखना चाहिए।

'बलमूलं ही जीवनम्' जीवन का मूल है बल। शरीर का बल। बल यानी सामर्थ्य। शरीर-सामर्थ्य बनाये रखना चाहिए।

शरीर-शक्ति क्षीण होती है अति परिश्रम से और पोषक आहार के अभाव से। 'अशाता-वेदनीय' कर्म का उदय तो मानना ही पड़ेगा, परन्तु वह आन्तरिक कारण है। यह कर्म प्रायः निमित्त मिलने पर उदय में जल्दी आता है।

जब शरीर-शक्ति क्षीण हो तब अति परिश्रम का त्याग करना चाहिए और अल्प स्निग्ध भोजन करना चाहिए। कभी, परिश्रम से बुखार भी आ जाता है, उस समय, डॉक्टर और दवाइयों के चक्कर में नहीं फँसना....। परिश्रम त्याग कर, विश्राम लें और अल्प स्निग्ध भोजन करें। स्निग्ध भोजन यानी घी में बना हुआ हलवा वगैरह।

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

कभी शरीर में रोग पैदा हो जाय तो शीघ्र ही उसका उपचार कर लेना चाहिए। व्याधि की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। उपेक्षित व्याधि जहर के बराबर है। इसलिए, जैसे ही रोग.... व्याधि का ख्याल आये, त्यों ही उपचार शुरू कर देना चाहिए। खान-पान में तुरन्त ही परिवर्तन कर देना चाहिए और योग्य औषधोपचार कर लेना चाहिए।

२०वें सामान्य धर्म का विवेचन यहाँ समाप्त होता है।

आज बस, इतना ही।

❖ ❖ ❖

For Private And Personal Use Only

Shri Mahavir Jain Aradhana Kendra www.kobatirth.org Acharya Shri Kailassagarsuri Gyanmandir

आचार्य श्री कैलाससागरसूरि ज्ञानमंदिर
कोबा तीर्थ
Acharya Shree Kailasasagarsuri Gyanmandir
Shree Mahavir Jain Aradhana Kendra
Koba Tirth, Gandhinagar-382 007 (Guj.) INDIA
Website : www.kobatirth.org
E-mail : gyanmandir@kobatirth.org

ISBN : 978 - 81-89177-20-1
ISBN SET : 978-81-89177-17-1

For Private And Personal Use Only